# समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श

( हिंदी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय की पीएच .डी . उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध )

**********

**शोध प्रबंध**

2015


शोध- छात्र

**श्री. मोहम्मदरफी एच हंचिनाल**

( एम.ए, एम.फिल )

**********

शोध- निर्देशक

**डॉ.वृषाली सुभाष मान्द्रेकर**

प्रोफेसर, हिंदी विभाग

गोवा विश्वविद्यालय, गोवा


**********

**गोवा विश्वविद्यालय, तालेगाँव, गोवा - 403206**

# DECLARATION

I THE UNDERSIGNED HIMSELF DECLARE THAT THE THESIS ENTITLED 'समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श' "SAMKALEEN HINDI KAHANI : DALIT VIMARSH" HAS BEEN WRITTEN EXCLUSIVELY BY ME AND THAT NO PART OF THIS THESIS HAS BEEN SUBMITTED EARLIER FOR THE AWARD OF THIS UNIVERSITY OR ANY OTHER UNIVERSITY.

DATE :

PLACE : TALEIGAO PLATEAU, GOA

MR.MOHAMMADRAFI H HANCHINAL
RESEARCH SCHOLAR
DEPT. OF HINDI
GOA UNIVERSITY - GOA

# CERTIFICATE

AS PER THE GOA UNIVERSITY ORDINANCE, I CERTIFY THAT THIS THESIS ENTITLED '**समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श**' 'SAMKALEEN HINDI KAHANI : DALIT VIMARSH' IS A RECORD OF RESEARCH WORK DONE BY CANDIDATE HIMSELF DURING THE PERIOD OF STUDY UNDER MY GUIDANCE AND THAT IT HAS NOT PREVIOUSLY FORMED THE BASIS FOR THE AWARD OF ANY DEGREE OR DIPLOMA IN THE GOA UNIVERSITY OR ELSEWHERE.

DATE :

PLACE : TALEIGAO PLATEAU, GOA

RESEARCH GUIDE

DR. VRUSHALI SUBHASH MANDREKAR

PROFESSOR

DEPT. OF HINDI

GOA UNIVERSITY - 403206

# प्राक्कथन

दलित साहित्य वह लेखन है, जो वर्ण व्यवस्था के ख़िलाफ़ में तथा उसके विपरीत मूल्यों के प्रति संघर्ष रत मनुष्य से प्रतिबध्द है। वर्ण व्यवस्था अर्थात मत्सर, शत्रुता, द्वेष, तिरस्कार की भावना तथा इसके विपरीत मूल्यों अर्थात समता, बंधुत्व, प्रेम, भाईचारे शांति और समृध्दता का प्रतीक है। इस समाज में मनुष्य प्रारंभ से ही अपने परिवेश को लेकर संवेदनशील रहा है। अपनी अनुभूति को प्रस्तुत करने के लिए उसने उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया है। ज्ञान के हस्तांतरण की प्रक्रिया ने विचार-विमर्श के क्षेत्र में आन्दोलनकारी भूमिका का निर्वाह किया है तथा इस समाज की हर जातियों को इस बात का आभास दिलाया कि वे इस परिवर्तन में समानता के भागीदार है। वास्तव में इस समाज के अनेक जातियों को परिवर्तन की प्रक्रिया का भागीदार बनाया है या यों ही उन्हें अपने साथ मान लिया है। यहाँ हमारा आशय उस वक्त से है जो आपके सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक बदलाव की प्रक्रिया में एक मुख्यधारा के रूप में 'दलित' चुनौती बन कर खड़ा है, जिस पर विचार-विमर्श करना बौध्दिक जगत के लिए अनिवार्य हो गया है।

ज्योतिबा फुले, स्वामी अछुतानंद तथा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था का विरोध कर दलित पुनर्जागरण और व्यवस्था बदलाव के लिए क्रांतिकारी साहित्य का सृजन किया, और जिसके कारण हज़ारों वर्ष के मूक मनुष्य को 'दलित साहित्य' के माध्यम से वाणी मिली है। सामाजिक परिवर्तन न्याय-यथार्थ, ममता, लौकिक एवं वैज्ञानिक प्रतिमानों को आधार मानकर तथा सवर्णवादी व्यवस्था के ख़िलाफ़ आक्रोश, सामंती आतंक, यथार्थ एवं अत्याचार का विरोध करते हुए भारतीय साहित्य में दलित साहित्य का एक मुख्य आयाम बनकर खड़ा हुआ है। भारतीय साहित्य के विभिन्न विधाओं में दलित चेतना प्रवाहित हुई है। दलित साहित्य का मुख्य लक्ष्य अपने समुदाय को पराधीनता की परम्पराओं से मुक्ति दिलाना है।

हिंदी दलित साहित्य के शुरुआत में ज्यादातर कविताएँ ही लिखी गयी है। मगर सातवें दशक में अनेक दलित लेखकों ने कहानी विधा को अपनाया। इन लेखकों में से मोहनदास नैमिशराय जी की कहानी 'सबसे बड़ा सुख' को प्रथम कहानी मानते हैं। कुछ ही समय में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की 'अँधेरी बस्ती' कहानी पाठकों को आसक्त करती हुई नज़र आती है। हिंदी दलित कहानी की यात्रा आठवें दशक में बहुत तेजी से उभरी है। और अनेक नए दलित रचनाकार उभरकर अपनी उपस्थिति को दर्ज करते हैं तथा अपनी दलित कहानियों के माध्यम से दलित साहित्य को एक मज़बूत आधार देने की कोशिश करते हुए नज़र आते हैं। दलित कहानीकारों का यह प्रयत्न जहाँ सृजनात्मक आवेग से ख़ुद को तलाशने की प्रक्रिया के साथ सामाजिक परिवेश की गंभीर चुनौतियों से टकराता है। इन्ही कथाकारों की कहानी का परिचय उन स्थितियों तथा चरित्रों से कराता है।

हिंदी दलित साहित्य में कहानी के विविध उतार चढ़ावों, और कथित आन्दोलनों से अनेक दलित कहानी परिवर्तन हुए सामाजिक परिस्थिति में यथार्थ चित्रण की एक विशिष्ट धारा के रूप में सामने उभरकर आती हैं। जिसकी तरफ़ हिंदी साहित्य के समीक्षकों का ध्यान बहुत देर से गया है। हिंदी कथा साहित्य के कहानी में नई-कहानी, अ-कहानी, समान्तर-कहानी तथा फिर जनवादी-कहानी आदि पड़ावों से गुज़रते हुए

वर्तमान हिंदी कहानी का बहुत ही निकटता से संबंध प्रस्तुत हुआ है।

पाठक वर्ग ने कहानी की कल्पना लोक तथा रोमानी मायावी संसार से मुक्त होकर एक नयापन का अहसास महसूस कर रहा था। इसी के साथ दलित चेतना की कहानियों ने अपनी आंदोलनकारी विचारों से उपस्थिति दर्ज की। आठवें दशक में यह उपस्थिति और तेजी से उभरी इसमें मोहनदास नैमिशराय तथा ओमप्रकाश वाल्मीकि की क्रांतिकारी कहानियाँ निहित हैं। नवें दशक में भारतीय साहित्य में दलित कहानियों ने ख़ास पहचान निर्मित की हैं। हिंदी साहित्य के लिए दलित साहित्य की चर्चा नई नहीं थी। इस दशक में मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, श्यौराज सिंह बेचैन तथा डॉ. सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ प्रमुख हैं। हिंदी दलित कहानी की यह आन्दोलनकारी, साथ ही साथ यह एक लम्बी संघर्ष यात्रा है जो सातवें दशक से लेकर नवें दशक तक काँटों पर सफ़र करते हुए लहू-लुहान होते हुए भी अपने विस्फोटक तेवर की पहचान बनाने में कामयाब रही है। हिंदी दलित कहानी ने समस्याओं का सामना किया है।

दलित कहानीकारों ने अपने सर्जनात्मक आक्रोशित आवाज़ को यथार्थ की भूमि पर खड़ा कर परिवर्तन के नए फैलाव स्थापित किया हैं। दरअसल सामाजिक विषमताओं, संघर्षपूर्ण परिस्थितियों, भेदभाव और अंतर्विरोधों को चित्रित करने की प्रवृत्ति उसने किसी दबाव अथवा प्रतिक्रिया के तहत नहीं की है। किन्तु यह उसका अपना स्वाभाविक एवं वस्तुनिष्ठ स्वरूप है।

आवेशपूर्ण बदलाव की पक्षधरता उसका जीवन मूल्य है। इस क्रांतिकारी यात्रा में जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान, बुध्द्शरण हंस, डॉ. दयानंद बटोही ने यथार्थपरक संवेदनशीलता एवं सामाजिक विचार-विमर्श की कहानियाँ लिखी हैं, साथ में डॉ. सुशीला टाकभौरे, रजतरानी मोजु, कुसुम मेघवाल दलित महिला की पीड़ा के बारे में लिखने में सफल हुई हैं। उन्होंने कुछ महत्वपूर्ण कहानियाँ लिखी है जिनमें प्रगतिशील तथा लोकतांत्रिक मूल्यों का समर्थन करनेवाले वर्तमान समय की कहानी है।हिंदी दलित

कहानी धीरे-धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर विकास की ओर अग्रसर है। इस शोध प्रबंध में " समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श " पर विशेष रूप से चर्चा की गयी है।

**विषय चयन –**

दलित साहित्य से मेरा लगाव महाविद्यालय के दिनों से ही था। उन दिनों मैंने ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की आत्मकथा 'जूठन' और मोहनदास नैमिशराय जी की कहानियों को पढ़ा था, मुझे दलित साहित्य और भी पढ़ना था इसलिए मैंने एम.फिल में दलित साहित्य पर शोधकार्य किया मगर दलित साहित्य को पूर्ण रूप से समझ नहीं पाया, मैंने सोचा पीएच.डी में भी दलित साहित्य पर शोध करना आवश्यक है तभी मैं दलित साहित्य को ठीक तरह से समझ सकता हूँ, यह सोचकर मैं गोवा विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रो. वृषाली सुभाष मान्द्रेकर जी से मिला और दलित साहित्य पर शोध करने का विचार-विमर्श किया। मेरी इच्छा को प्रमुखता देते हुए मुझे प्रो.वृषाली सुभाष मान्द्रेकर जी ने समकालीन हिंदी दलित कहानियों पर शोधकार्य करने की ओर अंगुली निर्देश किया।

शोधनिर्देशक से काफी चर्चा करके 'समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श' (बुध्द्शरण हंस, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ. सुशीला टाकभौरे तथा जयप्रकाश कर्दम इन पांचों की कहानियों में व्यक्त दलित विमर्श ) विषय को चुनकर शोधकार्य शुरू करने का फैसला किया।

## शोधप्रबंध की रुपरेखा :

प्रस्तुत शोध-प्रबंध "**समकालीन हिंदी कहानी : दलित विमर्श**" का शोध कार्य सरलता हेतु पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है, हर एक अध्याय का सारांश निम्नलिखित है—

१.प्रथम अध्याय

दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप

प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत दलित शब्द की व्याख्या, दलित साहित्य की परिभाषाएँ, दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करते हुए दलित साहित्य का स्वरूप की चर्चा की गयी है।

२. द्वितीय अध्याय

समकालीनता : परिभाषा एवं स्वरूप

प्रस्तुत अध्याय में समकालीनता का अर्थ एवं परिभाषा, समकालीन कहानी का क्षेत्र तथा समकालीन कहानी : युगीन सन्दर्भ को संक्षिप्त में परिचय देने की कोशिश की गयी है।

३.तृतीय अध्याय

समकालीन हिंदी दलित कहानीकार

तृतीय अध्याय में हिंदी दलित प्रमुख कहानीकारों का जीवन परिचय,प्रमुख रचनाएँ,पुरस्कार तथा उनकी कहानियों का संक्षिप्त परिचय व्यक्त किया गया है। समकालीन हिंदी दलित कहानीकारों में से प्रमुख रूप से बुध्द्शरण हंस, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ.सुशीला टाकभौरे तथा डॉ.जयप्रकाश कर्दम, इन पाँचों को चुन लिया है। इन कथाकारों ने काफ़ी प्रभावी ढंग से दलित विचारधारा को केंद्र

में रखते हुए साहित्य की रचना की हैं। इनके साहित्य में दलित अस्मिता की पहचान होती है। इन पाँचों कहानीकारों की कहानियों के संक्षिप्त परिचय के साथ इस अध्याय में व्यक्त किया गया है।

४.चतुर्थ अध्याय

हिंदी दलित कहानियों में अभिव्यक्त दलित विमर्श

चतुर्थ अध्याय के अंतर्गत जातिभेद के प्रति विद्रोह की भावना, प्रमुख हिंदी दलित कहानियों में अभिव्यक्त जातिभेद की भावना, शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता, शिक्षा के क्षेत्र में शोषण, आक्रोश का चित्रण, धार्मिक आडम्बरों में विश्वास, आत्मविश्वास की कमी, नई पीढ़ी में उभरते विद्रोह का चित्रण, आर्थिक विपन्नता का चित्रण, स्वाभिमानी स्त्री, सुशिक्षित नारी और शोषित नारी इन सारे मुद्दों पर चर्चा करने की कोशिश की गयी है।

५.पंचम अध्याय

हिंदी दलित कहानियों की भाषा-शैली

इस अध्याय में सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग, गालियों का प्रयोग, मुहावरे और लोकोक्तियाँ, इन विषयों को प्रस्तुत करते हुए सादृश्य विधान की चर्चा की गयी है।

## उपसंहार

प्रमुख हिंदी दलित कहानियों पर अनेक दृष्टिकोण से कार्य हुआ है, लेकिन मेरा प्रयत्न उनकी कहानियों से दलितोध्दार के भावों को उजागर करने का रहा है। दलित कहानीकारों की आन्दोलनकारी सामाजिक भावनाओं का आविर्भाव उनकी कहानियों में दृष्टिगत होता है। मेरा यह प्रयास है कि बुध्द्शरण हंस, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ.सुशीला टाकभौरे तथा जयप्रकाश कर्दम इन पाँचों की

सहानुभूति और संघर्षरत ज़िंदगी से भारतीय समाज को प्रेरणा प्राप्त हो।

## कृतज्ञता ज्ञापन :

यह शोध-प्रबंध परम आदरणीय प्रो.वृषाली सुभाष मान्द्रेकर जी की सत्प्रेरणा पथ-प्रदर्शन तथा स्नेहाशीष का ही फल है। रुपरेखा से लेकर शोध-प्रबंध पूर्ण होने तक समय-समय पर आपने अपना अमूल्य समय देकर मेरी उलझनों को अपार स्नेह के साथ सुलझाने में साथ दिया है। आपका गहन अध्ययन और वात्सल्यपूर्ण व्यवहार ही मेरा पाथेय रहा है। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। अमरकंटक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के कुलगुरु आदरणीय गुरूजी प्रो. टी.वी.कट्टीमनी साहब जी का हृदय से आभारी हूँ। इस शोध-कार्य रचना के लिए अनेक संदर्भ ग्रन्थ, आलोचना शोध-प्रबंध, पत्र-पत्रिका आदि की सहायता ली गयी है। उन सभी विद्वानों, रचनकारों का भी आभारी हूँ जिनकी रचनाओं, विचारों, शोध-तथ्यों का बहुमूल्य लाभ मुझे प्राप्त हुआ है।

गोवा विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष प्रो.आर.एन.मिश्र, प्रो इशरत बी खान तथा प्रो. बी.के.शर्मा का भी मैं शुक्रगुज़ार हूँ जिन्होंने मुझे सदा शोध-प्रबंध लिखने में प्रेरणा दी है। तथा गोवा विश्वविद्यालय के ग्रंथालय को आभार व्यक्त करता हूँ, जिसने मुझे समय-समय पर किताबों की सहायता की। हिंदी विभाग के कर्मचारी संजना जी का तथा अन्तोन का भी विशेष आभारी हूँ। तथा शोध कार्य को सफल बनाने में डॉ.सोनिया सिरसाट जी का भी योगदान रहा है, उनका भी आभारी हूँ।

इस शोध-प्रबंध को पूर्ण करने में मेरे दोस्त डॉ.सुनील सलिमनी और आसिफ मुल्ला इन दोनों को मैं याद करना चाहूँगा जिन्होंने मेरे शोध-कार्य को सफल बनाने में हमेशा मेरी सहायता की है। आत्मीय मित्रवर्ग से प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप में सहायता मिली है, उन सबके प्रति दिल से शुक्रगुज़ार हूँ।

अंत में मैं अपने माता-पिता और परिवारजनों का तहेदिल से शुक्रगुज़ार हूँ। मैं यह शोध-प्रबंध लिखने में सफल रहा तो इसका श्रेय मेरे माता-पिता सकीनाबी और

हुसेनसाब जी  को जाता है।

दलित साहित्य पढ़नेवाले भावकों का यदि इस शोधग्रंथ से थोड़ा-सा भी हित साध्य हुआ तो मैं अपने इस परिश्रम को सार्थक समझूंगा। शोधकार्य में यदि कुछ न्यूनतम क्षति रह गयी है तो वह मेरी अज्ञानता  समझे।

दिनांक

निवेदक

श्री.मोहम्मदरफी एच हंचिनाल

# अनुक्रमणिका


भूमिका I-VII

**१.प्रथम अध्याय** १-४०

## दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप

प्रस्तावना २-३

१.१.दलित शब्द की व्याख्या ४-७

१.२. दलित साहित्य की परिभाषाएँ ७-१०

१.३. दलित साहित्य की परंपरा १०-१९

१.३.१. सिद्ध एवं नाथ साहित्य १९-२०

१.३.२. मराठी साहित्य २०-२१

१.३.३. संत साहित्य २१-२२

१.४. दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि २२-२३

१.४.१. बौद्ध विचार प्रणाली २३-२४

१.४.२. महात्मा ज्योतिबा फुले २४-२५

१.४.३ . बाबा साहेब डॉ. भीमराव अबेंडकर २५-२७

१.४.४ . महात्मा गांधीजी के दलित विषयक चिंतन २७-३०

१.५. दलित साहित्य का स्वरुप ३०-३५

**२.द्वितीय अध्याय** ४१-६०

## समकालीनता : परिभाषा एवं स्वरूप

२.१ प्रस्तावना ४२

२.२ समकालीनता का अर्थ एवं परिभाषा ४३ -४८

२.३ समकालीन कहानी का क्षेत्र ४८ -५१

२.४ समकालीन कहानी : युगीन संदर्भ ५१-५७

३. **तृतीय अध्याय** ६१-१४६

## समकालीन प्रमुख हिंदी दलित कहानीकार

प्रस्तावना : ६६-६७

**३.१ .बुध्दशरण हंस** ६७-७७

३.१.१. तीन महाप्राणी

३.१.१.१. ब्रह्मज्ञान

३.१.१.२. रे अधम मुझे मत बेच

३.१.१.३. अखंड किर्तन

३.१.१.४. भोज के कुत्ते

३.१.१.५. धम्म जीवन

३.१.१.६. बुद्धम शरण गच्छामि

३.१.१.७. देव दर्शन

३.१.१.८. तीन महाप्राणी

३.१.१.९. माता का भार

**३.२.मोहनदास नैमिशराय** ७७-८३

३.२.१. आवाजें

३.२.१.१. घायल शहर की बस्ती

३.२.१.२. अपना गाँव

३.२.१.३. हारे हुए लोग

३.२.१.४. नया पडोसी

३.२.१.५. अधिकार चेतना

३.२.१.६. रीतो

३.२.१.७. उसके जख्म

३.२.१.८. मैं शहर और वे

३.२.१.९. भीड़ में वह

३.२.१.१०. महाशूद्र

**३ .३.ओमप्रकाश वाल्मीकि** ८३-१०१

३.३.१. घुसपैटिये

३.३.१.१. घुसपैटिये

३.३.१.२. कुडा घर

३.३.१.३. यह अतं नहीं

३.३.१.४. मुबंई कांड़

३.३.१.५. मैं ब्राम्हण नहीं हूँ

३.३.१.६. दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन

३.३.१.७. रिहाई

३.३.१.८. जंगल की रानी

३.३.१.९. ब्रह्मास्त्र

**३.१.२.** सलाम

३.३.२.१. सलाम

३.३.२.२. सपना

३.३.२.३. बैल की खाल

३.३.२.४. भय

३.३.२.५. कहाँ जाए सतीश

३.३.२.६. ग्रहण

३.३.२.७. गोहत्या

३.३.२.८. जिनावर

३.३.२.९. कुचक्र

३.३.२.१०. खानाबदोश

३.३.२.११. पच्चीस चौका डेढ़ सौ

३.३.२.१२. अधंड

**३.४. डॉ.सुशीला टाकभौरे** १०१-१३५

३.४.१. संधर्ष

३.४.१.१. संघर्ष

३.४.१.२. जन्मदिन

३.४.१.३. बदला

३.४.१.४. छौआ माँ

३.४.१.५. चुभते दंश

३.४.१.६. संभव असंभव

३.४.१.७. दमदार

३.४.२. टूटता वहम

३.४.२.१. झरोखें

३.४.२.२. मेरा समाज

३.४.२.३. व्रत और व्रती

३.४.२.४. मंदिर का लाभ

३.४.२.५. मुझे जवाब देना है

३.४.२.६. सिलिमा

३.४.२.७. टूटता वहम

३.४.२.८. नयी राह की खोज

३.४.२.९. धूप से भी बड़ा

३.४.३. अनुभूति के घेरे

३.४.३.१. भूख

३.४.३.२. त्रिशूल

३.४.३.३. सारंग तेरी याद में

३.४.३.४. दिल की लगी

३.४.३.५. हमारी सेल्मा

३.४.३.६. प्रतीक्षा

३.४.३.७. कैसे कहूँ

३.४.३.८. घर भी तो जाना है

३.४.३.९. बंधी हुई राखी

३.४.३.१०. गलती किसकी है

३.४.३.११. सही निर्णय

**३.५.डॉ.जयप्रकाश कर्दम** १३५-१४३

३.५.१. सांग

३.५.२. मोहरे

३.५.३. नो बार

३.५.४. मुवमेंट

**४.चतुर्थ अध्याय** १४७-१९६

**हिंदी दलित कहानियों में अभिव्यक्त दलित विमर्श**

प्रस्तावना : १४८-१४९

४.१ जातिभेद के प्रति विद्रोह की भावना १४९-१५४

४.२ शिक्षा के क्षेत्र में शोषण १५४-१५६

४.३ शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता १५६-१५७

४.४ आत्मविश्वास की कमी १५७-१५८

४.५ आक्रोश का चित्रण १५८-१६२

४.६ धार्मिक आडम्बरों में विश्वास १६२-१६३

४.७ छुआ-छूत की समस्या १६३-१७०

४.८ नई पीढ़ी में उभरते विद्रोह का चित्रण १७०-१७५

४.९ स्त्री शोषण की समस्यां १७५-१७९

४.१० आर्थिक विपन्नता का चित्रण १७९-१८३

४.१०.१ स्वाभिमानी स्त्री १८३-१८४

४.१०.२ सुशिक्षित नारी १८४-१८५

४.१०.३ शोषित नारी १८६ -१८९

**५.पंचम अध्याय** १९७-२१५

**हिंदी दलित कहानियों की भाषा-शैली**

प्रस्तावना : १९८

५.१ सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग १९९-२०२

५.२ मुहावरे और लोकोक्तियाँ २०२-२०५

५.३ गालियों का प्रयोग २०५-२०७

५.४ सादृश्य विधान २०७-२०९

५.५ हिंदी दलित कहानियों की भाषा-शैली २०९-२१५

उपसंहार २१७-२२२५

आधार ग्रथ

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची २२६-२३४

प्रमुख पत्र-पत्रिकाएँ

प्रथम अध्याय

# दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप

प्रस्तावना

१.१. दलित शब्द की व्याख्या

१.२. दलित साहित्य की परिभाषाएँ

१.३. दलित साहित्य की परंपरा

१.३.१. सिद्ध एवं नाथ साहित्य

१.३.२. मराठी साहित्य

१.३.३. संत साहित्य

१.४. दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि

१.४.१. बौद्ध विचार प्रणाली

१.४.२. महात्मा ज्योतिबा फुले

१.४.३. बाबा साहेब डॉ. भीमराव अबेंडकर

१.४.४. महात्मा गांधीजी के दलित विषयक चिंतन

१.५. दलित साहित्य का स्वरुप

## प्रस्तावना

मनुष्य प्रारंभ से अपने परिवेश को लेकर संवेदनशील रहा है। अपनी अनुभूति को व्यक्त करने के लिए उपलब्द साधनों का भरपूर प्रयोग किया है। ज्ञान के हस्तांतरण की प्रक्रिया ने विचार-विमर्श के क्षेत्र में क्रांतिकारी भूमिका का निर्वाह किया है और समाज के विभिन्न वर्गों को इस बात का आभास दिलाया कि वे भी इस परिवर्तन में बराबरी के भागीदार हैं।

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती आ रही है। समाज में जब सामाजिक व्यवस्था अव्यवस्थित होना शुरु होती है तब उसको व्यवस्थित बनाये रखना साहित्यकारों का मूल लक्ष्य होता है। साहित्यकारों का समाज के साथ सरोकार होने के कारण वह अपने साहित्य में सामाजिक कुरीतियों को याने सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी पहलुओं को कृतिबद्ध करना शुरू करता है।

दलित साहित्य लिखनेवालों में दो पक्ष हम देख सकते हैं । एक है दलित साहित्यकार और दूसरा ग़ैर दलित साहित्यकार । दलित साहित्यकार, ग़ैर दलित साहित्यकारों को दलित रचनाकार नहीं मान रहे हैं। इसका मूल कारण यह है कि दलित साहित्यकार का विचार है ग़ैर दलित साहित्यकार दलित लोगों के जीवन को दूर से महसूस करते हैं। लेकिन दलित साहित्यकार अपने में भोगे हुए निजी घटनाओं को शब्द बद्ध करते हैं । इस प्रकार उनके लेखन में सच्चाई ज्यादा होने के कारण ग़ैर दलित साहित्यकारों को कम मान्यता दे रहे हैं।

दूसरे पक्ष देखे तो सवर्ण लोग दलित साहित्यकारों से लिखित साहित्य को न मानते हुए उस साहित्य को ग़लीज साहित्य कहकर श्रेष्ठ साहित्य के पक्ष से दूर रखने का ढोंग रचा रहे हैं। दुःख दर्द और उन पर हो रहे अत्याचार, शोषण, संघर्ष आदि के वास्तविक और निहित सत्य को इसमें सावधानी से देखने का मन नहीं है ऐसे लगता है।

दलित साहित्य मानव जीवन से सीधा उत्पन्न होकर मानव जीवन को प्रभावित करता है। साहित्य पढ़ने से हम ज़िंदगी के साथ ताज़ा और घनिष्ठ संबंध स्थापित करते हैं । साहित्य में उन सारी बातों का जीवंत विवरण होता है जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है।

दलित साहित्यकारों ने अपने जीवन काल में जो अनुभव प्राप्त किये हैं, उसी को साहित्य के विभिन्न प्रकारों में से अपने मनपसंद प्रकार को अपनाते हुए दलितों के विरुद्ध किये जा रहे अत्याचार, अन्याय समाज में प्रचलित तुच्छता की भावना, असमानता आदि अनेक विषयों पर साहित्य रचा जा रहा है।

हिन्दी दलित साहित्य का जन्म हो के कुछ ही समय होने के कारण उसमें साहित्यिक विधा कम है। फिर भी कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, आत्मकथा आदि क्षेत्रों में प्रौढ़ता का संकेत हम देख सखते हैं।

## १.१. दलित शब्द की व्याख्या:

'दलित' शब्द के अर्थ के संदर्भ में दो मत प्रचलित हैं। प्रथम अर्थ संकुचित है, दूसरा व्यापक अर्थ में प्रयुक्त है। संकुचित अर्थ धार्मिक ग्रंथ, सामाजिक व्यवस्था आदि से उत्पन्न है, जिसके अतंर्गत चतुर्थ वर्ण (शूद्र) में आनेवाली जातियों को आधार बताया जाता है। जबकि व्यापक अर्थ में ये उन सभी के लिए प्रयुक्त शब्द है, जिन्हें किसी न किसी प्रकार से दबाया गया हो, फिर चाहे ये किसी भी जाति, वर्ण या संप्रदाय से जुड़े हो।

'दलित' शब्द का अर्थ है- जिसका दलन और दमन हुआ है, जिसे दबाया गया है, उत्पीडित शोषीत सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित रौंदा हुआ मसला हुआ कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, साहित्य वंचित आदि।

बृहत हिन्दी कोश में 'दलित' शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है -"रौंदा, कुचला हुआ पादाक्रांत वर्ग, हिन्दुओं में वे शूद जिन्हें अन्य जातियों के समान अधिकार प्राप्त नहीं हैं।"१

दलित शब्द को ईसाई धर्म ग्रंथ बायबल में दुःखी, दुर्बल, पीडित, असहाय, दीन-दरिद्र, पापी आदि शब्दों के आधार पर अभिव्यक्ति दी गई है।

डॉ. श्यौराज सिंह 'बैचेन' दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं - "दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया गया है।"२

इसी प्रकार कँवल भारती का मानना है कि "दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया और जिस पर अछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही दलित है और उसके अतंर्गत वही जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।"३

हिन्दी साहित्य कोश में दलित वर्ग की व्याख्या इस प्रकार दी गई है - "यह समाज

का निम्नतम वर्ग होता है, जिसको विशिष्ट संज्ञा आर्थिक व्यवस्थाओं के अनुरुप ही प्राप्त होती है। उदाहरणार्थ- दास प्रथा में दास, सामंतवादी व्यवस्था में किसान, पूंजीवादी व्यवस्था में मज़दूर समाज का दलित वर्ग कहलाता है।"४

मोहनदास नैमिशराय 'दलित' शब्द को और अधिक विस्तार देते हुए कहते हैं कि 'दलित' शब्द मार्क्स प्रणित सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है। किन्तु इन दोनों में अतंर भी है। दलित की व्याप्ति अधिक है, तो सर्वहारा की सीमित दलित के अतंर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक 'दलित' व्यक्ति सर्वहारा के अतंर्गत आ सकता है, लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को 'दलित' कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते अर्थात सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।"५

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के विचारानुसार दलित शब्द व्यापक अर्थबोध की अभिव्यंजना देता है। "भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है। दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जन जातियाँ और आदिवासी घोषित जातियाँ सभी इस दायरे में आते हैं। सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं बहुत कम श्रम मूल्य पर चौबीसों घंटे काम करनेवाले श्रमिक बँधुआ, मज़दूर भी दलित की श्रेणी में आते हैं।"६

दलित, शब्द का अर्थ देखने के बाद यह देखना रोचक हो सकता है कि भारत में इसका प्रयोग कब से होने लगा। सन् १९३३ में अग्रेंजी प्रशासन ने जातीय निर्णय लिया जिसमें 'डिप्रेस्सड क्लास' (पद दलित वर्ग) शब्द का प्रयोग किया गया। असल में यह शब्द 'दलित' वर्ग के लिए ही प्रयुक्त किया गया था।

"उन्नीसवीं शताब्दी से ही भारत में 'दलित' शब्द का प्रयोग इस विशिष्ट अर्थ में आरंभ हुआ। परंतु 'दलितवन' भारतीय समाज में अत्यंत प्राचीन है। प्राचीन साहित्य में शूद्र, अतिशूद्र चांड़ाल अत्यंज व अस्पृश्य आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसमें स्पष्ट विदित होता है कि चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में निचली जाति के अस्पृश्य हरिजन को ही सच्चे

अर्थ में दलित कहा जा सकता है ।"७

संक्षेप में एक दलित शब्द से हिन्दू जाति व्यवस्था की परिधी से भी बाहर धकेले गए उस वर्णहीन वंश का बोध होता है जिसे चमार, मेहतर मुंशी जैसी उपजातियों के रुप में संबोधित किया जा रहा है। 'दलित' हिन्दू जाति व्यवस्था का ही एक अगं है। 'दलित' शब्द विशिष्ठ वर्ग का वाचक है । इससे उपेक्षित जातियों का परिचय होता है । दलित शब्द जाति भेद दिखाता है तथा अन्याय अत्याचार की स्थिति का दर्शक शब्द है। 'दलित' शब्द जाति भेद निर्मूलन व्यवस्था की ओर न ले जाकर हिन्दू समाज व्यवस्था जाति व्यवस्था की ओर ले जाता है। 'दलित' शब्द कल और आज के दलित अस्पृश्य को दिखाता है।

व्यापक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि जिन्हें दलित माना गया है उनकी विशोष जाति नहीं है। यह शब्द मनुष्य की पतितावस्था, दुरावस्था तथा लाचारी और शोषण का द्योतक है। एक मान्यता यह भी हो सकती है कि सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से जिसका शोषण होता है, स्वतंत्रता, समता और प्रगति से अपरिचित रहकर, अपने मालिक की ग़ुलामी करता है और जिसके जीवन में ज्ञान या प्रकाश के अभाव में अज्ञान या अधेंरा ही अधेंरा छाया हुआ रहता है, ऐसा व्यक्ति दलित है। चाहे उसकी जाति ब्राह्मण ही क्यों न हो । इस व्यापक अर्थ में केवल ग़रीब और अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ ही दलित नहीं है । बल्कि इनकी भाँति दयनीय और कष्टमय जीवन बितानेवाले सभी मज़दूर, किसान नौकर, नारियाँ, भूमिहीन, बेघर जैसे सभी लोग जो आर्थिक विपन्नावस्था से मनुष्य की तरह सम्मान से जी नहीं सकते वे सभी 'दलित' हैं। परंतु दलित साहित्य के समर्थक इस व्यापक अर्थ को अस्वीकार करते हैं और जाति तथा वर्ण संदर्भित अर्थ को ही गहण करते है जिसे पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है।"८

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 'दलित' शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयोग होता है " जो समाज व्यवस्था के तहत सबसे निचले पायदान पर है, वर्ण-व्यवस्था ने जिसे अछूत या अत्यंज की श्रेणी में रखा है तथा जिसका दलन और शोषण हुआ है । इस समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियाँ कहा गया है जो जन्मता अछूत है।"९ परंतु जैसा कि मराठी कवि 'नारायण सुर्वे' का कहना है, "दलित शब्द की मिली-जुली परिभाषाएँ हैं ।

इसका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियाँ ही नहीं समाज में जो भी पीडित हैं, वे दलित हैं।"१०

## १.२. दलित साहित्य की परिभाषाएँ:

दलित साहित्य का रुप बड़ा ही सुंदर और सजीव है इसके पीछे महान तपस्वी आधुनिक मनु डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर जी का हाथ है । दलित साहित्य तथा साहित्यकार सामाजिक शोषण पद्धति के विरुद्ध विद्रोह व्यक्त करता रहा। अस्पृश्यता, जातीयता, दैन्य जीवन में सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक, अन्याय का नाश करने वाला ही दलित साहित्य है। ऊँच-नीच, अन्ध विश्वास, जातीयता आदि समस्याओं का घोर खंडन करके सुधार लाया गया है, वही दलित साहित्य है।

दलित साहित्य किसे कहा जाए? इस प्रश्न के लिए हिन्दी दलित-साहित्यकारों की परिभाषाओं पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है। हिन्दी के महान दलित साहित्यकार डॉ. भीमराव बाबा साहेब अम्बेडकर जी की व्याख्या अधिक तर्कसंगत व उपयुक्त लगती है। "दलित शब्द दबाए गए शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित अर्थों में जब साहित्य में जुड़ता है तो यह विरोध का, एक नकार का संकेत करता है।"११ जब हम इस दृष्टिकोण से दलित साहित्य को देखते है तो अधिकतर दलित साहित्यकारों जो कि आधुनिक पंक्ति के है, उन्हें समर्थ साहित्यकार सच्चे साहित्यकार कहने में संकोच नहीं है।

दलित साहित्य डॉ.अबेंडकर जी की विचारधारा को अपना मूल स्त्रोत मानता है। इसीलिए उसकी परिभाषा या सीमाओं पर विचार करते समय उस मूल विचारधारा की विवेचना भी आवश्यक हो जाती है। जो इस साहित्य का जनक है, डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा का केन्द्रबिंदु मनुष्य था। इसीलिए उसकी सीमाओं के दायरे में पूरी मानवता समा जाती है। इसी संदर्भ में डॉ. शरण कुमार लिंबाले का कहना है कि दलित साहित्य अपना केंद्र बिंदु मनुष्य को मानता है।

डॉ. बाबा साहेब के विचारों से दलितों को अपनी ग़ुलामी का एहसास हुआ। उनकी वेदना को वाणी मिली क्योंकि उस मूल समाज को बाबा साहेब के रूप में अपना

नायक मिला, दलितों की यही वेदना दलित साहित्य की जन्मदात्री है। दलित साहित्य की वेदना में 'मैं' की वेदना नहीं वह बहिष्कृत समाज की वेदना है इस बहिष्कृत समाज को बाकी समाज के समकक्ष लाए बिना मनुष्यता का तकाज़ा अधूरा रह जाएगा और मानवता अपूर्ण ही रहेगी। इसीलिए दलित साहित्य मानवता के इस तकाजे के कारण उसे समकक्ष लाने के लिए प्रतिबद्ध है।

"साहित्य का असली सौंदर्य इस बात में है कि उसकी भाषा कितनी प्रांजल है, शिल्प कितना उत्कृष्ट है, या उसकी कलात्मकता कितनी उच्च कोटि की है, बल्कि उसका असली सौंदर्य इस बात में है कि यह जीवन से कितना जुड़ा हुआ है, मानवीय समस्या और संवेदनाओं को कितना महत्व प्रदान करता है तथा सामाजिक परिवर्तन और विकास में कितना सहायक और उपयोगी है। उपयोगिता सर्वोच्य मूल्य है और लोकोपयोगी होना साहित्य की अनिवार्य शर्त है। दलित साहित्य इन शर्तों पर पूरी तरह से खरा उतरता है। दलित साहित्य केवल वही बात कहता है जो मानव के लिए हितकर है और समाज और राष्ट्र की एकता, अखंड़ता और मजबूरी के लिए आवश्यक है। दलित साहित्य बौद्धिक विलास या मनोरंजन का साधन नहीं। सामाजिक परिवर्तन की एक मुहिम है। व्यापक दृष्टिकोण के आधार पर दलित साहित्य ने कितना पीड़ा का अनुभव किया है।"१२

अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल श्री माता प्रसाद जी कि भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली के संरक्षक का कहना है कि "दलित साहित्य केवल दलितों का लेखन नहीं है। बल्कि जिन्होंने भी उसकी पीड़ा का अनुभव करके उन पर साहित्य सृजन किया है। वह सृजन दलित साहित्य की श्रेणी में आता है।"१३

दलित साहित्य के संदर्भ में डॉ. सी.बी. भारती की मान्यता है कि नवयुग का एक व्यापक वैज्ञानिक व यथार्थपरक संवेदनशील साहित्यिक हस्तक्षेप है जो कुछ भी तर्कसंगत, वैज्ञानिक परंपराओं का पूर्वाग्रहों से मुक्त साहित्य सृजन है हम उसे दलित साहित्य के नाम से संज्ञापित करते हैं।"१४

'दलित साहित्य' की परिभाषा 'दलित लेखकों द्वारा दलित चेतना से दलितों के विषय में किए गए लेखन के रुप में भी की जाती है। दलित साहित्य के स्वरुप का निर्धारण उसमें व्यक्त होनेवाले 'दलितय' पर आधारित है और उसका प्रयोजन है। "दलित

समाज को ग़ुलामी से अवगत करना और सवर्ण समाज के समक्ष अपनी व्यथा और वेदनाओं का बयान करना ।"१५

इस प्रकार डॉ. शरण कुमार लिंबाले ने दलित साहित्य का अर्थ बताया है। दलित का दुःख, परेशानी, ग़ुलामी, अधःपतन और उपहास के साथ ही दरिद्रता का कलात्मक शैली से चित्रण करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है। आह का उदात्त स्वरुप अर्थात साहित्य ।"१६

दलित साहित्य के संदर्भ में दलित चिंतक डॉ. धर्मवीर ने अपने लेख 'दलित साहित्य की परिभाषा समग्रता और पूर्णता की ओर' में लिखा है 'दलित साहित्य की परिभाषा में दलित के स्वप्न दलित की कल्पना और दलित के ख़याल को छोडा नहीं जा सकता है। दलित जीवन में अभिधा, लक्षणा और व्यंजना की सारी खुबियाँ और शक्तियाँ हैं।"१७

"दलित साहित्य जन साहित्य है, यानी मास लिट्रेचर (Mass Literature) सिर्फ़ इतना ही नहीं, लिट्रेचर ऑफ एक्शन (Literature of action) भी है जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरूद्ध आक्रोशजनित संघर्ष है। इसी संघर्ष और विद्रोह से उपजा है दलित साहित्य ।"१८

माताप्रसादजी के अनुसार दलित साहित्य किसी वर्ण विशेष का लेखन न होकर उन सभी लोगों का है जिन्होंने भी उस पीड़ा का अनुभव करके उस पर साहित्य सृजन किया है वह साहित्य ही दलित साहित्य कहलायेगा । थोड़ी सूक्ष्मता से देखेंगे तो पता चलता है कि माताप्रसादजी बड़े ही विशाल मनोभाव के लगते हैं। भावूक बनकर विशाल मनोभाव से देखना तो ठीक है परंतु इससे दलित साहित्य को ठीक तरह से पहचानना मुश्किल होगा । इसका अतं ढूंढना तो एक अंधेरे कोठरी में काली बिल्ली को ढूंढने जैसा होगा ।

महाराष्ट्रीय साहित्यकार बाबुराव बगुल का कथन है - "दलित साहित्य का केंद्रबिंदु मानव है, जो मनुष्य को देश, धर्म से भी उच्चस्तर पर रखता है। इसमें सामाजिक

दर्द जातिवाद की पीड़ा, शोषण और उत्पीडन है । इसमें आत्मवाद और ईश्वरवाद के विरुद्ध की प्रेरणा है ।"१९

दलित साहित्य एक ऐसा साहित्य है जो सभी तरह की वर्ण व्यवस्था, जात-पात, ऊँच-नीच के भेद-भाव के दायरे से ऊपर है और जिसे धर्म, भाषा और प्रदेश की सीमा में बांधा नहीं जा सकता। यह साहित्य सर्वहारा वर्ग की तरह निश्चल और सरल है । दलित साहित्य व्यक्ति को भीरु अकर्मण्य और धर्मार्थ के स्थान पर जुझारु और कर्तव्यशील बनता है ।"२०ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का कहना है कि "व्यक्ति को मुक्त करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है ।" यह जनता का आदोंलन है ।

इसके साथ-साथ एक और जगह डॉ.रामदरश मिश्र ने लिखा है "दलित साहित्यकारों में साधना का अभाव है जिसके कारण दलित साहित्य कलात्मक नहीं है । जब दलित साहित्य को पाठ्यक्रम में लगाने की बात आयी तो डॉ. मैनेजर पांडेय एक संगोष्ठी में कहा-दलित चेतना की सबसे पहली शर्त है उसका विरोध का स्वर । पीड़ा की छटपटाहट, आक्रोश का तेवर और उसके साथ ही कहीं परिवर्तन के लिए उगता हुआ संकल्प ।

दलित लेखन की धरातल बनाने के लिए अपने समाज के प्रेरणा स्त्रोत से जुड़े रहकर उनमें जाकर और उन्हें जमाकर अपने साहित्य को खड़ा करना होगा ।

इस प्रकार 'दलित साहित्य' की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों द्वारा ही दी गयी हैं। लेकिन प्रचलित और मान्य परिभाषा जो मराठी दलित साहित्य में की जाती है, वह दलितों द्वारा दलितों के संबंध में, दलितों के लिए लिखा गया ही दलित साहित्य है। इस साहित्य में रचनाकार वर्णवादी व्यवस्था में भोगे हुए सच के आधार पर यथार्थ की कलम से ज़िंदगी की कड़वाहट की इबारत सदियों से दबे आक्रोश के साथ उलीचता है ।

## १.३. दलित साहित्य की परंपरा:

आदि मानव जब जन्मा तब वह मात्र अपनी भूख मिटाने हेतु कार्य करता था।

उसके अदंर छल, कपट, घृणा आदि भाव नहीं थे। लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता गया वह और उसकी पीढ़ी भी बदलती गई। आख़िर वह स्वार्थ बनकर दूसरों पर राज करने और उसे अपना दास बनाने के प्रयास करने लगा। उसी दिन से शायद पिछड़ी जातियों का जन्म भी हुआ होगा। समाज के विकास की द्वंद्वात्मक भौतिकवाद व्याख्या के अनुसार यह मानव सभ्यता का आदिम साम्य 'के युग से दास युग की' ओर प्रस्थान था।

"धर्म के नाम पर सदियों से चले आ रहे सामाजिक, मानसिक और आर्थिक शोषण के विरुद्ध दलित वर्ग में आई चेतना ने विद्रोह किया। इसके परिणाम स्वरुप एक नए साहित्य का जन्म हुआ, वह है दलित साहित्य। ऐसे हज़ारों वर्षों से दबे हुए हरिजनों और आदिवासियों से संबधित उनकी ही जाति में उत्पन्न साहित्यकार द्वारा रचा साहित्य 'दलित साहित्य' है।"२१ दलित जीवन की प्रत्यक्ष अनुभूति उसकी प्रेरणा होती है।

इस तथ्य को रेखांकित किया जाना आवश्यक है कि दलित साहित्य मराठी साहित्य का विशिष्ठ सशक्त आविष्कार है। मराठी दलित साहित्य ने ही दलित साहित्य को समग्र भारतीय साहित्य में प्रचारित-प्रसारित किया और साहित्य को एक विशिष्ठ एहसास भी दिया। 'दलित' अर्थात दमित उपेक्षित, सवर्ण समाज द्वारा अस्वीकारित धिक्कारित, अछूत समाज है।

"इस मराठी साहित्य में ही इस चेतना के प्रथम उन्मेष का कारण उस भाषा समाज पर डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव है। डॉ.अम्बेडकर ने दलित की आत्मा जागृत की, उसे अपने मानवोचित अधिकारों से अवगत कराया एवं समाज में समानाधिष्टित करने के लिए संघर्ष की वैचारिक चेतना प्रदान की।"२२

हिन्दी साहित्य में 'दलित साहित्य' जैसा कोई अलग साहित्य प्रकार परंपरागत रुप से नहीं था और न ही दलित आदोंलन जैसे कोई आदोंलन। परंतु उसमें दलित विमर्श अवश्य हुआ है। जिसके परिणामस्वरुप अब दलित साहित्य ने हिन्दी में भी आदोंलन का रुप ले लिया है।

"हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक निर्मित साहित्य में

दलितों से संबंधित चित्रण, उनकी हालत, पीड़ा, आक्रोश, आकांक्षा आदि का वर्णन दलित आन्दोलन के रुप में नहीं हुआ है । संदेह नहीं कि आदिकालीन कुछ सिद्ध और भक्तिकालीन रैदास तथा कृष्णदास दलित थे । परंतु उनके साहित्य पर आन्दोलनकारी दलित साहित्य का आरोप करना उनके प्रति अन्याय होगा, क्योंकि उनका दृष्टिकोण दलित साहित्य निर्माण का नहीं था । दलितेतर साहित्यकारों के द्वारा भी हिन्दी में यत्र-तत्र रुप में दलित चित्रण हुआ है ।"२३

मुख्य रुप से प्रेमचंद, निराला और नागार्जुन ने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित जीवन की त्रासदी को बध्द किया है। व्यापक दृष्टिकोणवाले आलोचक इन्हें तथा अन्य ग़ैर दलित साहित्य के अतंर्गत समाहित करने के पक्ष में हैं। परंतु दूसरी ओर कट्टर दलितवादी आलोचकों का मत है कि दलित साहित्य के अतंर्गत केवल उन्हीं रचनाकारों को शामिल किया जाना चाहिए जो जन्मता दलित हैं । क्योंकि उन्हीं का अनुभव सच्चा है और प्रामाणिक भी हो सकता है। हमारी दृष्टि में यह बहस करने के लिए बहस करने के समान है।

साहित्यकार की अनुभूति प्रवणता किसी वर्ग विशेष में जन्म लेने की मुहताज नहीं माना जाना चाहिए। जन्म लेने के आधार पर साहित्यकारों के बीच भेदभाव करना बहुत तर्कसंगत नहीं हो सकता । अतः दलित जागरण को लक्ष्य करके लिखे गए साहित्य को दलित साहित्य कहा जाना चाहिए। चाहे वह किसी ने भी लिखा हो। इस रुप में हिन्दी में दलितों से संबंधित साहित्य को दलित साहित्य कहा जा सकता है।

यहाँ इस प्रश्न पर भी विचार करना आवश्यक है कि भारतीय समाज में दलितों के मत में उच्च वर्णों के प्रति घृणा क्यों बढ़ती गई? वास्तव में इसके पीछे ऐतिहासिक कारण विद्यमान है। मध्यकाल में भारतीय वर्ण व्यवस्था इतनी जड़ और रुढ़ हो गई कि उच्च वर्ण निम्न वर्ण के प्रति अमानवीयता की हद असहिष्णु हो गए । हिंदी साहित्य का मध्यकाल भारतीय राजनीति की पराधीनता का काल है । निरंकुश हिन्दू राजाओं का शासन काल हुआ । मुसलमान राजाओं से भारत की स्वाधीनता आक्रांत हुई, किंतु दलित चेतना की जाग्रती इसी काल से प्रारंभ हुई है ।मुसलमान राजाओं के समय में कई सूफ़ी संत जन-जन की बीच जाकर इस्लाम का प्रचार करने लगे ।

इस्लाम की शिक्षा, समता, स्वतंत्रता तथा भाईचारे ने दलितों को आकर्षित किया। सूफ़ियों के प्रभाव से बेशुमार दलित पीडित उपेक्षित लोग मुसलमान बन गए। जो नहीं बने इन दलितों में हिन्दू व्यवस्था के विरुद्ध घृणा और भी घनीभूत हो गई।"२४ भक्ति आन्दोलन ने वर्ण व्यवस्था को पहली बड़ी चुनौती दी थी। "जिसके अनुसार जात-पाँत पूछे नहीं कोई। हरि को भजे सो हरि का होई। इसी पृष्ठभूमि में कबीर आदि संतों का आविर्भाव दलित समाज के बीच से हुआ, जिन्हें दलित पीडित जनता का अपार समर्थन मिला। कबीरदास, नानक, रविदास (रैदास) इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। ब्राह्मण शूद्र को भेद-भाव पूर्ण मान्यता से पूरा भारतीय समाज विकृत अवस्था में था। दलितों की पशु से भी गई बीती स्थिति थी। इस विषम स्थिति को प्रथम बार कबीरदास ने उजागर करते हुए कहा। एक त्वचा, हाड, मल मूत्र एक रुधीर एक गुदा/एक बूँद ले सृष्टि रच्यों है, की ब्राह्मण को शुदा।"२५

इस प्रकार मध्यकाल में जोखामेला, सरहप्पा, कन्हपा, कबीरदास, रविदास (रैदास) दादू, पलटू आदि दलित कवियों ने दलित साहित्य को सिर्फ़ जन्म दिया बल्कि उसे पाल पोसकर चलना भी सिखाया। जैसे कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है "दलित साहित्य पद का प्रयोग डॉ. भीमराव अबेंडकर के दलित साहित्य सेवक संघ में किया गया। दलित साहित्य का लक्ष्य मानव विरोधी व्यवस्था में बदलाव लाकर समता, बंधुता और मैत्री की स्थापना करके मानवीयता के गुणों का समावेश करना है।"२६

हिन्दी में दलित चेतना के उदय को अभिव्यक्त करनेवाली रचना, सबसे पहले 'सरस्वती' पत्रिका में छपी थी। जिसका शिर्षक था 'अछूत की शिकायत' और कवि थे हीरा डोम। इसमें केवल दलितों की शिकायत या व्यथा ही दर्ज नहीं की गई बल्कि आक्रोश और विरोध भी जताया गया है। इस कविता में पहली बार भगवान की उस शास्त्र सम्मत संरचना पर भी प्रश्न उठाया गया है जो दलितों को मनुष्यता के दायरे से बाहर रखती है। इस कविता में कवि सवर्णों को दी गई सुविधाओं और अपनी दीनता और दुःख पर मलाल और ग़ुस्सा भी प्रकट करता है। जब वह, यह कहता है।

"हमनी के दुःख भगवानओं ने देखताजे

हमने के केवल कलेसवा उठाइदि ।”

इस प्रकार तेलगु कवि जाषुपा ने भी ‘भगवान’ के दोहरे मापदंड पर पहले पहले सवाल उठाया था और अपने प्रश्न करने का एक हक जाताते हुए कहा था ।

“सृजन कर्ता हो तुम

तुम्हारी की ही सृष्टि मैं

तुमसे प्रश्न करने के

हक़ खता हूँ मैं

मेरे किस पाप के फलस्वरुप

मुझे अछूत बनाया गया ?”

आगे फिर वे देवताओं के धनवानों के प्रति प्रेम पर कटाक्ष करते हैं ।

“धनवानों के आदेश का पालन यहाँ,

ब्रम्हा इत्यादी देवता भी करते हैं

वे आगे कहते हैं कि,

चीटियों को चीनी खिलाने

सांपों को दूध पिलानेवाली

इस कर्मभूमि में

धर्म देवता भी यदि जन्म ले

वह भी इस अभागे के निकट

आते ही चौंक पडेगा ॥”२७

ध्यान देने की बात यह है कि यह प्रश्न शैली या शिकायत की रीति भक्ति परंपरा के

कवियों से हटकर कुछ अलग है । बाद में बाबा साहब अबेंडकर द्वारा प्रतिपादित शिकायते भी इसी तरह की थी । बाबा साहब से पूर्व ही इन दोनों कवियों ने मात्र अपनी-अपनी भाषा में दलित चेतना के जागरण की पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी ।

स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी हिन्दी में दलितों की दशा सुधारने के लिए अपना योगदान दिया था । उनका कार्य क्षेत्र मुख्यतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पंजाब रहा है । अछूतोद्धार का अभियान सुचारात्मक ही था । वे वर्ण व्यवस्था को सुरक्षित रखते हुए भेद-भाव मिटाने की बात नहीं करते थे । इस प्रकार उनकी सोच सुधारवादी के साथ-साथ धर्म पर आधारित थी । जबकि डॉ. अबेंडकर पूरी तरह वैज्ञानिक सोच पर परिवर्तनवादी आदोंलन चला रहे थे जिसके हथियार शिक्षा, संघर्ष और संघटन थे न कि धर्म ।"२८ बाबा साहब के कुछ पहले उत्तर प्रदेश में १९ वी सदी में ही स्वामी अछूतानंद ने 'आदि हिंदू आदोंलन' चलाया । जिसके फलस्वरुप जाति प्रथा पर प्रहार करनेवाला प्रचार और साहित्य लिखा जाने लगा था ।"२९

१९१४ में हीरा डोम की 'अछूत को शिकायत' नामक कविता 'सरस्वती' में छपने के बाद हिन्दी दलित साहित्य में विकास की रेखा देखने को मिली । अस्सी के दशक तक हिन्दी दलित साहित्य में ज्यादा विकास नहीं आया । अस्सी के दशक के बाद ही दलित साहित्य एक नई पहचान लेकर अभिजात सवर्ण साहित्यकारों के मंच को चुनौती देने लगा । दलित साहित्यिक संस्थानों ने दलित साहित्यकारों की पहचान बनाने के कार्यक्रम शुरु किए । इस प्रकार दलित संगठनों ने भारत सरकार पर दबाव डाल कर डॉ. अम्बेडकर का संपूर्ण वाङ्मय छापने को मजबूर किये । ऐसे संस्थानों द्वारा हिंदी पत्रिकाएँ भी निकाली जाने लगी । इसी दशक में दलित संस्थानों की सक्रियता बढ़ी ।"३०

डॉ. सोहनलाल सुमनाक्षर के नेत्रुत्व में "भारतीय दलित साहित्य अकादमी के राष्ट्रीय सम्मेलन हर वर्ष होने लगे । आगे यही अन्य सिलसिला राज्यों में भी चला । भारतीय दलित साहित्य अकादमी ने हर वर्ष अनेक दलित लेखकों नों और हज़ारों की संख्या में दलित चेतना समर्थकों एवं गैर दलित लेखकों को एक साथ एक मंच पर जुटाने का काम किया ।"३१

'सेंटर फॉर अल्टरनेटिव दलित मीडिया (कदम) १९९० (दिल्ली), 'दलित राइटर्स

फोरम','फुले अम्बेडकरवादी लेखक संघ' (नागपुर), 'दलित लेखिका संघ (नागपुर)', 'अबेंडकर मिशन' (बिहार), आदि संस्थाएँ दलित साहित्य और साहित्यकारों के विकास के लिए काम कर रही हैं।"३२

इस प्रकार बीसवीं सदी में लगभग अस्सी के दशक के बाद विभिन्न दलित व ग़ैर दलित संस्थानों ने दलित चिंतन और दलित साहित्य के विकास हेतु, उसकी पृष्ठभूमि बनाने, दलित अस्मिता का निर्माण करने एवं दलित एजैंडा बनाने के मुद्दों पर महत्वपूर्ण भूमिका तो निभाई ही, साथ ही परस्पर बहस चला कर दलित संवाद भी कायम किया।

दलित साहित्य के विकास के लिए पत्रिकाएँ भी निकाली गई । दलित साहित्यकारों को बहुत पैमाने पर छापने की शुरुआत पहले-पहले 'युद्धरत आम आदमी' और 'हंस' जैसे पत्रिकाओं ने की। 'युद्धरत आम आदमी' में १९८७ में ही हिंदी की पहली दलित कहानी 'लटकी हुई शर्त' (प्रहलाद दास) छपी। इसके बाद 'युद्धरत आदमी' के चार विशेषांक दलित चेतना कविता, कहानी, साहित्य और सोच पर आए। 'भीम' अबेंडकर मिशन 'शंबुक' 'धम्म दर्पण', 'हम दलित', 'हिमायती', 'अभिमूक नायक', 'दलित प्रक्रिया', 'सजग प्रहरी', 'अश्वघोष', 'समय सरोकार', 'निर्णायक भीम', 'लोकसूचक', 'परिषद संदेश', 'प्रज्ञा' आदि पत्रिकाएँ दलित के विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।"३३

अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल श्री. माताप्रसाद ने "सीधी-साधी भाषा में साहित्य रचा और दोहों के अतिरिक्त दर्जनों नाटक और खंड काव्य लिखकर दलित सर्वहारा में स्वाभिमान की चेतना का विकास किया। उन्होंने हिंदी पट्टी के साहित्यकारों को भी एक जूट कर, एक मंच पर लाकर उन्हें प्रेरित और आदोंलित किया। माताप्रसादजी ने सामंती मानसिकता से उस पीडित और हीन भावना से ग्रसित एक बडे दलित वर्ग को जगाया। माताप्रसादजी ने दिग्विजयी रावण खंड काव्य की रचना कर रावण को नई परिभाषा दी और उसे तुलसी के राम की तुलना में ऊँचा उठाया।"३४ हिंदी में दलित लेखकों ने शोध कार्य भी शुरु किए और विचारात्मक धरातल पर भी गंभीरता से लेखन कार्य शुरु हुआ।

डॉ. धर्मवीर ने 'कबीर के आलोचक' में कबीर को तुलसी के तुलना में खड़ा कर यह सिद्ध कर दिया कि कबीर परिवर्तन के प्रतीक थे और तुलसी यथास्थितिवाद के प्रेषक। उनकी तर्क प्रणाली आलोचना के क्षेत्र में विवादस्पद मानी जाती है।

डॉ. श्यौराजसिंह 'बेचैन' की पुस्तक ने पत्रकारिता के क्षेत्र में सूचनाओं के अबंर लगा दिए तो चंद्रभान प्रसाद ने 'विश्वासघात' में तथ्यों के प्रामाणिक आकंडों को प्रस्तुत कर स्वाधीनता के पश्चात दलितों की शिक्षा और उनके विकास के झूठे आकंडों तथा सत्ता की इच्छा शक्ति के अभाव को बेपर्दा किया।

डॉ. एन. सिंह रचनात्मक लेखन के अतिरिक्त विचारधारा और समीक्षा तथा आलोचना के स्तर पर भी दलित साहित्य को एक नया आयाम दे रहे हैं। कैवल भारती के राजनीतिक, सामाजिक विश्लेषणात्मक आलेखों से हिंदी पट्टी की पत्रकारिता समृद्ध हो रही है ।डॉ सुशीला टाकभौरे ने लगभग एक दर्जन पुस्तकें दलित साहित्य पर जैसे कविता, कहानी, आत्मकथा और निबंधों को प्रकशित कर दलित साहित्य लेखन में सशक्त भागीदारी दर्ज कराई है।

नवल वियोगी ने परिप्रेक्ष में नया इतिहास रचने की मुहीम छेड रखी है। रजन रानी 'मीनू' ने दलित कथा साहित्य पर शोध किया और दलित कविता पर एक गंभीर पुस्तक लिखी। जयप्रकाश कर्दम ने हिंदी दलित साहित्य का पहला उपन्यास 'छप्पर' लिखा दलित उपन्यास के क्षेत्र में प्रेम कपाडिया ने भी सफल योगदान दिया।

मोहनदास नेमिशराय की आत्मकथा 'अपने अपने पिंजरे' इस विधा की प्रथम पुस्तक के रुप में आयी।

"ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी आत्मकथा 'जूठन' में हिंदी पट्टी में दलित पीड़ा के आयाम को दर्ज करने के साथ-साथ सवर्ण अभिजात के नासूर को उकेरा जो शिक्षा के क्षेत्र में भी अबोध बालकों के स्तर तक दोहरे मापदंड का इस्तमाल कर भारतीय मानस को सुराव, छल, कपट के जहर से मारता है। कौशल्या बैशंत्री ने 'दोहरा अभिशाप' नाम से अपनी आत्मकथा लिखकर दलित लेखन को समृद्ध किया।"३५

इसके अतिरिक्त कुसुम वियोगी, जयप्रकाश कर्दम, टी.पी.सिंहा, मलखान सिंह, सूरजपाल चौहान, बील.एल. नैय्यर, सी.बी. भारती, रामकृष्ण राजपूत शत्रुघ्नन कुमार कोवरी, प्रल्हाद चंददास, दयाचंद बेटाही, लालचंद राही, विपिन बिहारी, जियालाल आर्य, रमाशंकर आर्य, एस. के. विश्वास, रजनी तिलक, कर्मशील भारती, अ.मा. उके. तथा अजय सतीश जैसे अनेक हिंदी के दलित लेखक रचनात्मक क्षेत्र में कहानी, कविता, उपन्यास, नाटक एवं निबंध की विधाओं को समृद्ध कर रहे हैं।

"आलोचक मैनेजर पांडेय एवं 'हंस' के संपादक राजेंद्र यादव ने दलित साहित्य को सबल समर्थन ही नहीं दिया, बल्कि दलित विरोधियों को कड़ा जवाब दिया। और दलित साहित्य को एक निश्चित पहचान देने की मोहिम के साथ-साथ ऐतिहासिक संदर्भ को भी खोज कर दलित साहित्य के औचित्य को मजबूत किया।"३६

रमणिका गुप्ता का नाम भी यहाँ उल्लेखनीय है जिन्होंने संपादक, रचनाकार, सामाजिक कार्यकर्ता राजनैतिज्ञ के रुप में ही ख्याति अर्जित नहीं की है बल्कि सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को तीव्र करने के लिए विशिष्ठ कार्य किए हैं। "उन्होंने रमणिका फाउंडेशन के माध्यम से झारखंड राज्य में दलितों और जनजातियों के लिए कल्याणकारी और विकास कार्य की अनेक योजनाएँ चलाई हैं। इससे लोगों में एक नई चेतना का विकास हुआ है। वे आज भी अपनी प्रतिबद्धता और संघर्षशीलता के कारण रचना धर्मी होने का कर्तव्य निभा रहीं हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक 'दलित कहानी संरचना' में छः भारतीय भाषाओं के चुने हुए दलित कहानिकारों की कहानियों को संपादित कर भारतीय दलित साहित्यकारों को एक मंच पर खड़ाकर हिंदी दलित साहित्य को एक नया आयाम है। 'युद्धरत आम आदमी' की चर्चा पहले की चुकी है। वे इस पत्रिका की संपादक, प्रकाशक हैं। वे दलित साहित्य के विकास में समर्पित भाव से अपना योगदान दे रही हैं।"३७

इस प्रकार दलित साहित्य क्षेत्र समय-समय पर अपनी दशा और दिशा में परिवर्तन, गति प्राप्त करते हुए एक नई आवाज़ के रुप में मुखरित हो रहा है जिसमें

दलितों की पीड़ा, वेदना, आक्रोश और रुदन के यथार्थ को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है। साहित्य की हर विधा जैसे आत्मकथा के रुप को भी लिए दलित साहित्य की परंपरा विकसित हो रही है।

## १.३.१. सिद्ध एवं नाथ साहित्य

सिद्ध एवं नाथ साहित्य को दलित साहित्य के विकास के रुप में देखा जा सकता है। सिद्ध सरहपा, कृष्णपाद, शतिंपा, चिंतामणि नाथ तथा भरत जी आदि नाथों ने अपने काव्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों का विरोध अनवरत किया। गोरखनाथ शूद्रों को भी शिक्षा देने के पक्षपाती थे। गोरखनाथ और कई सिद्ध निम्न जाति के थे। इससे यह पता चलता है कि नाथ पंत में जाति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं था।

सिद्ध सरहपा ने भी वर्ण जाति और बाह्याडम्बर का विरोध किया है।

“वर्ण अचान प्रमाण रहित

अच्छर भेद औत

को पूप्रह कहं पूजपाई

जासु आदि न अतं।”३८

सिद्ध तथा नाथों के वैचारिक तथा सांस्कृतिक प्रभाव हिन्दी और मराठी भाषियों पर दिखाई देता है। दोनों भाषा की ग़रीब जनता सिद्ध संप्रदाय के तत्वों को अपनाने लगी। इसलिए सिद्ध एवं नाथ साहित्य को दलित उद्धार का साहित्य माना जाता है। बहुतेरे सिद्ध नीच जाति के ही थे। कँवल भारती का कहना है कि - “हमें सिद्ध साहित्य से ही संस्कृति के रुप को देखना होगा। सिद्ध साहित्य में ब्राह्मणों के सक्रिय हस्तक्षेप के बावजूद हमें दो चीज़े नहीं भूलनी चाहिए। पहली यह है कि सिद्ध साहित्य में संस्कृति के मूल बुद्ध की परंपरा से आते हैं; जिन्होंने मूल निवासियों या शूद्रों को सर्वाधिक प्रभावित किया था। दूसरी यह है कि सिद्धों में तीन दर्जन से भी ज्यादा सिद्ध शूद्र और निम्न जातियों से आये हैं। सिद्धों के साहित्य में हम श्रम को संस्कृति के मूल तत्व के रुप में देखते हैं। अधिकांश सिद्ध किसी न किसी श्रम से जुड़े हैं। धर्म की स्वीकृति का मुख्य कारण भी

यह सांस्कृतिक समानता ही प्रतीत

होती हैं।"३९

इस साहित्य को दलित साहित्य एवं दलितों के विकास के रुप में देखने से कोई ग़लती नहीं होगी।

## १.३.२. मराठी साहित्य

मराठी साहित्य में दलित चेतना की शुरुआत तेरहवीं शताब्दी में हुई थी। मराठी संतों में युग-युग की वेदना व्यक्त होती है। तुकाराम, एकनाथ, मध्यम मुनिश्वर तथा सन्त चौखा मेला आदि मराठी संतों में युग-युग से चली आ रही शोषण की प्रवृत्ति बाह्याडम्बर जाति-पाँति इत्यादि का खुलकर विरोध किया है। ये मराठी कवि (संत) सामाजिक समानता के पक्षधर थे। पाखण्ड का खण्डन करते हुए संत एकनाथ ने जी अपने गरुड ग्रन्थ में लिखा है।

"नाम बेचकर दाम लेते हैं

उसकी करनी हराम है

फकीर होकर फकीरी करता

उसका मुँह काला है

नाथ पंथ की मुद्रा डाली

जंग में सिंगी बयावत हो

सिदास चमार सब कुछ जाने

कणौत गंगा देख।"४०

इस तथ्य को रेखांकित किया जाना अवश्य है कि दलित साहित्य मराठी साहित्य का विशिष्ठ सशक्त आविष्कार है। मराठी दलित साहित्य ने ही दलित साहित्य को समग्र भारतीय साहित्य में प्रचारित- प्रसारित किया और साहित्य को एक विशिष्ठ एहसास भी

दिया।

## १.३.३. संत साहित्य

कबीर दास, रैदास, मलूकदास आदि लगभग संत कवियों ने दासता, अस्पृश्यता, शोषण तथा सार्वजनिक स्थानों पर दलितों के प्रवेश जातीयता मूर्ति पूजा, कर्मकाण्ड, ज्ञान की महत्ता आदि पर व्यापक प्रकाश डाला है-

"का करो जाति का करो पांति

राम का भजन करे दिन गति।"४१

संतों की दृष्टि में जाति-पाँति मानव-मानव के बीच विषमता पैदाकर समाज से समाज को तोड़ने का काम करती है। शोषण के विरुद्ध संतों का काव्य एक तीखा अस्त्र है। समाज में जब-जब असमानता का प्रकोप बढ़ा है, उसे मिटाने के लिए किसी-न-किसी व्यक्ति या उनके समूह के प्रयत्न से सामाजिक सुधार का कार्य चलता आया है।

मराठी दलित संत चोखामेला अपने जन्म को पूर्व जन्म का पाप मानता है। आगे चलकर उनका सुपुत्र कर्म मेला कठोर से कठोर शब्दों में वर्णाश्रम का जमकर विरोध किया है। इसके स्वर में विद्रोह दृष्टिगत होता है, जबकि चोखामेला के स्वर में सिर्फ़ वेदना ही प्रमुख बनी रही।

दक्षिण के दलित संतों की तुलना में हिंदी क्षेत्र के दलित संतों की वाणी में कुछ पुष्टि नज़र आती है। उत्तर भारत में संत कबीर का धर्म वर्णवाद के विरोध में बोल उठा। अकेले कबीर की शेर गर्जना से ब्राह्मणवाद की नींव हिलाई है। समस्त भारत में यह एकमात्र संत है जो सामंतों, राजओं से न डरते हुए उनके बुराईयों का पोल खोलता है।

"भगवे कपडे पहन के आए चोर अनंत।

जिसके संग में दस-बीस हैं, उसके कहत संत॥"४२

"दलितों के वरिष्ठ लोक कवि मोतीलाल संत ने अपने पूरे कवि जीवन में कुल १९ लघु

पुस्तके लोकगीतों में लिखी। तेजसिंह 'सागर' के संपर्क ने इन्हें अम्बेडकरी विचारों से जोड़ा। दिल्ली में आने पर मानसिंह 'मान' की रचनाओं ने प्रभावित किया। 'मान' की ये पंक्तियाँ ईश्वर तक के नकार का अतिवाद हैं-

"ईश्वर अल्लाह और ख़ुदा, गुरु अवतार।

समता के प्रतिकूल हैं इनके मूल विचार।"४३

संत नामदेव जी ने ब्राह्मणवाद का खुलकर विरोध किया है। परंतु निम्नलिखित हिन्दी के संत रैदास की वाणी में यह स्वर मुखरित नहीं होता। नरमी तथा वेदना के साथ ही विद्रोह के स्वर छलकते हैं। सच में संत रैदास के कार्यों की महानता के सामने सभी का सर झुकना चाहिए। वे कहते हैं-

"सभ सहि एकु रामहि जोति,

सभनह एकड़ सिरजन हारा।

रविदास राम रामहि सभन मंहि

ब्राह्मण हो कि चमारा।"४४

संत कबीर जी सहज भाव से बुराई पर प्रहार करके समाज सुधार की ओर निकल पड़ते हैं।स्पष्ट है कि संपूर्ण संत साहित्य दलित चेतना विषयक सामग्री से भरा पड़ा है। संतों की दृष्टि इस क्षेत्र में एक स्वच्छ समाज की परिकल्पना रखती है।

उपर्युक्त प्रमुख संतों की वाणी संबंधी चिंतन से पता चलता है समस्त भारत में यह धारा कम ज्यादा एक ही समय नज़र आती है। देश के कई राज्यों के संतों ने जातिवाद, छुआ-छूत, ऊँच-नीचता का खुलकर विरोध किया है। इस विषय में १२ वीं शताब्दी में महात्मा बसवेश्वर ने कर्नाटक में महान क्रांति की है।

## १.४. दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि:

बुद्ध का दर्शन, ज्योतिबा फुले ले और डॉ. अम्बेडकर के जीवन संघर्ष में दलित

साहित्य का वैचारिक आधार छिपा है। सभी दलित रचनाकार इस बिन्दु पर एकमत हैं कि ज्योतिबा फुले ले ने स्वयं क्रियाशील रहकर सामंती मूल्यों और सामाजिक ग़ुलामी के विरोध का स्वर तेज किया था। ब्राह्मणवादी सोच और वर्चस्व या प्रभुत्व के विरोध में उन्होंने आदोंलन खड़ा किया था। "यही कारण है कि जहाँ रचनाकारों ने ज्योतिबा फुले को अपने विशिष्ट विचारक माना है, वहीं डॉ. अम्बेडकर को अपना शक्तिपुंज स्वीकार किया है तथा इन दोनों के जीवन दर्शन का स्त्रोत गौतम बुद्ध के क्रांतिकारी विचारों में निहित माना है, जिन्होंने अपने समय में व्याप्त ब्राह्मणवाद को पहली बड़ी चुनौती दी थी।"४५

भारतीय दलित साहित्य के "सौंदर्यशास्त्र के अमुख-अमुख तत्व अर्थात दलित चेतना की वैचारिक अभिव्यक्ति का सीधा संबंध डॉ. अम्बेडकर के दर्शन एवं चिंतन से है।"४६ इन सारे विचारों के साथ-साथ दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि रही है।

## १.४.१. बौद्ध विचार प्रणाली:

दलित आदोंलन का विकास तो ज्योतिबा फुले तथा डॉ. भीमराव के साहित्य से होता है। लेकिन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष में बौद्ध साहित्य द्वारा समग्र सम्यक क्रांति के दलित आदोंलन का प्रारंभिक स्वरुप स्पष्ट होता है। इसी में व्यापक सामाजिक दलित चिंतन की नवीन संभावनाएँ निहित है।

डॉ. अम्बेडकर के धर्मांतरण का दलित समाज पर बड़ा प्रभाव पड़ा। हिंदू वर्ण व्यवस्था अपने मूल रुप में भले ही मनुष्य मात्र की एकता पर आधारित और कर्मों की भिन्नता से प्रेरित वर्गीकरण के रुप में रही हो। परंतु आधुनिक काल तक आते-आते उसका मानवतावादी स्वरुप बडे हद तक दब चुका है। उसके भीतर रुढिग्रस्तता की सडाँध भर गयी है। "नवजागरण काल में 'ब्रह्मसमाज' से लेकर आर्य समाज तक ने इस सडाँध को दूर करने का प्रयास किया। परंतु उनका दृष्टिकोण मूलतः सुधारवादी था। जबकि हिंदू समाज को एक ऐसे झटके की ज़रुरत थी जो उसे अपने अपको आमूल बदलने पर विवश कर सकें। दलितों का धर्मांतरण ऐसा ही झटका था। दुर्भाग्य है कि इस झटके से भी भारतीय हिन्दू समाज अभी तक पूरी तरह जागा नहीं और जन्म के आधार पर भी अमानवीय भेद-भाव दलित जातियों के साथ किया जाता है। इसलिए दलित समाज के

व्यापक असंतोष को यहीं से विद्रोह की दिशा मिली"।४७

नव बौद्ध विद्वानों ने यह भी उपेक्षा की है कि दलित साहित्य का मूल्यांकन बौद्ध विचार से हो। क्योंकि इसकी मूल वैचारिक प्रेरणा बौद्ध मत में निहित है। जैसा कि कहा जा चुका है धर्मांतरण से दलित समाज की मानसिकता में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। इससे दलितों का मुक्ति संघर्ष आरंभ हो गया। उन्हें बौद्ध धर्म में एक नया सांस्कृतिक आधार मिल गया। उदाहरण के लिए बौद्ध धर्म में जाति व्यवस्था के लिए कोई स्थान नहीं है। तथा वह समता का समर्थन करनेवाला धर्म है।४८ इस तथ्य ने पीडित जातियों को नई शक्ति प्रदान की और उनके साहित्य ने जाति की सुनिश्चित मुद्रा अविष्कार कर ली।

यह तथ्य रेखांकित करने योग्य है कि बाबा साहब अबेंडकर के निधन के बाद दलित समाज ने बौध धर्म का प्रचार किया। "बौद्ध पद्धति से विवाह करवाया बुद्ध जयंति मनाया, विहारों की स्थापना पंचशील और त्रिशरण का अनुसरण करना, बौद्ध धर्म प्रचारक बनना, छोटे बच्चों और घरों के नाम बौद्ध धर्म के अनुरुप रखना आदि विविध प्रकार के आचार व्यवहार द्वारा दलितों ने (बौद्ध धर्म) बौद्धमत होने की प्रक्रिया शुरु की। इस प्रक्रिया का एक भाग बौद्ध धर्म के साहित्य को पुरस्कृत करना था।"४९

## १.४.१. महात्मा ज्योतिबा फुले:

महाराष्ट्र में सन् १८१८ ई. में पेशवा शासन पतन के बाद अग्रेंजों का शासन आया। यह समय ब्राह्मणों द्वारा धर्म के नाम पर जन सामान्य के शोषण का समय था। इस शोषण का आधार मनुस्मृति की पुरानी मान्यताओं का ग़लत-सलत व्याख्याएँ थी। इसलिए महात्मा फुले ने मनुस्मृति के विरोध में उसे 'अपवित्र ग्रंथ' घोषित किया। इस स्थिति में जन-सामान्य विशेषकर दलित जातियों की दशा अत्यंत दयनीय थी। ऐसे विषम सामाजिक जीवन को निकट से देखकर महात्मा फुले ने परिस्थितियों का गहन विश्लेषण किया। उन्होंने हज़ारों शूद्रोति शूद्रों को संगठित करके सामाजिक विषमता के विरुद्ध विद्रोह शुरु किया।"५०

महात्मा फुले ने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए सन् १८७३ ई. में, 'सत्य शोधक

समाज' की स्थापना की और जाति भेद, धर्म-भेद जैसी नीति पर हमले किए। इस प्रकार वेदों, श्रृतियों और पुराणों के सिद्धांतों और मतों का खंडन किया। शब्द की अपेक्षा विचार बुद्धि को उन्होंने अधिक प्रामाणिक माना । उनके सत्य शोधक आदोंलन ने दीन दलितोंध्दार  का पक्ष लेकर उनकी हित की रक्षा की । इस दृष्टि से दलितों द्वारा के इतिहास में इस आदोंलन का स्थान ऊँचा माना जाएगा। यह आदोंलन शोषितों, दुर्बलों की विद्रोह चेतना की अभिव्यंजना थी। सत्य शोधक आदोंलन सामाजिक दासता में अनेक बरसों तक दबे हुए दलितों के प्रथम प्रतिकार की आवाज़ थी।"५१

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि ज्योतिबा फुले पहले भारतीय थे, जिन्होंने महाराष्ट्र में अछूतों और लड़कियों के लिए स्कूल खोला था। महात्मा फुले ने जाति प्रथा पर जो कठोर प्रहार किया, आगे चलकर वही डॉ. अम्बेडकर की किताब 'जाति का उन्मूलन' का आधार बना । अछुतों की पीड़ा का जो चित्रण महात्मा फुले की पुस्तक 'गुलामगिरी' में मिलता है, उससे उन्नसवीं शताब्दी के आधुनिक भारत के समाज की उस वास्तविक तस्वीर का पता चलता है जिसे ब्राह्मणों ने बनाया था। जैसे "शूद्रों में से कई जातियों को रास्तों पर थूकने की भी मना ही थी । इसलिए उन शूद्रों को ब्राह्मणों की बस्ती से गुज़रना पड़ता तो अपने साथ थूकने के लिए मिट्टी के किसी एक बर्तन को रखना पड़ता था। समझलो उसकी थूक जमीन पर पड गई और उसको ब्राह्मण पंडित ने देख लिया तो उस शूद्र की खैर नहीं।"५२

इस प्रकार सामाजिक समता, दलितोद्धार के लिए महात्मा फुले ने सामाजिक समता के विरुद्ध आदोंलन शुरु करके दीन-दलितों को जाग्रत किया।

## १.४.३. बाबा साहब डॉ. भीमराव अबेंडकर

डॉ.भीमराव अबेंडकर को यह श्रेय जाता है कि उन्होंने प्राचीन 'मनुस्मृति' को भस्मीभूत करके दलितों को सम्मान दिलानेवाले और समाज व्यवस्था की 'स्मृति स्थापित की। वे समता और स्वतंत्रता के प्रतिपादक थे। उनको यदि दलितों के लिए समर्पित भाग्यवादिता भी कहा जाए तो अतशयोक्ति नहीं होगी। उनका समग्र जीवन दलितों के

लिए समर्पित था। उन्होंने सदा ही प्राचीन अन्यायी और ढोंगी व्यवस्था के प्रति विद्रोह का स्वर ऊँचा किया। उनका जन्म १८९१ में हुआ। उनकी मान्यता थी कि "अस्पृश्यता राष्ट्रीय प्रश्न है, उसे मानवीय मूल्यों से तोलना चाहिए। अस्पृश्यता से भारतीय एकात्म जीवन खंडित हुआ है, जाति व्यवस्था के निर्मूलन के सिवा देश संपन्न और समृद्ध नहीं होगा ।

हिंदू समाज को समता के नींव पर पुनर्गठन होने की आवश्यकता है। चातुर्वर्णों की दीवारें गिराकर एक वाणी समाज में सच्चा राष्ट्र पालता है।"५३ वे दलित समाज को अपना उद्धार करने की नई दृष्टि देनेवाले महान दलित नेता थे। उन्होंने दलितों के दुःखों को वाणी देने के लिए सन् १९२० ई. में 'मूकनायक' नाम का साप्ताहिक अख़बार चलाया।२ जुलाई १९७४ ई. में 'बहिष्कृत हित कारणी सखा' नाम संगठन की बंबई में स्थापना की और संगठनात्मक मार्ग अपनाकर दलितोद्धार आन्दोलन शुरु किया। इससे दलित समाज में स्वाभिमान और महात्वाकांक्षा का निर्माण हुआ। आगे चलकर राजश्री शाहु महाराज से सहायता मिलने पर अम्बेडकर के कार्य को विशेष गति मिली।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने 'प्रथम गोलमेज़ परिषद्' में भारतीय दलितों का प्रतिनिधित्व किया और, दलितों की माँगे पेश की। इसी तरह द्वितीय गोलमेज परिषद में भी उन्होंने अपनी कुछ शेष माँगें पेश की।५४ डॉ. अम्बेडकर के आदोंलन की विशेषता यह है कि इसने हिन्दू व्यवस्था के विरुद्ध 'सीधी कार्यवाही' (डायरेक्ट एक्शन) के रुप में खुला विरोध किया।५५ ऐसे उन्होंने कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह महाड सत्याग्रह, मुखडे ग्राम का सत्याग्रह रामकृष्ण प्रवेश सत्याग्रह, रामरथ उत्सव विषयक सत्याग्रह आदि माँगों से रूढि प्रिय हिन्दू समाज को दलितों को उपेक्षित बहिष्कृत ज़िंदगी का नग्न यथार्थ रुप दिखा कर उनके लिए समान हक़ों की माँग की।

डॉ. अबेंडकर ने दलितों की अनंत यातनाओं को दर्दभरी पशुवत दशा पर विचार करके भेद-भाव, ऊँच-नीच और जात-पाँत की भेद नीति का त्याग करने के लिए हिन्दू समाज को बार-बार ललकारा। परंतु इस ललकार का भी प्रचार नहीं हुआ तो जैसा कि पहले कहा जा चुका है सन् १९३५ ई. में उन्होंने अपने धर्मांतरण की ऐतिहासिक घोषणा

की 'मैं हिन्दू के रुप में जन्मा हूँ, पर हिन्दू के रुप में मरना नहीं ।"५६ बाद में १९५६ में उन्होंने बौद्ध मत स्वीकार कर दिया ।

स्वतंत्र भारत में एक दलित नेता और भारत के प्रथम विधि मंत्री बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर अपने उत्तरदायित्व को कभी नहीं भूले । इसलिए वे सरकार की सख्त आलोचना भी करते रहे । उनके दबाव के कारण ही भारत सरकार ने सन् १९५३ ई. में अस्पृश्यता अपराध कानून स्वीकृत किया ।५७

साहित्य के क्षेत्र में भी बाबा साहब अम्बेडकर ने जीवनवादी और यथार्थवादी भूमिका निभाई । वे साहित्य को समाज और मानव की उन्नति के माध्यम के साथ-साथ नीतिमंत्र का भी पोषक मानते थे । बाबा साहब को विषमता का समर्थन करनेवाला साहित्य मान्य नहीं था । साहित्य के प्रति उनका दृष्टिकोण मानवतावादी था । इसीलिए डॉ. अम्बेडकर से प्रेरित दीन साहित्य ने मनुष्य को केन्द्र माना है तथा मनुष्य की स्वतंत्रता की घोषणा की है । मानव मुक्ति को प्रोत्साहित करनेवाला वंश वर्ण और जाति की श्रेष्ठता का कठोर विरोध करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य होता है । बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के अनुसार जो संस्कृति, समाज या साहित्य मनुष्य को लघु बनाए उसके विरुद्ध विद्रोह होना ही चाहिए । यह विद्रोह अम्बेडकरवादी विचार प्रणाली का अविभाज्य अगं है ।५८ अतः यह कहना सत्य को दुहराना मात्र है कि दलित साहित्य की प्रेरणा अबेंडकर दर्शन में निहित है ।

उपर्युक्त चर्चा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि डॉ.बाबासाहब अबेंडकर के प्रयासों से ही दलितों की पतनोन्मुखी अवस्था में सुधार आया । दलित साहित्य के लिए उनके विचार प्रेरणास्त्रोत हैं । दलितों को जाग्रत करने के लिए डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर ने जो नारा दिया 'दास को आभास करा दो कि वह दास है, तभी वह विद्रोह करेगा। उसके अनुसार सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में दलितों के विद्रोह के चिंगारियाँ उत्पन्न हुई, जो धीरे-धीरे लपटें बन गयी ।"५९

## १.४.४ महात्मा गाँधीजी के दलित विषयक चिंतन:

बीसवीं शताब्दी के राष्ट्रीय आदोंलन का नेतृत्व आधुनिक युग महानतम मनुष्य महात्मा गाँधीजी ने किया था। उन्होंने भारतीय समाज की इस विराट सच्चाई को अच्छी तरह समझ लिया था कि जब तक नीच और अस्पृश्य समझी जानेवाली बहुसंख्य जनता को सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार नहीं प्रदान किया जाता तब तक किसी भी प्रकार की सामाजिक और राजनैतिक क्रांति सफल नहीं हो सकती। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यता निवारण या अछूतोद्धार का आदोंलन चलाया और अपने ग्यारह सूत्री रचनात्मक कार्यक्रम के अतंर्गत रखकर राष्ट्रीय स्वतंत्रता आदोंलन के एक हिस्से के रुप में ही प्रचारित प्रसारित किया।

गाँधीजी के इस आदोंलन की एक बड़ी सीमा यह थी कि अस्पृश्यता की समस्या को जब उन्होंने हाथ में लिया और उसके ख़िलाफ़ लडाई शुरु की तब उन्होंने ख़ुद अस्पृश्यों से अपने मानवीय अधिकारों के लिए उसमें शामिल होने के लिए नहीं कहा क्योंकी उस समय अस्पृश्यों की दशा अत्यंत दयनीय थी। वे अपनी हीन दशा को विधाता का विधान ही मानते थे। संभावता इसीलिए गाँधीजी ने अस्पृश्यता निवारण के लिए आवश्यक सभी तरह के बलिदान के लिए सवर्ण हिन्दूओं का आवाहन किया।

उन्होंने कहा कि ऐसा करके हम, हमारे पूर्वजों ने सदियों से अस्पृश्यों के साथ जो भी अन्याय किया है, सबका देर से ही सही पर कुछ तो प्रायश्चित कर ही सकेंगे। इसके साथ ही महात्मा गाँधीजी ने दलितों की हीन दशा देखकर उन्हें उद्धार के संघर्ष से दूर रखा। उन्होंने अस्पृश्यता को हटाकर दलितों को न्याय समता, प्रतिष्ठा करने के लिए जो भी किया उसके लिए दलितों को कभी उकसाने या जगाने का प्रयत्न नहीं किया। शतिं और दया से लोगों का हृदय परिवर्तन ही उनका मार्ग था। २५ मई १९१५ ई. को महात्मा गाँधीजी ने अहमदाबाद में 'सत्याग्रहाश्रम' की स्थापना की, जिसकी विशेषता सामुदायिक धार्मिक जीवन था।"६०

"महात्मा गाँधीजी के जीवन में दलितोद्धार के संदर्भ में अग्रेंजों के 'जाति निर्णय' को असाधारण महत्व प्राप्त हुआ, क्योंकि उसके विरोध में किए महात्मा गाँधीजी के

अनशन से अग्रेंजों को दलितों के लिए स्वतंत्र मतदान संघ देने का निर्णय बदलना पड़ा। दलितों के लिए अलग मतदार संघ देने अग्रेंजों के 'जाति निर्णय' के विरुद्ध उन्होंने आमरण अनशन की धमकी दी और अनशन प्रारंभ भी हुआ।"६१ बाद में महात्मा गाँधीजी ने स्वयं दलितोद्धार के लिए 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की।

गाँधीजी ने दलितोद्धार कार्य के लिए स्वयं को समर्पित किया। उसके लिए उन्होंने 'हरिजन' नाम का अग्रेंजी साप्ताहिक ११ फरवरी सन् १९२३ ई से शुरु किया और देश भर में घोर यात्राएँ की। इससे दलितों को उन हजारों मंदिरों में प्रवेश प्राप्त हुआ जिन पर पहले उनकी छाया तक पड़ना वर्जित था। इसी प्रकार विद्यालय, उपहारग्रह और पनघटों पर भी उनका निषेध समाप्त हुआ। आगे इस कार्य को व्यवस्थित आकार देने के लिए गाँधीजी ने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। महात्मा गाँधीजी की कार्य प्रणाली अपने आपमें एक दम भिन्न थी। वे सत्याग्रह और हृदय परिवर्तन में विश्वास रखते थे। तथा दलितोंद्धार के लिए यही मार्ग अपनाया। उनका यह मार्ग डॉ. अम्बेडकर के उग्र मार्ग से एकदम अलग था। इसीलिए महात्मा गाँधीजी की दलित सेवा को बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने ढोंग ही समझा।६२

"महात्मा गाँधीजी ने जिस प्रकार अग्रेंजी शासन को उखाडकर फेंकने के लिए शक्ति लगाई उसी तरह असृश्यता का निवारण करने के लिए स्पृश्य (सवर्ण) समाज के विरुद्ध उन्होंने विद्रोह नहीं किया। यह आरोप बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने महात्मा गाँधीजी पर लगाया। यहाँ यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि महात्मा गाँधीजी की नीति समाज कल्याण की दृष्टि से सामंजस्यवादी थी। इस लिए उन्होंने दलित सेवा में खास दलितों का पक्ष नहीं लिया होगा। फिर भी उन्होंने अस्पृश्यता को हटाने के लिए जो तपस्या की मोल शब्दों के परे हैं।"६३ दलितवादी विचारण यह मानते हैं कि महात्मा गाँधीजी का हरिजन आदोंलन किसी गंभीर अर्थवक्ता से प्रेरित नहीं था। उसके मूल में जाति समस्या का कोई हल नहीं था। यह महात्मा गाँधीजी का हिंदू समाज व्यवस्था से दलित वर्ग को जोडे रखने का प्रयास था। दूसरी ओर दलित वर्ग समाज व्यवस्था में मूल परिवर्तन चाहता था। इसलिए महात्मा गाँधीजी का हरिजन आदोंलन दलित चिंतकों की दृष्टि में सफल प्रतीत नहीं होता।६४ इसे दृष्टिकोण का अतंर भी कहा जा सकता है। परंतु यह सच है कि महात्मा गाँधीजी का दलितों को सम्मानजनक स्थान दिलाने में और उन्हें क्रमशः जागरुक

बनाने में बहुत बड़ा योगदान है।

## १.५. दलित साहित्य का स्वरुप:

दलित साहित्य का स्वरुप अपने आपमें बड़ा ही सुंदर और आकर्षणीय बना है। इसके पीछे महान तपस्वी डॉ. बाबा साहब अबेंडकर का ही महत्वपूर्ण भूमिका रही है। दलित साहित्य में इन्ही विचारों के बारे में ज़िक्र है जो सामाजिक शोषण पद्धति के विरोध, विद्रोह व्यक्त करता है। अस्पृश्यता, दैनंदिन जीवन में सामाजिक विरोध आर्थिक, सांस्कृतिक अन्याय का नाश करनेवाला हथियार ही दलित साहित्य है।

दलित साहित्यकारों ने समय-समय पर समाज के उच्चवर्ग के लोगों ने निम्न वर्ग के ऊपर किये जानेवाले विभिन्न प्रकार के अन्यायों को कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा, कविताओं के माध्यम बनाकर सामाजिक बुराईयों का भेद खोला है। समाज में पीने का पानी और मंदिर प्रवेश को लेकर मानवीयता को नकारनेवाला हिन्दू धार्मिक परंपरा का विरोध तथा समानता का अविष्कार, नाटकों तथा अन्य साहित्यिक विधाओं के माध्यम से जनमानस में परिवर्तन लानेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है। बाल कृष्ण कवठेकर का कहना है- "दलित साहित्यांदोलन महाराष्ट्र के सांस्कृतिक जीवन में अपूर्व और असामान्य महत्व की घटना है। हज़ारों वर्षों से मूक बने दलितों के अंतःकरण की व्यथा और वेदनाएँ आदोंलन के कारण ही इसे शब्द रुप प्राप्त हुआ है। इससे मराठी साहित्य को एक नई शक्ति प्राप्त हुई है।६५

मराठी दलित साहित्य का स्वरूप और हिन्दी दलित साहित्य का स्वरुप इन दोनों साहित्य को पड़ने से पता चलता है कि मराठी हिन्दी साहित्य से हटकर दिखता है। हिन्दी या मराठी कहानी का आशय जिस प्रकार अलग है, उसी प्रकार दलित साहित्य में उपन्यास, नाटक, आत्मकथा, कहानी आदि के पात्र दरिद्रता में जीनेवाले और संघर्षमय जीवन के बाद समाज में सम्मानजनक जीवन प्राप्ति के अभिलाषी होते हैं।

दलित साहित्यकार ने अपनी बोलचाल की भाषा को ही साहित्य सृजन के लिए

उपयोग किया है। इस कारण साहित्य सृजन ही उनके विद्रोह की ताक़त बनी है। हिन्दी दलित साहित्यकार बुद्धशरण हंस जी का कहना है- "दलित साहित्यकारों द्वारा दलित साहित्य लिखना उनका अभिमान है। ग़ैर दलित साहित्यकारों द्वारा दलित साहित्य की रचना करना एक फैशन और प्रदर्शन है।"६६ दलित साहित्य हिंदू संस्कृति को नकारने के कारण ही इसकी प्रकृति अन्य साहित्य से भिन्न है। बुद्धिवादी, विज्ञानवादी दृष्टि को स्वीकार करने के कारण यह संत साहित्य से भी हटकर दिखता है। दलित साहित्य का चित्रण अन्य साहित्य के अतंर्गत श्रीमंत और मध्यवर्गीय पात्रों को ही ज्यादा लिया जाता है। किंचित ही निम्न वर्ग के पात्र दिखाई देते हैं। परंतु दलित साहित्य में अधिकतम निम्नवर्ग का ही बोलचाल दलित साहित्य में अधिकतर यह देख सकते हैं कि वर्ग का ही बोलचाल होता है।

दलित साहित्य का नायक भी दलित ही होता है, स्वतः पर बीती तथा सत्य घटनाओं के अनुभवों को ही दलित साहित्य में ढाला जाता है। इसलिए दलित साहित्य का स्वरुप पारंपरिक भारतीय साहित्य से हटकर दिखाई देता है और साहित्यिक क्षेत्र में इसकी अलग ही पहचान होती है। यह साहित्य उभरकर आँखों में खटकने लगा है। जिस प्रकार एक अच्छी वस्तु पर सभी के निगाहें टिकी होती हैं; उसी प्रकार दलित साहित्य पर भी अन्य साहित्यकारों की निगाहें रुकी हुई हैं। समस्त भारत में दलित साहित्य उभरकर आ रहा है।

इस विषय में कमलेश्वर का कहना है कि "जातीय स्वाभीमान को छोड़कर इस साहित्य में भारत के दलित और वंचित मनुष्यों की अस्मिता की आवाज़ है।"६७ कमलेश्वर के विचारानुसार दलित साहित्य किसी जाति के लिए सीमित नहीं है। यह मानवीयता को नकारने के विरोध में संघर्ष करने की चेतना मात्र समझते हैं। विषमतावादी समाज रचना और प्रस्थापित अन्यायपूर्ण जाति व्यवस्था का नाश करके पारंपरिक साहित्य के विरोध न्याय का बिगुल बजाना और दलितों को न्यायिक आदोंलन पर उतारने का प्रमुख कार्य ही दलित साहित्य का हेतु है। ऐसी दशा में ही दलित साहित्य का स्वरुप सिद्ध होता है।

## दलित परिवेश का विवरण:

### १) हरिजन:

"कुछ देर के बाद ही मुख्य सड़क से एक कुंकीट बिछी सड़क नज़र आयी, जीप इस पर मुढ़ गई थी। थोडी दूर तक गाँव नज़र आ रहा था। गाँव के किनारे ही एक बड़ा मंदिर था थोडे आगे सड़क के बाँयी ओर बडे पीपल के पेड़ के पास ही बड़ा सा तालाब था, जिसमें भैंसें पड़ी नज़र आ रही थीं। गाँव में एक पुलिस का काफ़िला देखकर कुछ लोग चौंक कर देखने लगते थे। प्रेम ने देखा छोटे बच्चे तो घबराकर कच्चे घरों में जा छिपे थे। देखने में गाँव काफ़ी बड़ा था। कुछ मकान पत्थर के बने थे, कुछ कच्ची मिट्टी के झोंपडे भी थे।"

इस अवतरण में गाँव का चित्रण दिखाया गया है। बड़े मकानों के साथ-साथ कच्ची मिट्टी की झोपडियों और तालाब में भैंसें आदि दृश्य एकदम यथार्थ परक है।

### २) अपना गाँव:

'लहमा' गाँव में लगभग एक हज़ार परिवार थे। जितना पुराना गाँव उतनी ही लंबी जडवाली फलती-फूलती शाखाओं की तरह रची बसी थी। परंपराओं रुढियों की गिरफ्त में फँसे गाँव तथा गाँववालों पर जाति भेद की अमिट छाप देखी जा सकती थी। गाँव दो हिस्सों में बँटा था। एक हिस्से में सवर्ण तथा दबंग जाति यानी बामन, बनिया, ठाकुर राजपूत, जात, त्यागी, यादव, गुजर, कामस्य तथा कुर्मी जाति के लोग रहते थे।

दूसरे में अवर्ण और निर्बल जातियाँ यानी चमार या चामड़ वाल्मीकि, खटीक, तेली, नाई, जुलाई, खटबुने मनियार आदि थे। एक हिस्से में गाय भैंस थी, दूध, दही, बड़े चौडे मकान, पलंग, मसहरी चांदी के बर्तन, पेंचदार हुक्के, दूसरे हिस्सों में टूटे-फूटे मकान झाँगोला हुई चारपाई, मिट्टी के हुक्के, पीतल, काँस के बर्तन। एक हिस्से की औरतें बीस-बीस मन की घाघरी पहनती, चाँदी के गोटे की चमकीली बॉर्डरवाली ओढ़नी दूसरे

हिस्से की औरतों को फटे-पुराने कपड़े ही नसिब होते थे। गाँव में मंदिर और कुआँ सवर्ण जातियों के हिस्से में ही था। एक जोहड़ जिसे गाँव के लोग तालाब भी कह देते थे। बड़ा पानी के नाम पर अवर्णों के हिस्से में था। जिसमें जानवर और आदमी एक साथ नहाते तथा पानी पीते थे। अवर्णों के खेत न थे। दलित जाति के लोग मज़दूरी करते थे। शमशान भूमि भी गाँव के दोनों हिस्सों में थी।

यहाँ लेखक ने लहमा गाँव का वर्णन किया है। इस गाँव में कई जातियों के लोग बसते हैं। सवर्ण, अवर्ण का भेद भाव स्पष्ट दिखता है। उनके कुएँ भी अलग-अलग हैं।

## प्रतिशोध:

आकांरेश्वर के सुंदर एकांत पहाड़ी प्रदेश में भी बस्तियाँ हैं। जीवन की हलचल है, उसका स्पंदन है और श्रम का पसीना बहाते हुए लोग जीवन का उज्वल इतिहास लिख रहे हैं। इस पहाडी क्षेत्र में आवागमन के साथ ही अन्य समस्याओं से लोगों का जीवन घिरा हुआ है। फिर भी वे जंगल में लहराती सोयाबीन और धान की फसल की सुंदरता ही मन को मुग्ध कर देती है। दूर-दूर तक फैले हुए हरियाली के अनंत साम्राज्य को देखते हुए आँखें बंद नहीं होती।

विविध कहानिकारों का उद्धेश्य इन कहानियों के माध्यम से दलित जीवन की त्रासदी का प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत करता है। वहीं दूसरी ओर दलित परिवेश-दलित जीवन और दलित मनोदशा का सहज संप्रेषणीय विवरण इन कहानियों का मुख्य अगं है। दलित कहानी की पाठ संरचना में विवरण प्रोक्ति का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है।

## पात्र विवरण

विभिन्न कहानियों के पात्रों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं -

## व्यंग्य का प्रयोग

जैसा कि पहले कहा जा चुका है दलित कहानियाँ दलित जीवन की त्रासदी, दलितों के आक्रोश तथा दलित क्रांति की संभावनाओं का रुपायित करनेवाली कहानियाँ हैं। इसी

कारण इन कहानियों में क्रोध भाव के साथ-साथ व्यंग्य का बहुत भारी मात्रा में मिलता है। यह व्यंग्य पाठक को एक आनंदानुभूति से आत्मपित करने के लिए नहीं बल्कि विकृति या विद्रूप के साक्षात्कार से बेचैन और सक्रिय बनाने के लिए है। दलित कहानी के संदर्भ शास्त्र का यह एक समक्ष और अनिवार्य पहलू है। इस संदर्भ में विवेच्य कहानियों की कथा भाषा में व्यंग्य प्रयोग के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

१)"दानी सवर्णों अवर्णों के मुर्दों की भी जात बनी रहती थी।"

२)"उस समय वह आठ साल का ही था। उसे आज भी याद था... लंबी अधेंरी बरादरी में चलते उसने सामने के मंदिर में शंख और घंटियों का शोर सुना था। जैसे पूरे माहोल में भगवान आ विराजे हैं"।

३)"उन दिनों प्रौढ़ शिक्षा का बड़ा हल्ला था। बूढ़े तोते रात की गैस बत्ती की रोशनी में रामगति तोतिया पढ़ते थे"।

४)"काले जामुन सी फुल तोडती देवी सुविधाओं के झरने के नीचे रोज नहाती गुलाब बन चुकी थी और इस गुलाब को अपनी अचकनों में निर्मल लाल से ना ज्यादा अधिकार से मंत्री जगत लाल टँक सकता था"।

५)"मन ही मन वह बुदबुदाया साला गाँधीवादी बना फिरता है और यहाँ रात को धरती के धर में सोता है"।

६)"अरे यार, मुर्दा जब बोलेगा तो कब्र फोडेगा" क्रील साहब झुँझलाते हुए बोले"

इस प्रकार हिंदी दलित कहानियों की कथा भाषा की जो विशेषताएँ उपर्युक्त सोदाहरण विवेचन, विश्लेषण से उभरकर सामने आयी है। उनमें सबसे प्रमुख तो यह है दलित कहानिकारों ने दलित जीवन के विषय यथार्थ को मारक अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए साधारण बोलचाल की भाषा को अपनाया है। इसके लिए उन्होंने जहाँ एक ओर तदभव, देशज और बोलीगत शब्दों का चयन किया है, वही लोक जीवन में बहुप्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों का सफल प्रयोग किया है। इन कहानियों के भाषिक सौंदर्य का पहलू यह है कि इनमें अप्रस्तुत विधान वास्तविकता का बोध लिए हुए हैं। इसी प्रकार

विविध स्थितियों, पात्रों और मनोभावों के विवरणों में भी दलित वातावरण और दलित मानसिकता का प्रभावशाली अकंन हुआ है।

इन लेखकों ने मिथकों की नई व्याख्या की है और सवर्ण जीवन शैली और मानसिकता पर व्यंग्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए उन्होंने गालियों के चयन में भी कोई संकोच नहीं किया है। अतः कहा जा सकता है कि दलित कहानी की कथा भाषा पूर्णतः दलित सौंदर्यशास्त्र के अनुरुप है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि दलित साहित्य का सौदर्यशास्त्र दलित कथा भाषा के इन विशेषताओं के आधार पर ही निर्मित किया जा सकता है जिसमें लालित्य के स्थान पर दलित की प्रमुखता है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :**


१. बृहत हिन्दी कोश, पृ. सं. ५१०.

२. डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन'-युद्धरत आम आदमी, १९९८, पृ. सं. १४.

३. कैवल भारती - युद्धरत आम आदमी, १९९८, पृ. सं. ४२.

४. हिन्दी साहित्य कोश - भाग एक, पृ. सं. २८४.

५. अमप्रकाश वाल्मीकि- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. १४.

६. वही, पृ. सं. १४.

७. डॉ. आर. प्रेमानंदन- तेलगु साहित्य में दलित चेतना, स्रवंति, अक्तूबर, २००५, पृ. सं. २५.

८. डॉ. बलवंत साधु जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. २२.

९. अमप्रकाश वाल्मीकि- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. १

१०. वही, पृ. सं. १५.

११. डॉ. अम्बेडकर-जीवन और विधान, एल. आर. वाली, पृ. सं. २८५.

१२. डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी - दलित साहित्य सृजन के संदर्भ, पृ. सं. १७.

१३. वही, पृ. सं. १७.

१४. अमप्रकाश वाल्मीकि - दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. १५.

१५. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित, पृ. सं. २९.

१६. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं.३८.

१७. जयप्रकाश कर्दम- दलित साहित्य, १९९९ संपादक, पृ. सं. ३२.

१८. ओमप्रकाश वाल्मीकि-दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. १५.

१९. डॉ. दयानंद बटोही- साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. २७.

२०. डॉ. दयानंद बटोही- साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३४.

२१. रमणिका गुप्ता- दलित कहानी संचयन, पृ. सं. १०.

२२. डॉ. कुमुद पाटील- दलित साहित्य रचना और विचार, पृ. सं. ४४.

२३. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ५४-५५.

२४. बुद्धशरण सिंह- दलित साहित्य रचना और विचार, पृ. सं. ५०.

२५. वही, पृ. सं. ५०.

२६. डॉ. ठाकुर प्रसाद 'राही'-दलित साहित्य रचना और विचार, पृ. सं. २८.

२७. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. १७-१८.

२८. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. १३-१४.

२९. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. १३.

३०. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. १९.

३१. वही, पृ. सं. १९.

३२. वही, पृ. सं. २०.

३३. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. २०.

३४. वही, पृ. सं. २२.

३५. वही, पृ. सं. २३.

३६. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. २४.

३७. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. सं. २४.

३८. डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी- दलित साहित्य सृजन के संदर्भ, पृ. सं. २३.

३९. डॉ. दयानंद बटोही- साहित्य और सामाजिक क्रांति, पृ. सं. १८.

४०. डॉ. शरणकुमार लिम्बाले- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. ८१.

४१. डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी - दलित साहित्य सृजन के संदर्भ, पृ. सं. २४.

४२. डॉ. जयप्रकाश कर्दम- संपादित दलित साहित्य, २००१, पृ. सं. २५.

४३. देवेन्द्र चौबे- हिन्दी दलित साहित्य : एक पृष्ठभूमि, पृ. सं. १४९.

४४. जिरजी कटारिया- शब्द थके जरुर हैं, पृ. सं. ६३.

४५. अमप्रकाश वाल्मीकि-दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. ५३.

४६. वही, पृ. सं. ५४.

४७. डॉ. राजकुमार अहिरवार- दलित साहित्य, पृ. सं. ५२.

४८. डॉ. शरण्कुमार लिंबाले-दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. सं. ४७.

४९. वही, पृ. सं. ४८.

५०. डॉ. बलवंत साधू जाधव - प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३०.

५१. वही, पृ. सं. १०.

५२. कँवल भारती – दलित विमर्श की भूमिका, पृ. सं. ५३.

५३. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ४०-४१.

५४. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ४१.

५५. कँवल भारती - द्रलत विमर्श की भूमिका, पृ. सं. ५८.

५६. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ४१.

५७. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ४१.

५८. डॉ. शरणकुमार लिंबाले- दलित साहित्य का सौदर्यशास्त्र, पृ. सं. ५५.

५९. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ४२.

६०. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३६-३७.

६१. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३७.

६२. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३७.

६३. डॉ. बलवंत साधू जाधव- प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, पृ. सं. ३७-३८.

६४. कँवल भारती - दलित विमर्श की भूमिका, पृ. सं. ६४-६५.

६५. बालकृष्ण कवठेकर- दलित साहित्य का एक संकलन, पृ. सं. ११.

६६. डॉ. पुरुषोत्तम सत्य प्रेमी- दलित साहित्य रचना और विचार, पृ. सं. ५१.

६७. रत्नकुमार संभारिया- दलित कहानी संचयन, पृ. सं. १०३.

## द्वितीय अध्याय

# समकालीनता : परिभाषा एवं स्वरूप

प्रस्तावना

२.१ समकालीनता का अर्थ एवं परिभाषा

२.२ समकालीन कहानी का क्षेत्र

२.३ समकालीन कहानी : युगीन संदर्भ

## प्रस्तावना

समकालीन हिंदी कहानी का जो वास्तव में अर्थ है, संरचना तथा इतिहास माना जाता है, और वह कई तरह के विचार-विमर्श,अनुभवों तथा जन आन्दोलनों से निर्मित एक समकालीन यथार्थ है। जिस तरह से प्रेमचंद के समय की कहानी को समझने के लिए गाँधीजी के स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ-साथ भगत सिंह के क्रांतिकारी आन्दोलन तथा डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर के दलित आन्दोलन को एक विशेष कालखण्ड में उभरे रचनात्मक यथार्थ के रूप में पर खना जरै ठीक उसी के तरह समकालीन कहानी को भी समझने के लिए एक प्रचुर कालखण्ड में निर्मित यथार्थ तथा उसके मुख्य कारकों भी समझना जरूरी है। जैसे- की सन् १९६० के बाद के स्त्री आंदोलन, डॉ बाबासाहेब अंबेडकर के प्रभाव में महाराष्ट्र के साथ-साथ देश के अनेक भागों में शुरू हुए दलित क्रांतिकारी आंदोलन, १९६७ से जन्मे नक्सलवाद, १९९० के आसपास आर्थिक उदारीकरण, भूमंडलीकरण, बाबरी मस्जिद के ध्वंस अनेक सन्दर्भों ने समकालीन हिंदी कहानी की संरचना को निर्मित किया हैं।

## २.१ समकालीनता का अर्थ एवं परिभाषा

समकालीन शब्द एक कालवाचक संज्ञा है, प्रत्यय है। समकालीन का सतही अर्थ है एक ही समय में रहनेवाला या समान युग में रहनेवाला, यह अग्रेंजी के कान्टेम्पोरेरी (Contemporary) का हिन्दी पर्याय है।

"समकालीन शब्द 'सम' उपसर्ग तथा 'कालीन' विशेषण के योग से बना है। 'सम' उपसर्ग का प्रयोग प्रायः 'एक ही' अथवा 'एक साथ' के अर्थ में होता है। 'कालीन' का यहाँ अर्थ है काल में अथवा समय में। अतः समकालीन का सामान्य तथा शब्दिक अर्थ एक ही समय में होने या रहनेवाले के रुप में स्पष्ट होता है।" मानक हिन्दी कोश में इस प्रकार अर्थ दिया गया है। जो उसी काल या समय में जीवित अथवा वर्तमान रहा हो, जिसमें कुछ और विशिष्ट लोग भी रहे हो। एक ही समय में रहने वाले। जैसे महाराणा प्रताप अकबर के समकालीन थे।"१ "नालन्दा विशाल शब्द सागर के अनुसार 'समकालीन' शब्द का अर्थ है, जो एक ही समय में हुए हो।"२

शिक्षार्थी हिन्दी शब्दकोश में इसका अर्थ "एक ही समय का, सामयिक रुप में,"३ के द्वारा स्पष्ट हुआ है। उसे साहित्यिक सन्दर्भ में एक ही कालखण्ड में होने वाली घटना या प्रवृत्ति अथवा एक ही कालखण्ड में रहने वाले व्यक्तियों अथवा रचनाकारों के अर्थ में प्रयुक्त किया जा सकता है।

हिन्दी में 'समकालीन' और 'समसामयिक' शब्द अपने मूल अर्थ में अग्रेंजी के 'कन्टेम्पोरेरी' तथा कोइवल (Co-eval) शब्द पर्याय के रुप में प्रयुक्त हुए हैं। "अग्रेंजी भाषा के 'कन्टेम्पोरेरी' शब्द के लिए हिन्दी में दो पर्यायों 'समकालीन' और 'समसामयिक' का प्रयोग होता हैं।"४ डॉ. कामिल बुल्के के अग्रेंजी कोश में दोनों शब्दों को इसके पर्याय के रुप में बताया गया है। वास्तव में अग्रेंजी 'कान्टेम्पोरेरी' शब्द का अर्थ एक ही समय में रहने या होने से है,यही अर्थ हिंदी में समकालीन शब्द से ध्वनित होता है। पश्चिम में कन्टेम्पोरेरी (Contemporary) तथा को-टेम्पोरेरी शब्द विवाद का विषय रहे हैं।

इसके विस्तार में जाना यहाँ अपेक्षित नहीं है। आज 'कान्टेम्पोरेरी' शब्द को ही इस सन्दर्भ में मान्यता प्राप्त है। "यद्यपि एक ही समय में होने वाले व्यक्तियों या रचनाकारों को समकालीन कहा गया है, किन्तु व्यवहार में ऐसा समकालीनता का सीधा सम्बंध समसामयिकता से है। वह रचना समकालीन कही जाएगी जो अपने समय के बोध को व्यक्त करे। परिवर्तनशील सामाजिक यथार्थ को रचनात्मक माध्यम से व्यक्त करने वाला रचनाकार ही समकालीन माना जाएगा। अतः एक ही समय में रह रहे अथवा रचनारत सभी लेखक समाकालीन हो यह अनिवार्य नहीं हैं।"५

मात्र सामयिक होना या एक ही समय में विद्यमान रहकर कला-सृजन करना 'समकालीन' नहीं कहा जाएगा। डॉ. सुखबीर सिंह के अनुसार "समकालीनता का अर्थ समसामयिकता नहीं होता है। तात्कालिकता से इसका अर्थ लेने से भी इसके अर्थ का बहुत संकोच हो जाता है। वस्तुतः समकालीनता एक व्यापक एवं बहुआयामी शब्द है और आधुनिकता का आधारतत्व है। जो समकालीन है, वह आधुनिक भी हो, यह आवश्यक नहीं हैं किन्तु जो आधुनिक चेतना से संवलित दृष्टि है। वह निश्चित रुप से समकालीन भी होती है।"६

श्री कल्याण चन्द्र लिखते हैं, "समसामयिक और समकालीनता में अन्तर है। एक समय में रहना और एक कालखण्ड को जीना दोनों अलग-अलग स्थितियाँ हैं। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि आज भौतिक रुप में जो भी जहाँ उपस्थित है, वह समकालीन भी हो, जब कि सम-समसामयिकता केवल आसपास के परिवेश में उपस्थिति मात्र है।"७ वास्तव में प्रत्येक युग अपने समय की परिस्थितियों से, परिवेश से संबद्ध रहता है और इस संबद्धता के कारण ही जाना-पहचाना जाता है।

परन्तु इसमें कुछ तत्व ऐसे होते हैं जो युग परिवर्तन के साथ पीछे छूट जाते हैं क्योंकि उनका महत्व उस समय तक ही होता है और आगे चलकर बदलते परिवेश में व्यर्थ लगने लगते हैं। जब किसी कला में स्थायी जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा होती है तब वह कला अपने

युग के लिए तो महत्वपूर्ण होती ही है, साथ ही परवर्ती युग के लिए भी उसका महत्व बना रहता है। इस प्रकार "समकालीनता में वर्तमान बोध के साथ ही अतीत और भविष्य का विवेकसम्मत बोध होता है। यह विशिष्ट वर्तमान बोध ही समकालीनता को अभिव्यक्ति देता है।"८

काल के प्रवाह में अपने समय को पहचानता अपने समय के प्रति ईमानदार होना ही 'समकालीनता' की निशनी है। समकालीनता 'युग सन्दर्भों में प्रासंगिक तो होती ही है साथ ही आधुनिक जीवन मूल्यों से भी जुड़ती जाती हैं। समकालीन शब्द इस बात का सूचक है कि प्रस्तुत कला समसामयिक संदर्भों से जुड़ी हुई है, साथ ही यह युग, विशष के संदर्भों के अनुसार बदली हुई चेतना या मानसिकता की भी द्योतक है। स्थायी जीवन मूल्यों की उपस्थिति के कारण यह कला काल की सीमाओं को भी छू जाती है। समकालीनता की इस परिभाषा के आधार पर समकालीन हिन्दी कहानी से हमारा तात्पर्य उस कहानी के क्रियाकलाप से है जिस में युगीन संदर्भों के अनुसार एक नयी कहानी का आविर्भाव भाव दिखाई देता है।

विश्वम्भरनाथ उपाध्याय के विचारानुसार "समकालीन शब्द यह बताता है कि काल के इस प्रचलित खंड या प्रवाह में मनुष्य की स्थिति क्या है इसे उलटकर कहें तो कह सकते हैं कि मनुष्य की वास्तविक स्थिति को देखकर उसे अकिंत या चित्रित करके ही हम समकालीनता की अवधारणा को समझ सकते हैं।"९ लेकिन हमारे आधुनिक भारतीय साहित्य में 'समकालीन' पद का प्रचलन नयी कविता और नयी कहानी के बाद के रचना संदर्भों को लेकर हुआ है।

अतः सुरेन्द्र चौधरी के विचारानुसार "समकालीनता देशकाल से संबद्ध है यानी ऐतिहासिक है यानी काल विशिष्ट है, सामयिक संदर्भ मानवीय प्रसंग है, राजनीति को भावबोध कहानी में रुपांतरित किया जाता है। ऐतिहासिक दबाव भी है, विरोधपक्ष को देखा समझा है इसके बिना समकालीनता नहीं हो सकती है। समकालीन साहित्य को हमने अपनी आँखों से बनते देखा है एक बड़ी परम्परा को देखा है और उभरती नयी पीढ़ी को जो सृजन और संवेदना का नया उत्साह लेकर आई।"१० नरेन्द्र मोहन के विचारानुसार 'समकालीन' का अर्थ किसी कालखंड या दौर में व्याप्त स्थितियों और

समस्याओं का चित्रण भर नहीं है बल्कि उन्हें ऐतिहासिक अर्थ में समझना उनके मूल स्त्रोत तक पहुँचना और निर्णय ले सकने का वितर्क अर्जित करना है । समकालीनता तात्कालिकता नहीं है ।"११

गंगा प्रसाद विमल समकालीनता को एक प्रत्यय मानते हुए भी रचनाकारों की समानधर्मिता को वैचारिक स्तर पर महत्व देते हुए कहते हैं कि "समकालीनता का अर्थ यह नहीं है कि दो व्यक्ति एक विशेष काल खंड में रहे और संयोग से वे रचनाशील भी हो । जिस समकालीनता की बात की जा रही है , उसका शब्दार्थ की धारणा से सम्बन्ध नहीं है, अपितु वह जीवन बोध के आधार पर समानधर्मी रचनाकारों के बोध की समानधर्मिता है ।"१२

वेद प्रकाश अमिताभ के विचारानुसार "समकालीनता शब्द वस्तुतः आधुनिकता का लघुरुप है तथा एक विशिष्ट समय से सम्बन्ध है लेकिन समकालीन कहानी में और उम्र का इतना महत्व नहीं है, जितना समान दृष्टि का हैं । अतः इसकी समान जीवन दृष्टि वाले व्यक्ति है कहानीकार । समकालीन कहानीकार कहे जा सकते हैं जो समानस्तर पर आज के जीवन की विसंगतियों विकृतियों और संत्रास को झेल रहे हैं ।"१३

समकालीन भावबोध में परिस्थितियों को देखने का एक विशेषकोण होता है इस संबंध में दूधनाथ सिंह का कथन है- "समकालीनता का अर्थ है परिवर्तनों और परिस्थितियों के सही कोण से देखने का आग्रह ।"१४ लेकिन दूधनाथ सिंह के उपर्युक्त विवेचन एवं विश्वम्भरनाथ उपाध्याय के अभिमत में तुलना की जाए तो विश्वम्भरनाथ उपाध्याय की समकालीनता की परिभाषा ज्यादा मान्य होगी ।

उनके अनुसार "समकालीनता एक काल में साथ-साथ जीना नहीं है । समकालीन अपने काल की समस्याओं और चुनौतियों का मुक़ाबला करना है । समस्याओं और चुनौतियों में भी केन्द्रीय महत्व रखनेवाली समस्याओं की समझ से समकालीनता उत्पन्न होती है ।"१५ समकालीनता राज्य सत्ता के विरोध में है, क्योंकि राज्य ही आम आदमी के हितों के विरुद्ध खासुल खास के स्वार्थों की पूर्ति में लगा हुआ है और इस प्रक्रिया का संगठित विरोध होने पर राज्य अपनी 'साम्राज्यवादी' परम्परा का उत्तराधिकारी होने के नाते, नृशसं दमन और जनोत्पीड़न का मार्ग अपना रहा है ।"१६ समकालीनता को

आधुनिकता का पर्याय माना जा सकता है, बशर्ते आधुनिकता संकीर्ण और कुत्सित भाव अपने दामन से अलगकर बेदाग हो जाये ।

अतः कहा जा सकता है कि आधुनिकता में कुत्सितता या संकीर्णता का कोई भी स्थान नहीं है, क्योंकि ये अवांछनीय है अमानवीय है, आधुनिकता अपने समय के स्वरूप की पकड़ और पहचान है । आधुनिकता के लिए मात्र विकल्प चुन लेना या निर्णय ही काफ़ी नहीं अपितु उसे हक़ीकत में बदलने के लिए संघर्ष करना भी आधुनिकता और समकालीनता का ही कार्य होता है। "साहित्यकार को अपने युगीन परिवेश और स्वरुप से गहरा तादात्म बोध का संबंध रहता है । परिवेश साहित्य में चित्रित होता है । एवं साहित्य परिवेश में अनेक परिवर्तनों का कारण बनता है ।"१७

कहानी का स्वरुप भी परिवर्तित परिवेश का यथार्थपरक अकंन रहता है । हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी कहा है कि "उपन्यास और कहानी के लिए (समसामयिक) यथार्थ प्राण है । उसके न रहने से उपन्यास व कहानी प्राणहीन वस्तु बन जाती है।"१८ परिवेश और युगीन स्वरुप से कटकर कोई भी साहित्यकार सच्चे व समर्थ साहित्य की रचना नहीं कर सकता । किसी भी युग के साहित्य को समझने के लिए उन्हे तत्कालीन परिवेश के संदर्भ में रखकर देखना ही उचित है । "साहित्य की किसी विधा के विकास को लेखकों और रचनाओं के नामों से समझा जा सकता है, प्रवृत्तियों से जाना जा सकता है, लेकिन सबसे सही तरीका उस परिवेश और पृष्टभूमि को पहले समझ लेना है जो लेखक के मानस-विश्व और लेखन की प्रवृत्तियों को निर्धारित करते हैं।"१९

कहानी के परिवेश पृष्टभूमि और क्षेत्र में तात्विक सम्बन्ध रहता है और अतंर भी प्रसंगवश समकालीन कहानी के क्षेत्र पर भी चर्चा आवश्यक होगी। समकालीन कहानी के पूर्व पक्ष नयी कहानी के रचनाकार ही विगत चालीस पचास वर्षों से रचना कार्य में सक्रिय रहे हैं । प्रायः हर नयी कहानी आन्दोलन अनहोनी हो या समांतर कहानी आन्दोलन, वामपंथी कहानी आन्दोलन हो या जनवादी आन्दोलन वह अपनी पूर्व परम्परा की कहानी से पार्थक्य जतलाने के लिए संवेदना अनुभूति यथार्थगत विसंगति के विचार क्षण कौंध की अभिव्यक्ति हेतु नये बिम्ब व प्रतीक भी सहेजता रहा है ।

देश-काल, युग-सापेक्ष सामाजिक आर्थिक राजनैतिक बदलाव भी कहानी के स्वरुप और अभिव्यक्ति पक्ष को कम प्रभावित नहीं करते हैं। वर्तमान दौर के स्त्री-विमर्श हो या दलित-विमर्श, आम आदमी की बहस हो या जनवादी परिदृश्य स्त्री मुक्ति के सवाल हो या स्त्री परिवर्तित संबंध इन सभी के सन्दर्भ समकालीन कहानी के विकास से जुड़े हैं। नयी कहानी समांतर कहानी और जनवादी कहानी पर आलोचनात्मक पुस्तकें उपलब्ध हैं पर समकालीन कहानी के विकास और स्त्री पर प्रामाणिक और गंभीर पुस्तक का अभाव महसूस होता है। अतः विवेच्य कार्य इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

## २.२ समकालीन कहानी का क्षेत्र

साहित्य जगत के इतिहास को देखे तो कहानी को सामाजिकता से जोड़ने का प्रयास प्रेमचंद ने किया। घीसू, माधव जैसे पात्रों का सृजन कर जीवन की वास्तविकताओं का साक्षात्कार प्रेमचन्द ने कराया और कहानियों को सामाजिकता से जोड़ कर जो भूमिका तैयार की उसमें सभी कथाकारों ने अपना-अपना योगदान दिया।

"आज़ादी के बाद मात्र सत्ता का हस्तांतरण हुआ। सत्ता विदेशी शोषकों के हाथ से निकल कर देशी पूंजीपतियों, पद लोलुप नेताओं के हाथों में आ गई और अपनी स्थिति को बनाये रखने के लिए आज़ादी के समय किये गये त्यागों को याद दिलाया और जनता को मूर्ख बनाया। ऐसी स्थिति में अवसरवादियों ने पर्याप्त लाभ उठाया और जनता का हक़ जनता को दिलाने के लिए अथक प्रयास किया। प्रेमचन्द ने जिस व्यापक सहानुभूति के साथ गाँवों से लेकर शहरों तक फैली दीन-हीन जनता के जीवन की विसंगतियों और संघर्षों का चित्रण किया, नये कहानीकारों ने उससे विमुख होकर भ्रष्टाचार में आकंठ निमग्न, महत्वाकांक्षी अवसरवादी एवं सुविधाभोगी मध्यमवर्ग को कहानी का केन्द्र बनाया।"२०

पूर्ववर्ती कथाकारों में "जैनेन्द्र और अज्ञेय, अश्क आदि की मनोवैज्ञानिक दार्शनिकता का पुरजोर विरोध करने वाले नई क्रान्तिकारिता का उद्घोष करनेवाले नये कहानीकारों ने पाश्चात्य परिवेश और पीड़ा को पात्रों के माध्यम से मुखरित करना आरंभ

किया । इनकी कहानियों में भाषायी शब्द जाल सामाजिकता के स्थान पर आत्मनिबद्ध वैयक्तिकता और समवेत राष्ट्रीय दिशा के स्थान पर भयानक निरुद्देश्यता की अभिव्यक्ति हो रही थी । कहानी को गाँव और 'शहर' की सीमाओं में बाँटकर उसकी व्यापक सामाजिकता को तोड़ने का प्रयास किया गया । कला कला के लिए साहित्य को विचारधारा से रहित करने के आग्रह ने सलिलता और सौष्ठव से भाषा को नया संस्कार दिया लेकिन वैचारिक स्तर पर उसे दिवालिया बना दिया ।"२१ समकालीन कहानी और समसामयिक कहानी में भी फ़र्क है ।

समकालीन कहानी का तात्पर्य उस कथा आन्दोलन से है जिसे कथा आन्दोलन के रुप में डॉ. गंगाप्रसाद विमल ने शुरु किया और एक नया तर्कजाल बुनकर अपनी विशिष्ट पहचान बनाने की कोशिश की । विमल जी के ही शब्दों में- "समकालीन कहानी रचना की कोई नयी विधा नहीं है, न ही नये लोगों का कोई रचनात्मक आन्दोलन इसे कहा जाना चाहिए, अपितु वे सभी रचनाकार जो कम से कम रोमांटिक भाव बोध तथा परम्परागत स्थिति से अलग है और कथा रचना में अपने समग्र नयेपन का आग्रह रखते हैं, समकालीन रचना के रचनाकार हैं ।"२२

सुधीजन जानते हैं कि भारतीय जन जीवन में स्वतंत्रता के पश्चात एक नए अनिश्चित और व्यापक उद्वेलनमय समाज का जन्म हुआ है, जो हर दिन अपना रुप स्वरुप बदल रहा है, प्राचीन और बूढी निष्क्रिय सांस्कृतिक परम्पराओं के लिए शिथिल और संस्कार परिवर्तित मूल्य का युग एक ऐसी पृष्टभूमि है जिसमें व्यक्तिमन एक विघटन विश्रृंखलता और टूटन महसूस करता है । हर सम्बंध टूटता सा संकटग्रस्त है या वह नए परिवेश के अनुकूल नविनकरण की प्रक्रिया पीड़ा झेल रहा है । व्यक्ति के अस्तित्व-बोध को स्वरुप और उसकी संवेदना की प्रकृति भी बदल गई है। शायद अन्तर्विरोध और जटिलता ही आज के युग की वास्तविकताएँ हैं । युग-जीवन की इसी जटिलता और अन्तर्विरोध से व्यक्तिमन की जटिलता और अन्तर्विरोध उपजे हैं और हमारे वैयक्तिक और सामाजिक सम्बन्धों में एक अन्तर्विरोधी, गुत्थीमय अंतद्वंद्व समा गया है ।"२३ जिसकी अभिव्यक्ति हम विभिन्न कहानियों में पाते हैं ।

समकालीन कहानी जहाँ मानवीय जीवन की आपाधापी संघर्ष चेतना और

परिवर्तित मूल्यबोध एवं स्त्री-पुरुष के नये मानमूल्यों से जुड़ी है वह निसन्देह पुरानी कहानियों से अलग है। वैसे भी आधुनिक कहानी पुरानी कहानी की तुलना में छोटी और संक्षिप्त होती है। पुरानी कहानी में अलौकिक और अति प्राकृत तत्वों की प्रधानता होती थी, आधुनिक कहानी लौकिक और जीवन के यथार्थ को महत्व देती है।

पुरानी कहानी चमत्कार और अविश्वसनीयता पर भरोसा करती थी, आधुनिक कहानी ने स्वाभाविकता और विश्वसनीयता का मार्ग अपनाया। पुरानी कहानी में कौतूहल, जिज्ञासा और उत्सुकता बनाए रखने के लिए अप्रासंगिक करतब भी हुआ करते थे, आधुनिक कहानी ने सहजता, प्रामाणिकता और जीवन्तता को महत्व दिया। पुरानी कहानी अकसर ही तार्किकता के बन्धन से मुक्त होती थी, आधुनिक कहानी का न केवल अपना एक रचनात्मक तर्क होता है बल्कि वह बौद्धिक तार्किकता को भी सन्तुष्ट करती है।"२४

पुरानी कहानी में संयोग और आकस्मिकताओं की प्रधानता होती थी, आधुनिक कहानी जीवन के कार्यकारण नियम को सन्तुष्ट करती है। पुरानी कहानी किसी पुराण, धर्म, ग्रन्थ, प्रबन्धकाव्य आदि के अनुरुप नीति और बोध का माध्यम होती थी या फिर कीस्सागोई और गप्प की तरह शुद्ध मनोरंजन का साधन होती थी, आधुनिक कहानी की पहचान उसकी स्वतंत्र कलात्मकता है और आज वह साहित्य की एक गंभीर विधा के रुप में प्रतिष्ठित है।

"समकालीन कहानी जीवन की कौंध है, प्रतीति है एक विचार बोध है, परिवर्तित जीवन की साक्षी है, मानवीय सम्बन्धों में आये हुए बदलाव की सूचक है, पुरुष के मुक़ाबले में स्त्री जीवन की अस्मिता है।"२५ "वैसे भी समकालीन कहानी में प्रत्येक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना, हलचल और क्रिया कलाप का अवश्य भारी प्रभाव पड़ा है। कहानीकार जिस जीवन-परिवेश में रहता है, वह प्रत्येक दृष्टि से राजनीति से प्रभावित है। आधुनिक कहानी की मूलभूत विशेषता है यथार्थ के प्रति प्रतिश्रुति या प्रतिबद्धता।"२६

"समकालीन कहानी के क्षेत्र में कोई भी मानवीय अनुभूति अवांछित नहीं है। यह सड़क, चौराहे, पत्र, रेस्टोरेन्ट, रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड, स्कूल, कालेज, कार्यालय से लेकर बेडरुम की रतिक्रियाओं और विवशताबोध, हताश, निराशा और संघर्ष भाव से भी अनुस्यूत है। कोई भी भाव प्रतीति बोध इससे अछूता नहीं है। यह शिल्प के स्तर भी नयी भाव भगिंमाओं और तल्लख अभिव्यक्ति की क़ायल है।"२७ मोहन राकेश के शब्दों में 'आज कुछ लोग नई कहानी या समकालीन कहानी का सम्बन्ध एक विशेष तरह के शिल्प या वस्तु के साथ जोडकर उसका मूल्यांकन करना चाहते हैं ... हमारी रचना का क्षेत्र निःसीम है और रचना की वास्तविक सिद्धि उसके प्रभाव की व्यापकता में है।

इसके लिए इतना ही आवश्यक है कि लेखक का दृष्टिकोण स्पष्ट हो और उसकी रचना उसके और पाठक के बीच एक घनिष्ठता की स्थापना कर सके। इसके लिए अभिव्यक्ति में जिस स्वाभाविकता की आवश्यकता है, वह जीवन की सहज अनुभूतियों से जन्म लेती है और वह स्वतः ही रचना को सहज संवेध बना देती है। ये अनुभूतियाँ हमें जीवन के हर पक्ष और हर पहलू से प्राप्त हो सकती हैं।"२८

## २.३ समकालीन कहानी : युगीन संदर्भ:

समकालीन कहानी के विस्तृत परिप्रेक्ष में युगीन संदर्भ अपने विभिन्न कोणों रुपों को और अभिप्रायों में झिलमिलाते हैं। मानवीय जीवन में व्याप्त विषमताओं और विसंगतियों के प्रति पीड़ा और आक्रोश का भाव परिलक्षित होता है।

समाज में व्यक्ति जन्म लेता है और वह खान-पान तथा निवास करता है। इसी प्रकार साहित्यकार भी समाज का एक सचेतन प्राणी समाज के अन्य व्यक्तियों के समान ही होता है। परिवेश और साहित्य रचना के संबंध सूत्रों में कई जोड़ और मोड़ आना स्वाभाविक रहता है। "मार्क्स ने इस संबंध में अपना मत प्रतिपादित करते हुए कहा है कि कला अथवा साहित्य मानव महत्ता की प्रतिष्ठा मौलिक उपकरणों द्वारा ही कर सकते है। मानवत्व मात्र चेतना नहीं जीवंत मानव का समानार्थक है।"२९ रचनाकार अपने सामाजिक परिवेश से, अत्यंत सचेतन रुप से संपृक्त रहकर पूरी सच्चाई के साथ अपने रचनात्मक दायित्व को निभाता रहता है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में "समाज साहित्यकार

का सामाजिक व्यक्तित्व, सर्जक, व्यक्तित्व, अभिव्यक्ति, प्रक्रिया, साहित्य, युगीन परिवेश प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से सर्जक चेतना को तो प्रभावित करता ही है, साथ ही पाठक को भी प्रभावित करता है ।"३०

परिवेश के प्रति जागरुकता ने व्यक्ति को समाज से बड़ी गहराई से संपृक्त किया है । इसी कारण से सामाजिक चेतना मुखरित हुई है । चूँकि व्यक्ति जानता है कि समाज के बिना उसका कोई अस्तित्व नहीं है । रचनाकार समाज के प्रति प्रतिबद्धित होता है । साहित्यिक आन्दोलनों का लक्ष्य भी सामाजिक सरोकार ही है, सामाजिक समस्याओं से जूझने में व्यस्त है । "आज का भयावह यथार्थ मानस को मथता है जिसके कारण जीवन विषम से विषमतर होता जा रहा है ।"३१

आज हमारे समाज में विषमताएँ और विसंगतियाँ हैं । सड़ी गली और रुढिवादी सामाजिक व्यवस्था को हटाने के प्रति एक गहरा आक्रोश है । समाज में जो रूढियां थी उसे बदलने के लिए समकालीन रचनाकारों ने अथक प्रयास किया है। मार्क्स ने अपना विचार व्यक्त किया "भौतिक जीवन की उत्पादन-विधि, राजनीतिक एवं बौद्धिक तथा सामाजिक जीवन की प्रक्रिया को साधारण तथा निश्चित कर देती है ।

मनुष्य-चेतना उसके अस्तित्व को निर्धारित नहीं करती है, अपितु सामाजिक व्यवस्था मानव-चेतना को संचालित करती है । अपने विकास की विशिष्ट प्रक्रिया में समाज की उत्पादन-शक्तियों का टकराव उत्पादन के साधनों से होता है। तभी सामाजिक क्रांति का श्रीगणेश हो जाता है । आर्थिक संरचना में परिवर्तन के साथ समाज की समस्त आधारभूत संरचना में परिवर्तन हो जाता है ।"३२

समाज में यातना आज भी है, उसका स्वरुप बदला है । "अब किसी होरी धनिया को साहूकारी सामंतवाद का शिकार नहीं होना पड़ता, अब तो अपने हाथों से निर्वाचित सरकार का तंत्र उसे पीस-पीसकर अधमरा कर देता स्वाधीन भारत का आदमी अपनी ही भाई-बिरादरी से डरा-सहमा रहने लगा ।"३३

आज समाज में पारिवारिक विघटन होते जा रहे हैं । शोषण से निम्न, मध्यवर्ग

दु:खी है, सुनने वालों के कान शायद नहीं है। समकालीन कहानी में इनका चित्रण हुआ है। पं. द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' की 'सफर' कहानी पारिवारिक संबंधों के बदलाव को समर्पित करती है। आजकल की शिक्षित पुत्रवधुएँ वृद्ध सास-ससुर का अनावश्यक भार उठाना नहीं चाहती अपना स्वतंत्र उन्मुक्त और इच्छित जीवन जीना चाहती है यदि पति नहीं मानता और अपने माता-पिता को कुछ समय के लिए भी साथ रखना चाहती है, तो पत्नी बच्चों को लेकर मायके जाने की धमकी देती है, और पुत्र चुप हो जाता है, वह अपनी गृहस्थी की सुख-शतिं समाप्त नहीं करना चाहता।

"स्त्री पुरुष या पति-पत्नी संबंधों का पारम्परिक रुप 'एक छत के नीचे' आज ख़त्म सा हो गया है। सी भास्कर राव ने दम्पति की कथा रोचक ढंग से कहा है जो एक छत के नीचे रहते हैं, परन्तु उनमें पति-पत्नी जैसा लगाव न होकर अलगाव है। वे केवल छत के नीचे रहते हैं। परन्तु अपने विगत में खोये रहते हैं, जबकि पत्नी एक नारी रुप में किसी पुरुष से प्रेम करती थी, और उससे विवाह न हो सका। उसी प्रकार पति पुरुष रुप में एक स्त्री से प्रेम करता था और विवाह उससे नहीं हो सका। समाज व्यवस्था के अनुसार पति-पत्नी के रुप में उन्हें एक छत मिली है, जिसके नीचे उन्हें रहना पड़ता हैं।"३४

"रेल की दो पटरियों की तरह वर्षों से वे अपने-अपने सुख-दुःख को लेकर समान्तर साथ-साथ जीते रहे। फिर भी एक दूसरे से अनजुड़े-असंबद्ध, साथ होते हुए भी अलग।" (हंस १९७९)

पति-पत्नी के संबंध दिखावे के भी हो सकते हैं। एक छत के नीचे रहते हुए भी उनके मन विगत के संबंधों से जुड़े रहते हैं, उनके लिए विवाह और प्रेम में एक गहरा अतंर है। स्त्री-पुरुष सोचने लगे हैं कि प्रेम और वासना में कोई अतंर कैसे हो सकता है? दोनों एक दूसरे के सहारे ही चल सकते हैं। प्रेम करने में स्वतंत्रता है। एक के बाद दूसरा प्रेम क्यों नहीं किया जा सकता है? प्रेम कोई पाप नहीं है। समकालीन कहानी में इस तरह के भाव पूर्ण रुप से व्याप्त हैं।

'अर्नेस्ट फिशर' के शब्दों में: "राजनीति, नैतिकता का ही व्यापक रुप है।" लेकिन समकालीन सन्दर्भ में नैतिकता का कोई विशेष योगदान या महत्व राजनीति में लक्षित नहीं होता है, 'राजनीति' को परिभाषित करते हुए ईस्टन का मत है: "वे समस्त प्रकार की गतिविधियाँ राजनीति कही जा सकती है, जो सामाजिक नीति के निर्माण और क्रियान्वयन से जुड़ीं होती है।"३५

समकालीन परिवेश में राजनीतिक गतिविधियों का ज़ोर-शोर अधिक है। राजनीतिक परिवेश की ये कहानियाँ ही कालान्तर में इतिहास बोध जगाती हैं। बिना इतिहास को समझे अपने युग को समझा नहीं जा सकता है। समकालीन राजनीति को समझने के लिए १९६० से पूर्व की राजनीतिक परिस्थितियों को जानना और समझना आवश्यक होगा। राजनैतिक चिंतन का भी परिवेश पर प्रभाव पड़ता है। जो राजनीति विचारधारा जनहित के उद्देश को लेकर चलती है, वह अपना प्रभाव हर एक पर डालती जाती है यदि चिन्तन के साथ उसकी कथनी व कहानी होती है तो आम जनता में उनकी साख बनी रहती है। वे सम्मान के पात्र बनते है। देश प्रगति के पथ पर बढ़ता है। आम जन में भी इससे आत्मविश्वास और सजगता उत्पन्न होती है। उसे देश के प्रति अपनी पूरी भागीदारी समझनी चाहिए। अगर इसके विपरित होती है, तो 'यथा राजा तथा प्रजा' की कहावत चरितार्थ हो जाती है और राष्ट्रीय चरित्र में गिरावट आ जाती है। ऐसी स्थिति में देश का अहित ही संभव होता है। समकालीन कविता कहानी के कवियों ने भ्रष्ट शासन के ख़िलाफ़ विद्रोह का स्वर बुलन्द किया हैं।

समकालीन रचना दृष्टि, समता स्वतंत्रता और मानव गरिमा को लेकर चली है। वह शोषण का विरोध करती है। शोषित व्यक्ति के संदर्भ का चित्र प्रस्तुत कर रही है। समकालीन साहित्य एक अराजकता का अनुभव कर रहा है। जिससे उसे नई संस्कृति-दृष्टि विकसित करनी पड़ी है। जो प्राचीन संस्कृति से भिन्न है। परन्तु अपनी संस्कृति और अस्तित्व को सुरक्षा देना साहित्य का प्रथम दायित्व है। समकालीन कहानी की मूल्य-स्थापना की अपनी दृष्टि है और रचना धर्मिता में सामाजिक प्रतिबद्धता के दायित्व का निर्वाह सफल रुप से करने में समर्थ है।

समकालीन कहानी में स्त्री और पुरुष के संबंध में आधुनिक सांस्कृति की छाप दिखाई देती है। समकालीन नारी एक के बाद दूसरे प्रेम को बुरा नहीं समझती है। दोनों को दो अलग समय में पूरी शिद्दत के साथ जीती है, प्रेम करती है। यह सांस्कृतिक बदलाव है। नई पीढ़ी रुढ़ संस्कारों से मुक्त रही है। संस्कृति का वही रुप उसे स्वीकार है जो आज उपयुक्त है। आँख मूंद कर संस्कृति के नाम पर वह कुछ भी मानने को तत्पर नहीं है। इसका कारण उसका स्वतंत्र चिंतन है वह अपना जीवन अपने ढंग से जीना चाहता है। अतः संस्कृति को समयानुरुप बदलना कुछ अनुचित नहीं है।

समकालीन दौर में मानव एक ओर आधुनिक सुख-सुविधाओं के बीच जी रहा है और दूसरी ओर उपभोक्ता समाज के बीच वस्तु की तरह बिक रहा है। स्त्री पुरुष के जीवन में अब विवाह पूर्ण और विवाहेतर यौन संबंधों में अभूतपूर्व बदलाव आ चुका है।सुधीजन जानते है कि वर्तमान दौर और वैज्ञानिक युग में मनुष्य व्यस्तताओं से घिरा रहता है। सुख-सुविधाओं के बीच भी वह अकेला है। रुटीन जीवन से ऊबकर कुछ मन बहलाव करना मानव स्वभाव है। घर पर ही टी. वी, रेडियों, विडियों के बावजूद वह बाहर भागता है क्योंकि ये सभी मनोरंजन के साधन 'घर' में है तब फिर घर के बाहर शेष रहता है, होटल या क्लब, क्लब संस्कृति भी अग्रेंजों की देन है। आज क्लबों के सदस्य बनना सभ्य सुसंस्कृत समाज में रहने के लिए ज़रूरी है। क्लब में डांस गाना तथा शराब-कबाब के दौर चलते हैं। साथ ही साथी का अभाव भी नहीं खलता।

काम सम्बन्धों में नवीनता की चाहत से पुरुष क्लबों की ओर भागता है। कुंठित व्यक्ति भी यहाँ आकर राहत पाता है। मानसिक चिंता से भी मुक्ति पाता है। शोर, शराब, नृत्य, डिस्कों में गम भूल जाता है। स्त्रियाँ भी क्लबों में आकर आधुनिक कहलवाना पसन्द करती हैं। नये-नये पुरुष मित्र उन्हें वहीं मिल पाते हैं। उच्च मध्यवर्ग पैसे बचाने के लिए घर पर ही क्लब की तरह किटी पार्टियों का आयोजन कर लेते हैं तथा वहाँ कैबरे डांस छोड़कर सभी तरह की क्लब वाली सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं।"३६

कहना न होगा कि समकालीन कहानी अपने विस्तृत परिप्रेक्ष में पूरी जीवंतता से अपने परिवेश से जुडी हुई है। परिवेश के प्रति अतिशाप संवेदनशीलता ने कहानीकार में विशेष आत्म सजगता ला दी है। जिससे इनकी कहानियाँ अपने समय की सच्चाइयों के

दस्तावेज़ के रुप में देखी जा सकती है।

जीवन स्थितियों के तीव्र बदलाव के कारण जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों में परिवर्तन आया है । मूल्यों के प्रति बदली हुई दृष्टि पूरी तरह समकालीन कहानी में चित्रित हुई हैं।"३७ समकालीन कहानी में भी जीवन में पीढियों के अन्तर बात को स्वर मिलता है। हमारी सोच और चिन्तन प्रक्रिया में जीवन में प्रेम विवाह, विवाह, परिवार में माँ-बाप, भाई-बहन, पिता-पुत्री आदि सुदृढ सम्बधों के प्रति बहुत अतंर आया है।

समकालीन समय में जीवन मूल्यों में जो परिवर्तन आया उसने स्त्री जीवन को भी प्रभावित किया है। समकालीन कहानी में स्त्री जीवन के जितने विविध पक्ष उजागर हुए हैं उनमें स्त्री का संघर्ष और विद्रोह, नाराज़गी, प्रेम, घृणा और पश्चाताप के भाव का रंग अधिक गहरा होता हुआ दिखाई देता है। पहले स्त्री-पुरुष के परस्पर सम्बन्धों का आधार 'विवाह' होता था किन्तु 'विवाह' संस्था की जटिलताएँ कहें या सम्बन्धों की स्वच्छंदता का हवाला दिया जाए अथवा स्त्री-पुरुष के मध्य बदलते प्रेम सम्बन्धों का सवाल हो रिश्ते अब उतने सहज, ईमानदारी से भरे और एकनिष्ठता की ओर बढ़ते हुए प्रतीत नहीं होते हैं।

मानवीय व्यवहार की माँग कर रही स्त्री के साथ यह एक असामाजिक तौर पर किया गया धोखा और छल ही है कि जब प्रेम और विवाह के सम्बन्ध बनते हैं तब उसके भागीदार स्त्री-पुरुष दोनों ही होते हैं, किन्तु जब प्रेम असफल होता है, वैवाहिक बंधन टूटता है या विवाहेतर सम्बन्ध बनते हैं तब कठघरे में 'स्त्री' को ही खड़ा किया जाता है। इतना होने पर भी 'प्रेम' पर केन्द्रित जितनी अधिक संख्या में कहानियाँ लिखी गयी हैं। उनसे यह तो सिद्ध होता है कि स्त्री और पुरुष के जीवन में 'प्रेम' का निषेध नहीं है किन्तु जो दैहिक भूख, शारीरिक थकान संत्रास और पीड़ा का बोध है वह प्रेम के बदलते हुए स्वरुप के कारण ही है। प्रेम, प्रेम विवाह और विवाहेतर सम्बन्धों पर जीवन स्थितियों के तीव्र बदलाव के कारण जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों में परिवर्तन आया है।

समकालीन कहानी में मूल्यों के प्रति परिवर्तित दृष्टि का बहुत विस्तार और सूक्ष्मता

से चित्रण किया गया है। स्वतन्त्रता के कारण व्यक्ति आत्म केन्द्रित हुआ जिस कारण पूर्वापार परंपरा से चले आए संयुक्त परिवार बिखर गये और एकल परिवार हो गए इसका परिणाम यह हुआ कि आत्मीयता का स्थान अर्थ ने ले लिया। आत्मीय रिश्ते अब अर्थाश्रित हो गये।

समकालीन कहानी के विस्तृत परिप्रेक्ष में स्त्री-पुरुष इतने विविध आयामों में चित्रित हुए हैं कि आश्चर्य होता है कि समकालीन कहानी कहीं अवचेतना का प्रति बिम्ब बनकर आती है और अपनी अधूरी अतृप्त इच्छाओं का रुपक। धर्मयुग में निर्मल वर्मा ने लिखा था कि "कहानी अधेंरे में एक चीख़ है" और कहानीकार एक डिटेक्तिव की तरह है जो अधेंरे की 'झाडी' में छिपे 'संदिग्ध' यथार्थ का लगातार पीछा करता रहता है।

संक्षेप में कहा जायेगा कि समकालीन कहानी एक किशोर भावुकता की नज़रों से स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का रंगारंग चल चित्र भी है तो, कहीं भय आतंक विवशता, बुभुक्षा में जीते हुए स्त्री सम्बंधों का वांछित फैण्टेसी लोक भी है। जिसे हम विविध रचनाकारों की कलम से मूर्तिमान होते हुए देख सकते हैं। चाहे वे निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर हो या मैत्रेयी पुष्पा, मन्नू भंडारी, मेहरुन्निसा परवेज, राजी सेठ जया जादवानी हो वे सभी आतंरिक मनोभावों का सटीक चित्रण करते हैं।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :**


१. डॉ. अशोक भाटिया- समकालीन हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ.सं ११.

२. सम्पादक रामचन्द्र वर्मा-मानक हिन्दी कोश पांचवाँ खंड, पृ.सं २७८.

३. सम्पादक नवलजो, नलन्दा विशाल, सागर, पृ.सं ४०४.

४. सम्पादक डॉ. कामिल बुल्के- अग्रेंजी हिन्दी कोश, पृ.सं १३४.

५. डॉ. अशोक भाटिया-समकालीन और इतिहास : अर्थ एवं स्वरुप, पृ.सं१३.

६. डॉ. सुखबीर सिंह-समकालीन साहित्य चिन्तन कविता और विविध आदोंलन, पृ.सं ७४.

७. कल्याण चन्द्र-समकालीन कवि और काव्य, पृ.सं१०.

८. वही, पृ. सं. १०.

९. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय-समकालीन कहानी की भूमिका, पृ.सं २.

१०. सुरेन्द्र चौधरी - हिन्दी कहानी : प्रक्रिया पाठ, पृ.सं १८०.

११. सुरेन्द्र मोहन - समकालीन कहानी की पहचान, पृ. सं.७.

१२. गंगा प्रसाद विमल-समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि, पृ. सं. १६६.

१३. वेद प्रकाश अमिताभ - हिन्दी कहानी के सौ वर्ष, पृ. सं. ५०.

१४. दूधनाथ सिंह- समकालीन कहानी, दिशा और दृष्टि, पृ. सं. ७.

१५. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय - समकालीन सिद्धांत और साहित्य, पृ.सं. १६.

१६. वही, पृ. सं. ६१.

१७. डॉ. नियल बैल - द कमिंग ऑफ पोस्ट इडंस्ट्रीयल सोसायटी, पृ. सं. ५२.

१८. हजारी प्रसाद द्विवेदी - विचार और वितर्क, पृ. सं. ९५.

१९. राजेन्द्र यादव - कहानी स्वरुप और संवेदना, पृ. सं. १२.

२०. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय - समकालीन सिद्धांत और साहित्य, पृ. सं. ७७.

२१. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय - समकालीन सिद्धांत और साहित्य, पृ. सं. ७७.

२२. गंगा प्रसाद विमल - समकालीन कहानी का रचना विधान, पृ. सं. १९.

२३. धनंजय वर्मा - हिन्दी कहानी का सफरनामा, पृ. सं. २१.

२४. धनंजय वर्मा - हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र, पृ. सं. १०९.

२५. रोहिताश्व - समकालीनता और शाश्वतता, पृ. १८.

२६. पुष्पपाल सिंह - समकालीन कहानी : सोच और समझ, पृ. ६८.

२७. मोहन राकेश-आधुनिक हिन्दी कहानी, पृ. सं. ९२.

२८. इटंरनेट से प्राप्त.

२९. इटंरनेट से प्राप्त.

३०. नरेन्द्र - साहित्य का समाज शास्त्र, पृ. सं. १०४.

३१. श्रीपतराम - कहानी (नववर्षांक) जनवरी, १९७४, पृ. ९.

३२. कैलाश वाजपेयी - साप्ताहिक हिन्दुस्तान, मई, १९९२, पृ. सं. ५३.

३३. मैत्रेयी पुष्पा - साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ९ मई, १९९२, पृ. सं. ४३.

३४. इटंरनेट से प्राप्त.

३५. सुरेन्द्र अरोड़ा - रूढियां, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ९ मई, १९९२, पृ. ४०.

३६. उषा कीर्ति राणावत - स्त्री पुरुष के सम्बन्धों का विमर्श, पृ. सं. १६४.

३७. पुष्पपाल सिंह- समकालीन कहानी सोच और समझ, पृ. सं. १२.

# तृतीय अध्याय

# समकालीन प्रमुख हिंदी दलित कहानीकार

प्रस्तावना :

**३.१**.बुध्द शरण हंस

३.१.१. तीन महाप्राणी

३.१.१.१. ब्रह्मज्ञान

३.१.१.२. रे अधम मुझे मत बेच

३.१.१.३. अखंड किर्तन

३.१.१.४. भोज के कुत्ते

३.१.१.५. धम्म जीवन

३.१.१.६. बुद्धम शरण गच्छामि

३.१.१.७. देव दर्शन

३.१.१.८. तीन महाप्राणी

३.१.१.९. माता का भार

३.२. मोहनदास नैमिशराय

३.२.१. आवाजें

३.२.१.१. घायल शहर की बस्ती

३.२.१.२. सपना गाँव

३.२.१.३. हारे हुए लोग

३.२.१.४. नया पडोसी

३.२.१.५. अधिकार चेतना

३.२.१.६. रीतो

३.२.१.७. उसके जख्म

३.२.१.८. मैं शहर और वे

३.२.१.९. भीड़ में वह

३.२.१.१०. महाशूद्र

३.३. ओमप्रकाश वाल्मीकि

**३.३.१.** घुसपैटिये

३.३.१.१. घुसपैटिये

३.३.१.२. कुडा घर

३.३.१.३. यह अतं नहीं

३.३.१.४. मुबंई कांड़

३.३.१.५. मैं ब्राम्हण नहीं हूँ

३.३.१.६. दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन

३.३.१.७. रिहाई

३.३.१.८. जंगल की रानी

३.३.१.९. ब्रह्मास्त्र

३.१.२. सलाम

३.३.२.१. सलाम

३.३.२.२. सपना

३.३.२.३. बैल की खाल

३.३.२.४. भय

३.३.२.५. कहाँ जाए सतीश

३.३.२.६. ग्रहण

३.३.२.७. गोहत्या

३.३.२.८. जिनावर

३.३.२.९. कुचक्र

३.३.२.१०. खानाबदोश

३.३.२.११. पच्चीस चौका डेढ़ सौ

३.३.२.१२. अधंड

३.४. सुशीला टाकभौरे

३.४.१. संधर्ष

३.४.१.१. संघर्ष

३.४.१.२. जन्मदिन

३.४.१.३. बदला

३.४.१.४. छौआ माँ

३.४.१.५. चुभते दंश

३.४.१.६. संभव असंभव

३.४.१.७. दमदार

३.४.२. टूटता वहम

३.४.२.१. झरोखें

३.४.२.२. मेरा समाज

३.४.२.३. व्रत और व्रती

३.४.२.४. मंदिर का लाभ

३.४.२.५. मुझे जवाब देना है

३.४.२.६. सिलिमा

३.४.२.७. टूटता वहम

३.४.२.८. नयी राह की खोज

३.४.२.९. धूप से भी बड़ा

३.४.३. अनुभूति के घेरे

३.४.३.१. भूख

३.४.३.२. त्रिशूल

३.४.३.३. सारंग तेरी याद में

३.४.३.४. दिल की लगी

३.४.३.५. हमारी सेल्मा

३.४.३.६. प्रतीक्षा

३.४.३.७. कैसे कहूँ

३.४.३.८. घर भी तो जाना है

३.४.३.९. बंधी हुई राखी

३.४.३.१०. गलती किसकी है

३.४.३.११. सही निर्णय

**३.५.**जयप्रकाश कर्दम

३.५.१. सांग

३.५.२. मोहरे

३.५.३. नो बार

३.५.४. मुवमेंट

## प्रस्तावना

साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। साहित्य समाज का दर्पण होने के कारण साहित्य के अंतर्गत समाज के हर वर्ग का वर्णन नज़र आना स्वाभाविक है। भारतीय साहित्य में आदिकाल के साहित्य से लेकर हिंदी साहित्य तक दलित वर्ग का चित्रण व्यापक पैमाने में देखने को मिलता है। ईस भारतीय समग्र साहित्य में अस्पृश्यता की पीड़ा, दलित नारी की समस्या और उनका शोषण आदि अन्यायओं के प्रति आक्रोश, विद्रोह व्यक्त होता दिखायी देता है। हज़ारों वर्ष से धर्म, शास्त्र, परम्परा तथा रीतिरिवाजों के नाम पर जिनका अधिक शोषण हुआ। अनेक तरह की निर्योग्यताओं को न केवल जिनकी अस्मिता को ही नगण्य कर दिया गया, बल्कि जिनके सदा दरिद्रता की गर्त में धकेल गया, जिनको सैकड़ो पीढ़ियों को जानवर से भी बदतर ज़िंदगी जीने के लिए विवश किया गया, धार्मिक एवं पारम्परिक द्वारा, हर सन्दर्भ में दलितों पर शोषण किया गया है।

इस अध्याय में दलित प्रमुख कहानीकारों का जीवन परिचय,प्रमुख रचनाएँ,पुरस्कार तथा उनकी कहानियों का संक्षिप्त परिचय व्यक्त किया गया है । समकालीन हिंदी दलित कहानीकारों में से प्रमुख रूप से ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ.सुशीला टाकभौरे,डॉ.जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय तथा बुध्द्शरण हंस इन पांचों को चुन लिया है। इन कथाकारों ने काफी प्रभावी ढंग से दलित विचारधारा को केंद्र में रखते हुए साहित्य की रचना की हैं। इनके साहित्य में दलित अस्मिता की पहचान होती है। इन पांचों कहानीकारों की कहानियों के संक्षिप्त परिचय के साथ इस अध्याय में व्यक्त किया गया है।

दलित कहानीकारों ने कहानियों के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन लाने का आहवान करते हैं । इन कहानियों में लावा है, आग है, आक्रोश हैं, गुस्सा है तो साथ संवेदना, मानवीयता तथा सहन भी दिखायी देता है । भाईचारे की भावना और आदर हासिल करने का भी बलवत्ता है । तमाम कहनियाँ दलितों के जीवन-संघर्ष तथा उनकी बेचैनी के सजीव दस्तावेज हैं । हरिजन ज़िंदगी की व्यथा छटपटाहट, सरोकार इन कहानियों में साफ दिखायी पड़ते हैं । अतः दलित कहानियों के यथार्थ को जानने, समझने के हज़ारों वर्ष से आज तक इतिहास को सामने रखते हुए आज भी प्रस्तुत सामाजिक भेदभाव तथा अन्याय के देश को झेलने वालों की दृष्टि को अपनाकर, उन्हें परखना

होगा ।

## बुध्द शरण हंस

### जन्म

हिंदी साहित्य के प्रख्यात दलित साहित्यकारों में से बुद्ध शरण हंस जी का स्थान

विशेष रूप से लिया जाता है। आपका जन्म १९४२ में बिहार के ज़ीला गया के निकट स्थित तिलोरा गाँव में हुआ।

**शिक्षा-दिक्षा**

बुद्ध शरण हंस जी की शैक्षिक योग्यता एम.ए.बी.एल. है।

**कृतित्व**

बुद्ध शरण हंस जी बचपन से कविता, कहानी, निबंध, रिपोर्ट, आलोचना, नाटक, एकांकी लिखने में व्यस्त थे। आपने साहित्य के लगभग हर प्रकार के अतंर्गत रचनाएँ की हैं। कॉलेज जीवन में हस्त लिखित पत्रिका का लेखन और संपादन कर अपनी रचना धार्मिता को जीवित रखना था। १९७५ से १९८० तक डॉ. अबेंडकर विचार मंच नाम की अपनी संस्था बनाकर बाबा साहब अबेंडकर के विचारों का प्रचार-प्रसार करते रहे।

**कविता संग्रह-**

१.गोहर

**कहानी संग्रह**

१. देव साक्षि है

२. तीन महाप्राणी

३. को रक्षति वेदत्र।

**बाल साहित्य -**

१. पथ प्रदर्शक

**जीवनी**

ज्योतिराव पुले

**अन्य प्रमुख रचनाएँ**

१. दलितों की दुर्दशा

२. बहुजन चिंतन

३. ब्राह्मणवाद से बचो

४. शोषितों की समस्या और उसका समाधान

५. मनुस्मृति काला कानून आदि ।

**पुरस्कार**

बुध्द्शरण हंस जी को भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली द्वारा अबेंडकर राष्ट्रीय पुरस्कार (१९९९) तथा बिहार सरकार द्वारा बाबा साहब भीमराव अबेंडकर पुरस्कार (२००२) प्राप्त हुआ है ।

अबेंडकर मिशन स्कूल बाबा साहब अम्बेडकर पुरस्कार से प्राप्त सवा लाख से बुद्ध मिशन स्कूल की स्थापना की गयी थी ।

**बुध्द शरण हंस :**

हिंदी दलित कहानी को अनेक कहानीकारों ने सशक्त जमीन दी है जिनके कहानियों में सारे सामाजिक विद्रोह के बाद रचनात्मक शक्ति भी है । बुध्द्शरण हंस उन कथाकारों में से एक माने जाते हैं, जो दलित साहित्य आन्दोलन के एक सशक्त रचनाकार माने जाते हैं । उन्होंने अनेक कहानियाँ लिखी हैं जो समकालीन समय को केंद्र में रखकर,जिसमे दलित जीवन की वेदना को समाज के सम्मुख प्रदर्शित करके उस वेदना को नयी वाचा प्रदान की है ।

## ३.१.१ तीन महाप्राणी

### ३.१.१.१. ब्रह्मज्ञान :

इस कहानी का प्रमुख पात्र है पंडित चोकट उपाध्याय उसकी पत्नी और पुत्र गूदर।

पंडित चोकट का एकलौता पुत्र गूदर १० वर्ष का हो चला था। उसे ब्रह्मज्ञान दे देना चाहिए नहीं तो उसको दस साल पूरा होने से उचित समय नहीं होता। इसीलिए बेटे के लिए एक उचित समय निकाल लेता है। उसे ब्रह्मज्ञान देने का कार्य शुरू कर देता है। ब्रह्मज्ञान के नाम पर कैसे ब्राह्मण लोग समाज के लोगों को शोषित करते हैं उससे संबंधित ज्ञान देने के साथ-साथ कहानी आगे बढ़ती है। गूदर के एक प्रश्न पर पंडित कहता है- "संस्कृत याद करलो तब तो सारा हिंदू तुम्हारा ग़ुलाम बन जायेगा। जब तक नहीं याद हो तब तक ये कुछ शब्दों को बोलकर नम: नम: स्वाहा स्वाहा कर देने से भी सारा काम चल जाएगा।"१ इस प्रकार से समाज के लोगों को ब्राह्मण और ब्राह्मणवाद के नाम पर लोगों से पैसे वसूल करने की शिक्षा दी जाती है। ब्रह्मज्ञान के बहाने जीवन यापन के लिए पंडित लोग अपने संतान को किस प्रकार समाज में लोगों को धर्म, पूजा-पाठ के नाम पर शोषण करना सिखाते हैं यह सभी बाते इस कहानी में उभरकर आयी हैं।

### ३.१.१.२. रे अधम मुझे मत बेच :

समाज में रहनेवाले उच्च वर्ग के ये पंडित और पुजारी लोग समाज की कुछ कमियों को पूँजी बनाकर कैसे लोगों को वंचित करते हैं इसका सुंदर चित्रण इस कहानी में हुआ है। पंडित बटोरन मिश्र अपनी पत्नी और विवाहित बेटी लक्ष्मी के साथ अढ़वाँ गाँव में रहते थे। पुजारी मिश्र अनपढ़ था। किंतु पक्का कर्मकांडी था। उसी गाँव के भगवती मंदिर में पूजा-पाठ करके जीवन चलाता था।

एक दिन शाम को वह मंदिर के भगवती मूर्ति को बेचने की पूर्व योजना बना लेता है और अपनी बेटी को साथ रखता है। पत्नी को घर भेजता है। जाड़े की रात में थामस नामक आदमी अपने आदमियों सहित आ जाता है। पंडित बटोरन मिश्र से मंदिर में मिलते ही वह उसे अपनी बेटी से मिलाता है। थामस से कहता है- "यह मेरी बेटी है, कालेज में पढ़ती है, अग्रेंजी ख़ूब बोलती है।"२ वह थामस से एक लाख रूपए की बैग ले लेता है और बचे पैसे भी जब थामस से पूछता है तो थामस कहता है कि- "भगवती के लिए तो एक लाख रूपये ही बोला था न?"३ उसकी नज़रे लक्ष्मी पर पड़ी थी। तब बटोरन- "हाँ सो तो ठीक है कहते लोलुपता प्रकट कर देता है। यहाँ कहानीकार ने उनके नीच मनोधर्म का वर्णन किया

है। थामस पूरा पैसा बटोरन के हाथ में रखते बोलता है- "अच्छा-अच्छा तुम बाहर जाकर मूर्ति पैक करो हम कुछ टका लक्ष्मी को भी दे देता है ठीक?"४ बटोरन के बाहर आकर देखने तक वहाँ भगवती मूर्ति ग़ायब, उसको पैक कर बंद कर दिया था। थामस तो अभी लक्ष्मी के साथ बंद कमरे में था। लेकिन अचानक उसको पैक में बंद भगवती और कमरे में थामस के साथ बंद लक्ष्मी को देखते उसका सर चकरा जाता है । उसे उस अधेंरे वातावरण, लहू लुहान लक्ष्मी और उगते तार बेतार दिख पड़े जो उसे धिक्कार-धिक्कार कर कह रही है- 'रे अधम मुझे मत बेच'।

### ३.१.१.३. अखंड कीर्तन :

इस कहानी में यह चित्रित किया है कि समाज में कई ऐसी महिलाएँ हैं जिनको अपने पति से जो सुख चाहिए वह हासिल नहीं होता। इसीलिए ऐसी स्त्री अन्य पर पुरुषों से सुख प्राप्त करना चाहती हैं। इसी स्त्री का चित्रण अखंड कीर्तन में चित्रित किया गया है।

मिल्की मंजौर गाँव अपनी हैसियत के लिए इसीलिए प्रसिद्ध है कि वहाँ पूरब में स्थित देवी मंदिर है। जो इतना बड़ा मंदिर दस कोस के इलाक़े में नहीं था। इसी मंदिर में अखंड कीर्तन के लिए सभी प्रकार की तैयारियाँ होने लगी। मंदिर में मंत्र शुरू किए सैकड़ो नर-नारी मंदिर की परिक्रमा करने लगे थे।

इधर मदन पुजारी के आदेशानुसार घर की रखवाली के लिए मदन पुजारी घर का दरवाज़ा खटखटाया तो पंडिताइन दरवाजा खोली। विषय सुनते ही वह कहने लगती है कि- "अच्छा किया पंडित ने सांढ़ को खेत की रखवाली करने भेज दिया।"१ मदन के घर आते ही नयनतारा उसे खाने के लिए देती है। और उसे कहती है कि आज रात आठ बजे आना। क्योंकि मुझे मंदिर जाना है, वहाँ मुझे मंदिर पहुँचा देना। मंदिर में मुझे आज फेरे लगाना है। रात में कुत्तों से मुझे बहुत डर लगता है। कुंदन ठीक आठ बजे आ जाता है। नयनतारा जो ब्रजबिहारी सिंह की बेटी है वह रेशम की उज्जवल साड़ी में सज-धज कर पूजा का थाल लेकर तैयार रहती है। नयनतारा कुंदन को अपने घर की तरफ़ से होकर चलने को कहती है। ठीक उसी प्रकार से वह उसे अपने घर के पास ले जाता है तो वह उसे घर का दरवाज़ा खोलने को कहती है। दोनों टिमटिमाते दीपक में घर के अदंर हो जाते हैं।

नयनतारा चमकती रहती है। सुनसान गाँव में अखंड कीर्तन का शोर शराना । इधर नयनतारा भयभीत कुंदन को ख़ूब खिलाती है और पूछती है 'खाने की इच्छा पूरी हो गयी? हाँ बोलता है तो अब मेरी इच्छा भी पूरी करो"५ कहते नयनतारा कुंदन से लिपट जाती है। दोनों कामायी वातावरण में भी अख़ंड कीर्तन का मद्धिम स्वर, कोनों के परदे से टकरा कर व्यर्थ साबित हो रहा था हरे रामा! हरे कृष्णा! सीताराम! राधे कृष्णा!

### ३.१.१.४. भोज के कुत्ते :

जिसका चरित्र उत्तम है वही ब्राह्मण है। जो उग्र है पाखंडी है, बातूनी है, लंपट है, लुच्चा है वह ब्राह्मण तो क्या इन कुत्तों से भी गया गुज़रा है। ये बताने का प्रयास कहानीकार ने इस कहानी में किया है।

कहानी की शुरूआत में पाखंडी बातूनी, लुच्चे ब्राह्मण को गीध, चील, कुत्ते कौए के साथ तुलना करते हैं। तिनकौड़ी साहब के बाप के दिवंगत होने के कारण वह अपनी जात बिरादरी को भात देने से पहले ब्राह्मणों को भोज देने का निर्णय लेता है। उसी प्रकार ब्राह्मण भोज में आते हैं। भोजन के समय पर न होने से वह उन्हें शरबत पिलाता है। जब भोजन शुरू हो जाता है तब ब्राह्मणों में एक बूढ़ा ब्राह्मण अपने पोते को ज़बरदस्ती खिलाते बोलता है- "क्यों बे कुत्ते, मुँहं! पत्तल पर लड्डु पूरियाँ लुढ़की हैं और तुझे पत्तल चाटने को सूझा है! बेहुदे नहीं खाया जाता है तब अपना काम तो कर। मैंने क्या समझाया था रे।"६ बूढ़ा ब्राह्मण खाने के साथ-साथ लड्डु, पूरी चुराकर रख भी लेता है। इसे देखकर परोसनेवाले ग़ुस्से में आ जाते हैं और उन्हें गालियाँ देने लगते हैं। ब्राह्मणों को लगता है कि ये लोग हमें गालियाँ दे रहे हैं तो साहब को शिकायत करते हैं । जब साहब को इन ब्राह्मणों की असलियत का पता चलता है तब साहब अपने लोगों को आदेश देकर वह उनकी पिटाई कराता है। ब्राह्मण वहाँ से मार खाके श्राप देते भाग निकलते हैं। चोरी की गई लड्डु पूरी सब वहीं मैदान पर लाते हैं। मौक़ा देखते ही लड्डु, पूरियों पर कुत्ते टूट पड़ते हैं। एक ने कुत्ते को भगाने को कहा तो एक ने- खाने दो भाई, खाने दो जो कुत्ते थे वे भाग गये असली संत ये ही हैं। ये सिर्फ़ खायेंगी एक दाना भी ये चुराकर नहीं ले जाएगें। इस दृश्य के साथ कहानी समाप्त होता है।

### ३.१.१.५. धम्म जीवन :

अशिक्षा के कारण दलितों में दासता के गुण देखा जाता है। अशिक्षा ने उन्हें ग़रीब, दरिद्र बनाया है। स्वयं विचार करने की क्षमता की कमी है। ऐसे में उन्हें उचित शिक्षा एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता पर ये कहानी आधारित है।

करमपुर के टोला में एक बौद्ध भिक्षु के आगमन से एक प्रकार का परिवर्तन देखने को मिलता है। वह एक बौद्ध धर्म का प्रचारक के रूप में आकर इनके बीच सहयोग, सहकारिता, एकता आदि बातों का ज्ञान कराता है। साथ ही गौतम बुद्ध, ज्योतिबा फुले, अबेंडकर इन तीनों महापुरूषों ने भाग्य, भगवान, आत्मा, परमात्मा को अधंविश्वास माना है। इन सब अधंविश्वासों से आप बचे, दूर रहे।"७ इन बातों को समझाता है। गगन पासवान के बेटे के तिलक का उपाय निकालने के संबंध में टोला में भिक्षु ने सभी स्त्री-पुरूष को एकत्रित करके उनको समझाता है। तीनों महापुरूषों की बाणी को बताकर स्वावलंबी बनने से कैसे हम छुआ छूत, ऊँच-नीच आदि भेदभाव से बचते हैं। इतने बड़े समाज मे गगन पासवान के बेटे के तिलक के लिए आवश्यक दरी, बिछावन पेट्रोमेक्स नहीं है तो अब आप लोगों के सहयोग से संभव होगा। आप एक दिन का भोजन सामाजिक चंदे में दान करें प्रति परिवार दो किलो चावल या दस रूपये, समाज में दान दें दान आज और अभी हैं। सभी उत्साहपूर्वक तैयार हो जाते हैं। ऐसे सभी चीज़ें ख़रीदी जाती है। उन्हें दीनता से बाहर आने का उपदेश देते हैं और स्वावलंबी बनने का तरीक़ा सिखाते हैं। गगन पासवान के घर में समारोह सभी नए चीज़ों से उल्लास के साथ संपन्न होता है।

बौद्ध भिक्षु तीनों महापुरूषों के उपदेश सुनकर करमपुर टोला के सभी परिवार को तथा बारातियों को बुद्ध धर्म की दीक्षा देकर दोनों गाँवों के लोगों को एक-एक पंचशील का झंडा प्रदान करता है। महापुरूषों के नाम पर जय जयकार से वातावरण गुंजित हो जाता है।

### ३.१.१.६. बुद्ध शरणं गच्छामि :

जगजीवन नगर के दुर्गा मंदिर में शाम की आरती होने के साथ कहानी शुरू होती है । पुजारी झींगुर पंडित मुहल्ले के लोगों के सहयोग से बड़ी धूमधाम से दुर्गा देवी का पूजा पाठ करने में तल्लीन हैं और कमाई में भी उसी मुहल्ले के कुछ युवा ने सोचना शुरू कर दिया है । पंडित झीगुंर के मुहल्ले में कोई सुधार के काम नहीं हुए । सालों से बदले में मुहल्लेवालों की स्थिति शोचनीय होते जा रहा था। इस विचार पर मुहल्ले के कुछ प्रमुखों के विचार-विमर्श के साथ कहानी आगे बढ़ती है। कुंदन और कमली जैसे लोगों के प्रयास से अबेंडकर भवन में सभा संपन्न हो जाती है। इस सभा में मोहल्लेवालों के अच्छे बुरे कार्यों के चिंतन के बाद दुर्गा देवी मंदिर में जो ब्राह्मण है उसे वहाँ से हटाने के बदले विद्यालय खोलने का निर्णय होता है। कूंदन कहता है कि- "उपाय आसान है असहयोग। हम मंदिर और ब्राह्मण दोनों का असहयोग करेंगे। विरोध नहीं करेंगे। विरोध से बात बिगड़ती है, असहयोग से बनती है।"८

ठीक उसी प्रकार उस दिन से मंदिर में मुहल्लेवाले जाना बंद कर देते हैं। इससे पंडित झीगुंर परेशान होकर उसी गाँव में शराब की दुकान खोल देता है तथा मंदिर बंद कर देता है। इस प्रकार कहानी में एक विशेष संदर्भ निर्माण हो जाता है। शराब दुकान में लोग नहीं जाते बदले में सब अबेंडकर भवन में संत रविदास की क्रांतिकारी कविता गातें हैं। गुरू रैदास करो दंडौती। जगजीवन नगर के दुर्गा मंदिर पर नवयुवक कब्ज़ा करके वहाँ रविदास शिक्षा सदन' का बोर्ड लटकाते हैं। अपने समाज के नेताओं की तसवीर रँगाते हैं। ये सब कुंदन और कमली जैसे लोगों के प्रयास से संभव होता है। आख़िर में इन दोनों के शादी के साथ कहानी समाप्त होती है।

### ३.१.१.७. देव दर्शन :

कहानीकार 'देव दर्शन' कहानी के ज़रीए पंडितों की नीच कार्यों का परिचय कराने का प्रयत्न किया है। इस कहानी में राजगुरू एक दिन अयोध्या आ जाता है। वहाँ उसका परिचय एक पंडित से हो जाता है। वह देव दर्शन कराने के लिए तैयार हो जाता है। उसके लिए वह धन की अपेक्षा करता है। राजगुरू, पंडित से प्रश्न पूछता है कि देव दर्शन के लिए अछूतों को मंदिर में जाने की अनुमति है? तो पंडित ने उत्तर दिया कि अब अछूत की क्या

बात करे यजमान। वैसे कोई कहकर तो नहीं जाता है कि हम अछूत हैं, और न हम किसी अछूत को मंदिर में ले जाते हैं। लेकिन इस भीड़-भाड़ में ससुरे घुस ही जाते होंगे। कौन जाने?"९ ऐसे बातों में उलझे राजगुरू, पंडित से पूछता है कि मुझे मांस, मदिरा और छोखड़ी चाहिए मिलेगा? पंडित राजगुरू से कहता है कि "आप मेंरे घर चलो वहीं सब कुछ इतंज़ाम कर देंगे भक्त ही भगवान होता है। भक्त को ख़ुश करना भगवान को ख़ुश करने के बराबर है।"१०

इस प्रकार पंडित का, भगवान दर्शन के लिए आनेवाले भक्तों को दर्शन के नाम पर घर में स्त्रियों को रखकर धंधा चलाने जैसे नीच काम करनेवाले पंडित को राजगुरू अपनी जाति बता देता है कि मैं अछूत हूँ क्या अब देव दर्शन कराओगे? तब पंडित का बोलना बंद हो जाता है। इससे अछूतों पर सामाजिक शोषण का पता चलता है। राजगुरू पंडित को ५ रूपये देकर दर्शन कराने को मजबूर कर देता है और उसी से अयोध्या के सभी मंदिरों का दर्शन कराता है। आख़िर पंडित फिर उसे कहता है- क्या घर चलोगे सब कुछ का इतंज़ाम है? तब राजगुरू उससे ऐसे शब्दों से उसकी नीच कार्यों की निंदा करते हुए कहता है कि- "तुम लोग जैसा नीच नहीं हूँ। भगवान के नाम पर भोगवान का धंधा करते शर्म नहीं आती। भगवान के नाम पर बहू-बेटियों का धंधा करते हो छीछी"११ और वह चला जाता है।

### ३.१.१.८. तीन महाप्राणी

यह कहानी इस संकलन(तीन महाप्राणी) की आख़िरी और शीर्षक कहानी है। इस कहानी में तीन प्राणी आते हैं जैसे- कुत्ता, गधा और सूअर। जूठे पत्तलों पर जूझते तीनों प्राणियों को मार भगाने के कारण एक स्थान पर इकट्ठे होकर तीनों प्राणी दु:खी होकर अपने-अपने धर्म के प्रतिनिधित्व करते हुए हिंदू धर्म के अतंर्गत स्थित जात-पाँत, छुआ-छूत, स्पृश्य-अस्पृश्य, वेद-पुराण आदि के नाम पर अवर्णों को कैसे लूटकर सवर्ण अपने ब्राह्मणत्व को क़ायम रखना चाहता है। इससे संबंधित लंबी चर्चा में तीनों महाप्राणी भाग लेते हैं।

यहाँ तीनों महाप्राणियों को हिंदू पुराण में भगवान का अवतार माना गया है। साक्षात विष्णु अवतारी सूअर माना जाता है। लेकिन सूअर को मारकर हत्या कर दिया जाता है। इसीलिए इस्लाम धर्म अपनाने की इच्छा ज़ाहिर करता है तो गधे भी उसे अपनी आशंका सूअर के सामने पेश की। कुत्ते ने भी क्षत्रिय धर्म का प्रतिनिधित्व करते हुए क्षत्रिय का नाम लेने के कारण ग़ुस्सा प्रकट किया तो सूअर क्षत्रियों के बारे में भी विस्तार से बताता है। साथ ही सनातन धर्म के कई राज़ की बातों का भी ज़िक्र करता है। अतं में सनातन धर्म के नीतियों के और उसके परिणामों के बारे में सूअर गधे और कुत्ते को सुनाता है। ये दोनों प्राणी सूअर का इस्लामी होने के बात सुनकर हँसते हैं। भारतीय ईसाईयों में भी किस तरह ऊँच-नीच का भेदभाव घर कर गया है इसका विवरण प्रस्तुत करते हुए ब्राह्मणवाद के बारें में गंभीर चिंता की जाती है। भारत में जितने भी मुसलमान हैं वे कल के हिंदू शूद्र हैं। ये ब्राह्मणवाद को नहीं मानते इनको ही समाप्त करने की बात सूअर ने की। और अतं में गधे और कुत्ते ने धर्म की रक्षा के लिए अपने-अपने मुकाम पर चलने की अनुमति लेते हुई वहाँ से निकलते हैं। अगले सुबह सुनने को मिला कि कई ब्राह्मणों ने इस्लाम धर्म क़बूल कर लिया है।

### ३.१.१.९. माता का भार :

इस माता का भार कहानी में कमलापुर, जिसमें ब्राह्मण लोग रहते हैं। सुखदेव टोल जहाँ चमार और मुशहार रहते हैं जो अछूत है। कारणवश सुखदेव टोला के स्थान परिवर्तन के कारण कुछ नये परिवर्तन भी स्वत: होने लगे। सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक स्थिति में सुधार आने लगा । इससे युवकों में परिवर्तन देखने को मिला । उसी टोला के कमल ने अग्रेंजी में बी.ए पास किया।

कमलापुर के लुच्चा मिश्र की गाय मर जाती है। उसे उठाकर फेंकने के लिए ब्राह्मणों ने सुखदेव टोला के लोगों पर दबाव डालने लगते हैं। लेकिन इस टोला के लोगों ने स्वतंत्र व्यवहार और विचार करने के कारण उनके रहन-सहन में परिवर्तन हुआ था। जब भी गाँव में कोई जानवर मर जाता है तो चमार लोगों का उसे उठाने का रिवाज जारी था। लेकिन आज ये ही लोग मरी गाय को उठाने को तैयार नहीं होते। कमल बीच में आकर कमलापुर के ब्राह्मणों को समझाता है कि हम लोग ने ये सब रिवाज के काम छोड़

दिये हैं। हमारे लोग भी यह नहीं उठायेंगे। ब्राह्मणों द्वारा तोड़े गये परंपरा के बारे में बताते कमल कहता है- "बूटन मिसिर अडां बेचता है। क्या ब्राह्मणों की परंपरा है? गंदा पंडे चाय बेचता है सबकी जूठी प्याली धोता है क्या ब्राम्हणों की परंपरा है?...आदि।"१२

ब्राह्मणों के बीच इस विषय को लेकर वाद-विवाद चलता है। ऐसे वाद-विवाद में दिन ढल जाता है। लोगों को पता ही नहीं चलता कमलापुर के सभी, गाँव से बाहर एकत्र हैं जैसे गाँव में प्लेग हो गया हो। ब्राह्मणों को लगने लगा कि मरी गाय सड़ने लगी है। सड़ान से साँस लेना मुश्किल है। ब्राह्मण सब निर्णय लेते हैं और बहुत मुश्किल से मरी गाय को गढ़े में पहुँचाते हैं। सुखदेव टोला के लोगों ने कमल को सूचना दी कि "गाय दफ़न कर दी गयी। गाय के साथ-साथ ब्राह्मणवाद दफ़न हो गया।" कमल ने मुस्कुराकर कहा ।

हिंदी दलित कहानीकारों में बुध्द्शरण हंस जी का नाम आदर के साथ लिया जाता है । इनकी कहानियों में दलित समाज की उन्नति, खोखली आर्थिक योजनाएँ, दलित राजनैतिक जीवन, हिन्दू धर्म की मानसिकता के कारण दलितों में परिवर्तन, दलित शोषण के विविध रूप, छूआ-छूत की भावना, दलित नारी शोषण, दलित नारी चेतना जैसे अनेक पहलुओं को दर्शाने की कोशिश की है ।

### ३.२. मोहनदास नैमिशराय:

मोहनदास नैमिशराय एक सचेत दलित साहित्यकार हैं । इनका जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ में ०५ सितंबर १९४९ को हुआ । नैमिशराय जी का परिवार मेरठ नगर में है । हिंदी आत्मकथाओं में इनकी 'अपने अपने पिंजरे' उत्कृष्ट कृति मानी जाती है । नैमिशराय जी ने उपन्यासकार, कहानीकार, अनुवादक के रूप में भी ख्याति अर्जित की हैं । इन्होंने साहित्य क्षेत्र में बड़ा लंबा सफ़र तय किया हैं । इनके साहित्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक समस्याओं को विषयवस्तु बनाया गया है । इनकी कहानियों में सजीवता, सत्यता, सामान्य जनता का दयनीय जीवन पाठकों के हृदय को छू जाता है । इनकी 'आवाज़े' कहानी संग्रह में कहानियों का प्रवाह पाठकों को दलित साहित्य रूपी समुद्र का दर्शन कराता है ।

डॉ. कुसम वियोगी के निम्न विचार, नैमिशरायजी की कहानियों को पृष्ट करती हैं। डॉ. कुसुम वियोगी दलित कहानीकार ग़ैर दलित कहानीकारों की सोच की तुलना करते हुए कहते हैं ट्ट "दलित कहानिकारों की कहानियाँ सीधे-सीधे उनके परिवेश एवं संस्कारों से जुड़ी अभिव्यक्ति प्रकट करती हैं। क्योंकि दलित साहित्य कथा आदोंलन का अपना सामाजिक सरोकारों से जुड़ा एक सुदृढ आधार है। जबकि ग़ैर दलित साहित्यकार पाखंड का सनातनी दुशाला ओढ़े होते हैं जिसकी वजह से उनके कथ्य और कर्म में कहीं भी तालमेल नज़र नहीं आता।"१३

दलित साहित्यकार ने जिस प्रकार स्वानुभवों को कहानियों में उतारने का प्रयत्न किया है वैसे ग़ैर दलित साहित्यकार नहीं करते। क्योंकि वे रूढिवादिता से बाहर नहीं आना चाहते मोहनदास नैमिशराय इनके नीच विचारों पर क्रोध उगलते हुए कहते हैं – "ब्राह्मणवाद का चरित्र बदलेगा थोडे ही। वे कितना भी प्रगतिशील बन जाएँ, रुढियों के जंगल से बाहर नहीं आएगें। जो सच्चाई से परे नहीं है।"१४

**कृतित्व:**

**कविता संग्रह**

१. सफदर एक बयान

**कहानी संग्रह**

१. आवाज़े

**उपन्यास**

१. क्या मुझे खरीदेंगे

**नाटक**

१. अदालतनामा

**आत्मकथा**

१.अपने अपने पिंजरे

## ३.२ मोहनदास नैमिशराय-

समकालीन हिंदी दलित कहानी में चेतना की दस्तक देने वाले कहानीकार मोहनदास नैमिशराय जी की कहानियाँ अपने आप में विशिष्ट हैं। भारतीय आधुनिक समाज में आज के दौर में भी जाति व्यवस्था के कारण दलित माने जाते हैं। मोहनदास जी ने समय-समय पर अपनी विचारधारा को कहानी और कविता आदि लेखनकार्य के माध्यम से प्रस्तुत करते

रहे। दलित कहानी जीवन की त्रासदी को दर्शाती है, कहानीकार ने अपने अनुभावों को अपनी विश्लेषण दृष्टि के साथ कहानिकला में प्रस्तुत कराता है।

### ३.२.१ आवाज़े –

नैमिशराय जी का पहला कहानी संग्रह है जिसमे रुढ़िवादी विचारों को तोड़ने का भरसक प्रयास किया गया है। कुल १३ कहानियों का यह संग्रह समता प्रकाशन दिल्ली से वर्ष १९९८ में प्रकाशित है। इस संग्रह की हर एक कहानी दलितों में जागृति तथा चेतना का संचार करती है।

#### ३.२.१.१ घायल शहर की एक बस्ती :

इस कहानी में सांप्रदायिकता के विशाल रूप को दर्शाया गया है। इसमे सांप्रदायिकता को तोड़ने का प्रयत्न किया गया है। सांप्रदायिकता के शिकार अकसर दलित और मुसलमान ही होते हैं। हिंदूवादी लोग दलित और मुसलमानों में दंगे भड़काकर मरने के लिए आगे कर देते हैं। इन दंगों में ग़रीब आदमी ही मरते हैं। ग़रीबों में आपसी प्रेम को भी इस कहानी में दर्शाया गया है।

#### ३.२.१.२ अपना गाँव :

यह कहानी दलित एकता को दर्शानेवाली एक लंबी कहानी है। इन्होंने एक दलित परिवार की पौत्रवधू को दिन-दहाड़े शीलहरण करके पूरे गाँव में नंगा घुमातें हैं। ख़ूब प्रयत्न के कारण भी दलितों को न्याय नहीं मिलता निराशा ही हाथ लगती है। अतंत: सारे दलित एक होकर उस परंपरागत गाँव को छोड़ देते हैं। उससे कोसो दूर अपना नया गाँव बसाते हैं। इस कहानी का मुख्य आशय है कि हिंदूओं की मान्यताओं को छोड़े बगैर इस नीच व्यवस्था में दलितों को न्याय मिलना संभव नहीं है। कहानीकार ने डॉ. अबेंडकर के विचार को महत्व देकर एक नए समाज का निर्माण करने का दृढ निर्णय लिया है जो बौद्ध धर्म में विवेकपूर्ण जीवन जीया जाता है ।

### ३.२.१.३ हारे हुए लोग :

इस कहानी में पढ़े-लिखे शहरी लोगों में किस प्रकार जातिवाद का दंभ छिपा है इसे इस कहनी में बख़ूबी दर्शाया गया है। दलित अफ़सर होते हुए भी शहरों में उन्हे किराये का मकान देने में सवर्ण हिम्मत नहीं करते। इसलिए कहानीकार लोगों को हिदायत देते हैं कि जब तक लोगों में आतंरिक चेतना नहीं जागती केवल किताबी शिक्षा से मन का मैल दूर होने वाला नहीं है।

### ३.२.१.४. नया पड़ोसी :

इस कहानी में भी जातीयता को दर्शाया गया है। दलित तो पड़ोसी का स्वागत करता है। परंतु नया पड़ोसी जो आया है, वह गृहप्रवेश कार्यक्रम में दलित को नहीं बुलाता। वह ब्राह्मण है, स्वार्थी और संकीर्ण मन का, मूर्ख मानसिकता को अपनाता है।

### ३.२.१.५. अधिकार चेतना :

इस कहानी में बाबा साहेब के संघर्ष से दलितों में उपजी चेतना और सम्मान का दर्शन होता है। 'गंजा पेड़' में दलित जीवन को दर्शाया गया है। जो छोटे क़सबे में नालियों का क्या रूख़ होता है, उसे लेखक ने बख़ूबी चित्रित किया है।

### ३.२.१.६. रीति :

'रीति' कहानी में ब्राह्मणवाद के नीच कार्यों को उजागर किया गया है, जिसमें जातिवाद, सामंतवाद, घृणित मानसिकता, बलात्कार जैसे जघन्य अपराधों का शिकार हमेशा दलित नारी ही क्यों होती है? गाँव की नई बहूओं की इज्ज़त लूटि जाती थी इसीलिए दलित एक होकर इसका डटकर विरोध करते हैं।

### ३.२.१.७. उसके जख्म :

इस कहानी में दलित लड़की पर ज़मींदार का बलात्कार होता है। जब वह लड़की न्यायालय पहुँचती है तो ज़मींदार वहाँ भी सभी को ख़रीदता है। हार का सदमा उसका बूढ़ा बाप सह नहीं पाता और न्यायालय में ही दम तोड़ देता है।

### ३.२.१.८. मैं, शहर और वे :

इस कहानी में दलित विद्यार्थी की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है। लड़का शहर में परीक्षा देने के लिए जाता है। परंतु परीक्षा रद्द होती है। ब्याज से लाए हुए पैसे समाप्त होते हैं और परेशान होकर सोचने लगता है कि उन्हें क्या पता एक दलित युवक कितनी कठिनाईयाँ झेलकर शिक्षा प्राप्त करता है।

### ३.२.१.९. भीड़ में वह :

इस कहानी में एक असहाय माँ की कहानी है जिसे समाज ने वैश्या बना दिया है। उसका एक बेटा जिसे वह इस गंदे माहौल से निकलने के लिए अपना शरीर बेचकर निगम के स्कूल में पढ़ाती है। वह जगह-जगह अपमानित होती है। यहाँ तक कि स्कूल के अध्यापक तक उसका देह शोषण करते हैं। अतं में समाज उसके बच्चे को स्वीकार नहीं करता। वह बच्चा उसी भीड़ का एक हिस्सा बनकर रह जाता है। इस कहानी में माँ का महत्व तो उभर आता है, परंतु दलित नारी लाख करने पर भी अपने सुपुत्र का भविष्य नहीं सुधार सकी। इसके लिए समाज ही कारणीभूत है।

### ३.२.१.१०. महाशूद्र :

इस कहानी संग्रह की अतिंम कहानी है। (जातिवाद के अतंर विरोध) शहर के शमशान में शव का संस्कार करके मरे का माल खानेवाले ब्राह्मण आचार्य। वही शवों को उठाने उसे आग लगानेवाला नंदू डोम। क्रियाकर्म के कारण आचार्य को पैसा मिलता है, परंतु उसमें नंदू का कोई हिस्सा नहीं होता।

इस कहानी में जातिवाद के अतंर विरोध को बड़े ही मार्मिक ढंग से दर्शाया गया है। आज के भाव है डॉ. तेज सिंह कहते हैं- "ब्राह्मण भी अपनी जाति में जातिगत भेदभाव को झेल रहा है । लेकिन इस प्रक्रिया में वह ब्राह्मण से महाब्राह्मण ज़रूर बन जाता है। शमशान समझते हैं और अपने घर के दरवाज़े उसके लिए बंद रखते हैं।"१५ यह विचार "महाशूद्र" कहानी में देख सकते हैं।

इस कहानी में नंदू डोम और आचार्य दो मुख्य पात्र हैं। दोनों का परिवार शहर में रहता है। मरघट यहाँ से तीन मील दूर है। नंदू और आचार्य दोनों ही मरघट में रहते हैं। वहाँ से रात आठ बजे आचार्य घर लौटते हैं। परंतु नंदू मरघट में ही सोता है। इन दोनों का कार्य मृत शवों का अतिंम संस्कार करना है। लोग दक्षिणा के रूप में जो पैसा देते हैं उस पर आचार्य के परिवार का गुज़र-बसर चलता है।

आचार्य के बच्चों को समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता है। बच्चे सम्मान का जीवन जीना चाहते हैं। इसीलिए अपने पिता से कहते हैं- "पिताजी अब और नहीं सहा जाता। सारी दुनिया हम पर थू-थू करती है। हमें मुरदे की चमड़ी खींचनेवाले से लेकर कफन खसोठू तक कहते हैं। वे कहते हैं कि हमारे घर का गुज़ारा ही तब चलता है, जब कोई मरता है । किसी के घर में अँधेरा होने पर ही हमारे घर में उजाला होता है।"१६ परंतु बच्चों को यह पता नहीं है कि सवर्ण होते हुए भी समाज में शूद्रों से भी ज़्यादा यातनाएँ झेल रहे हैं। यह दु:ख आचार्य जी नंदू के सामने व्यक्त करते हुए कहते हैं, नंदू मुझे लगता है कि हम बस नाम के ब्राह्मण हैं। क्योंकि कोई भी ब्राह्मण हमे अपने घर के दरवाज़े के बाहर ही रखता है और ब्राह्मण ही क्यों बहुत से लोग तो हमारी सूरत देखना भी अपशकुन मानते हैं। आचार्य के सामने समाज के अनेक भयानक चेहरे मँड़राने लगते हैं। तब आचार्य

अपना हाथ नंदू के कंधे पर रखकर कहता है- 'हमें कहा जाता है महाब्राह्मण... पर इसका अर्थ जानते हो नंदू महाशूद्र...!' अब नंदू इस संबंध को अपनत्व और आत्मीयता से महसूस कर रहा था।

सवर्णियों ने हिंदू समाज की हर जाति में आतंरिक ऊँच-नीचता को बनाये रखने का भरसक प्रयत्न किया है। आज ब्राह्मण भी उन यातनाओं को झेलकर तड़प रहे हैं, जो दलितों ने सदियों से झेला है। समाज के खोखलेपन को यथासंभव लेखक ने पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया है। "महाशूद्र" जातिभेद का पोल खोलनेवाली कहानियों में महत्वपूर्ण मानी जाती है। यह भाव प्रधान कहानी है।

मोहनदास नैमिशराय जी की कहनियाँ पढ़ने से पता चलता है कि दलित साहित्य का मुख्य विचार ही अन्याय का विरोध करना है । यह साहित्य दलित समाज की वास्तविक पहचान कराने वाला साहित्य है । दलित साहित्य सवर्ण चेतना के विपरीत दलित चेतना का प्रचार-प्रसार करता है । प्रमुखत: दलित कहानियों में दो गुणों का होना आवश्यक है,पहला भेदभाव यानि व्यवस्था का विरोध करना तथा दूसरे जीवन में बदलाव का संकल्प बनाए रखना ये दोनों गुण मोहनदास जी की कहानियों में देखने को मिलता है ।

## ३.३. ओमप्रकाश वाल्मीकि

**जन्म तथा बाल्यकाल:**

ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म उत्तर प्रदेश के जिला मुजफरनगर के बरला नामक गाँव में ३० जून १९५० को हुआ । ओमप्रकाश वाल्मीकि का परिवार उत्तर प्रदेश के जिला मुजफफर नगर में है । इनके माता का नाम श्रीमती मुकंदी और पिता का नाम छीटनलाल है । ओमप्रकाशजी का बाल्यकाल अत्यंत दयनीय स्थिति से गुज़रा और घर की आर्थिक स्थिति बहुत कमज़ोर थी । उनके बचपन में अस्पृश्यता छुआ-छूत की भावना सर्वत्र व्याप्त थी । ओमप्रकाश को स्कूल में दूसरों से दूर ज़मीन पर बैठना पड़ता था । कभी-कभी एकदम पीछे के दरवाज़े के पास बैठना पड़ता था । ओमप्रकाश का बाल्यकाल तिरस्कार और अपमान के अनेक घटनाओं से भरा पडा है ।

**शिक्षा-दिक्षा:**

ओमप्रकाशजी ने मास्टर सेवकराम मसीही के खुले, बिना कमरों, बिना टाट-चटाईवाले स्कूल में अक्षर ज्ञान शुरू किया। उसके बाद उनकी पढ़ाई बेसिक प्राइमरी विद्यालय में हुई। वहाँ पाँचवी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। उसके पश्चात घर की आर्थिक स्थिति के कारण पढ़ाई रूक गई। लेकिन ओमप्रकाश वाल्मीकि जी में पढ़ने की ललक थी। भाभी की सहायता से अपनी पढ़ाई आगे बढ़ाते रहे। बारहवीं कक्षा तक उन्होंने त्यागी इटंर कॉलेज, बरला में पढ़ाई की। बाद में अमप्रकाशजी के भाई जसबीर, ने देहरादून के डी.ए.वी. कॉलेज में उनको भरती किया। वहाँ कॉलेज की गतिविधियों में उनकी सक्रियता बढ़ने लगी। अनेक कठिनाईयों का सामना करते हुए एम.ए. की डिग्री हासिल की और समाज में बदलाव लाने के प्रयत्न में अपनी लेखनी चलाना शुरू किया।

**कृतित्व:**

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने पद्य और गद्य दोनों विधाओं में लेखन कार्य किया हैं। उन्होंने कविता, कहानी, आत्मकथा और आलोचनात्मक आदि क्षेत्रों में सफलता हासिल की हैं। आपके अधिकांश लेखन विषय दलितों पर आधारित है। आपकी रचनाएँ कई भाषाओं में अनुदित भी हो चुका है। जैसे-पंजाबी और अग्रेंजी।

**कविता संग्रह:**

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के कविता संग्रहों में दलितों की पीड़ा, उत्पीडन और उसके विरूद्ध आक्रोश तथा परिवर्तन का संकल्प करते हैं। 'बस बहुत हो चुका' और 'सदियों का संताप' कविता संग्रहों में ओमप्रकाशजी कुंठा और विद्रोह को बडे सरल शब्दों में व्यक्त करते हैं। अपने अछूत होने की निजी कोफत को ही नहीं बल्कि पूरे समाज के दुःख को इसमें व्यक्त किया गया है।

**कहानी संग्रह:**

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के दो कहानी संग्रह हैं-

**१. सलाम**

उसमें कुलमिलाकर चौदह कहानियाँ संकलित हैं। ये कहानियाँ दलित जीवन की संवेदनशीलता और अनुभवों की कहानियाँ हैं।

**२. घुसपैठिये**

इसमें बारह कहानियाँ हैं। यह कहानियाँ दलित संदर्भों से के यथार्थ की अभिव्यक्ति जुड़ी तथा दलित जीवन हैं।

**आत्मकथा:**

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी की आत्मकथा है- 'जूठन'(१९६९) इसमें लेखक के जीवन की प्रामाणिक घटनाओं का चित्रण है। 'जूठन' का अग्रेंजी और पंजाबी भाषाओं में भी अनुवाद हुआ है।

दलित जीवन की पीड़ाएँ, असहनीय और अनुभवदग्ध हैं। ऐसे अनुभव जो साहित्यिक अभिव्यक्तियों में स्थान नहीं पा सकें थे। एक ऐसी समाज व्यवस्था में उन्होंने साँस ली है, जो बेहद क्रूर और अमानवीय है और दलितों के प्रति असंवेदनशील भी। इसी समाज की क्रूरताओं का परिचय एक नए कोण से हमें इस आत्मकथा में मिलता है।

**आलोचनात्मक ग्रंथ:**

"दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र" दलित साहित्यांदोलन को आगे बढ़ाते हुए दलित रचनात्मकता के मूलभूत आस्थाओं और प्रस्थान बिंदुओं को उभारती है।साहित्य में स्थापित तथा वर्चस्वशाली आस्थाओं को चुनौती भी देती है। इस पुस्तक में दलित साहित्य और उसकी सोच एवं दृष्टि को व्याख्यायित करने का भी प्रयास किया गया है।

**संपादन:**

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी ने "प्रज्ञा साहित्य के दलित विशेषांक" का अतिथि संपादक के रूप में कार्यभार सँभाला है।

**साहित्यिक सम्मान:**

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी की समस्त दलित साहित्य को देखते हुए सम्मानित किया गया है। १९९३ में डॉ. 'अबेंडकर राष्ट्रीय पुरस्कार' और १९९५ में 'परिवेश सम्मान' तथा १९९६ में 'जयश्री सम्मान' प्रदान किया गया है।

## ३.३ ओमप्रकाश वाल्मीकि :

हिंदी दलित साहित्यकार ख़ुद तो जागृत है ही, अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से वह अपने समुदाय में चेतना भरना चाहता है। इसलिए वही दलित लेखक है जो दलित साहित्य लिख सकता है, जिसमे दलित संबंधी चेतना है। और यह सच भी है की सिवा चेतना के कोई भी साहित्य का निर्माण हो ही नहीं सकता। हिंदी दलित साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के मुकान्तर से व्यवस्था के प्रति क्रांति करना शुरू किया, यहाँ तक कि वे समस्त व्यवस्था को ही खारिज करने लगे हैं। हिंदी दलित साहित्यकारों में ओमप्रकाश प्रकाश जी का नाम बड़ा सम्मान के सात लिया जाता है। वाल्मीकि जी ने अपनी कहानियों में दलित ज़िंदगी के भोगे हुए यथार्थ का निष्पक्ष वर्णन करने की कोशिश की है।

**घुसपैठिये -**

वाल्मीकि जी ने अपने कहानी संग्रह घुसपैठिये में अवर्ण जीवन के यथार्थ को खुलेपन के साथ दर्शाया है। इस संग्रह की कहानियाँ दलितों के वेदना, शोषण और सुख-दुःख, उनकी मुखरता और संघर्ष की कहानियाँ हैं। वाल्मीकि जी की कहानियों में दलित तथा स्त्री की समस्या एवं पीड़ाएं मिलकर एक हो गई हैं।

### ३.३.१ घुसपैठिये :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'घुसपैठिये' कहानी में भारतीय समाज के अतंर्गत  शिक्षा के क्षेत्र में होनेवाले अन्याय का चित्रण किया गया है। दलित छात्रों के लिए प्रयुक्त आरक्षण में ही उच्च वर्ग के छात्रों का प्रवेश होना आदि बातें इस कहानी में प्रयुक्त किया गया है । इस कहानी का प्रमुख पात्र है राकेश I राकेश दलित होने के कारण उसको भी शिक्षा के क्षेत्र में अन्याय सहना पड़ता है। महाविद्यालय के मेस में उसको अलग बैठना पड़ता है। उसकी ओर हीन भावना से देखा जाता है। इन सभी अन्यायों का विरोध करनेवालों को रैगिंग का नाम लेकर चुप कराया जाता है।

राकेश एक दफ्तर में काम करता है। दलित होने के नाते दलितों के प्रति सहानुभूति प्रकट करता रहता है | दलित छात्रों को महाविद्यालय में भर्ति कराना और पदोन्नति दिलाना आदि सहायता करता रहता है। एक दिन राकेश को अपने मित्र से फोन आता है और उसे पता चलता है कि सोनकर और सुनीता की मृत्यु हो गयी है। परन्तु असल में उन दोनों की हत्या हुई भी, है लेकिन सवर्ण लोगों ने ख़ुदकुशी का नाम देकर इस हादसे को छिपाने की कोशिश करते हैं। मगर राकेश इस हत्या को लेकर लड़ना चाहता है। दलित छात्र और राकेश मिलकर इसका विरोध भी करते हैं।

### ३.३.१.२ कूड़ा घर :

'कूड़ा घर' कहानी का नायक अजबसिंह एक कार्यालय में कार्य करता रहता है। दलित होने के कारण इनमें अपने समाज के प्रति आदर की भावना है। इस कारण से दलित संघ के अध्यक्ष कृष्णराज के साथ आरक्षण बचाव जुलूस में भाग लेता है। जुलूस की सफलता के लिए पूरे लगन के साथ काम करता है। आरक्षण का विरोध करनेवाले बहुत लोग होने पर भी प्रधानमंत्री से मिलने अध्यक्ष के साथ जाता है। लेकिन प्रधानमंत्री से मिलने का मौक़ा नहीं मिलता। इस कारण वह निराश हो जाता है। एक ओर बिना आरक्षण के दलितों के जीवन में कुछ हासिल करना हो या आगे बढ़ना कष्टदायक हो सकता है, इन विचारों से वह बहुत दुःखी था, दूसरी ओर ये दलित होने के कारण घर का मालिक इनको घर से बाहर निकालने की कोशिश करता है ।

घर के मालिक के साथ तो इनका व्यवहार अच्छा था मगर अचानक ऐसे होने पर वह दु:खी हो जाता है। मालिक से कुछ बात करना चाहता है, लेकिन पत्नी को देखकर चुप हो जाता है। इन सभी हादसों के कारण पूरा समाज कूड़ाघर जैसा दिखने लगता है। इस कूड़ाघर में वह दूसरे मकान की तलाश में निकल पड़ता है। इस कहानी में सामाजिक विडंबना को दर्शाया गया है ।

### ३.३.१.३ यह अतं नहीं :

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने इस कहानी के माध्यम के दलितों में आत्मविश्वास जगाने की कोशिश की है। चमार जाति के मंगलू तमाम अभावों के बावजूद भी अपने बेटे किसन को अच्छी शिक्षा दिलाता है, लेकिन बेटी बिरमा को नहीं दिला पाता। मंगलू उसकी पत्नी और बेटी बिरमा तीनों मिलकर तेजभान के खेत में काम करने जाते हैं। एक दिन खेत का काम पूरा करके वापस लौटते समय तेजभान का लड़का सचींदर बिरमा पर बलात्कार करने की कोशिश करता है। परन्तु बिरमा की होशियारी के कारण असफल रह जाता है। मंगलू इस हादसे को लेकर थाने में शिकायत लिखने जाता है, तो थानेदार रपट नहीं लिखवा लेता है।

उसके बदले में कहता है-"फूल खिलेगा तो भौंरे मँडरायेंगे ही।"१७ यह बात सुनकर दु:खित होकर गाँव आ जाता है। गाँव आकर गाँववालों को समझाकर सचींदर के ख़िलाफ़ लड़ना चाहता है। लेकिन गाँववाले साथ नहीं देते हैं। पंचायत में शिकायत करने की इच्छा से वह सरपंच के पास चला जाता है। लेकिन मुखिया उसे भला बुरा कहते हुए अपने बेटे, बहू को समझाने का उपदेश देता है। मंगलू घर आकर मजबूरी से बेटे को पीटता है, तो बिरमा रोते हुए कहती है कि-"बापू हमारे पास न ताक़त है न रूतबा। लेकिन अपनी जान देकर आत्मसम्मान तो माँग ही सकते हैं।"१८ ऐसे कहते हुए अपने पिता को सांत्वना देती है। इसके बाद पंचायत का निर्णय सचींदर के पक्ष में आ जाता है, तो गाँव के सभी लोग निराश हो जाते हैं, और बिरमा का साथ देने के लिए तैयार हो जाते हैं।

### ३.३.१.४. मुंबई कांड :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'मुंबई कांड' कहानी में सुमेरू मुख्य पात्र है। सुमेरू एक दफ्तर में काम करता है। जब उस प्रदेश में उनके जाति का आदमी मुख्यमंत्री बनता है, तो उस बात को लेकर हर दिन कचहरी में काम करनेवाले गुप्ता उससे छेड़खानी करता है। मुंबई कांड से संबंधित समाचार सुमेरू को क्षुब्ध कर देता है। उस समय वर्षों से हो रहे अयोध्या तथा उत्तरकांड जैसे मुद्दों से पूरा देश प्रभावित रहता है। मुंबई में डॉ. अबेंडकर के समर्थकों पर गोली चलाना, मूर्तियों को तोड़ना, ये सब देखकर सुमेरू के मन में विद्रोह की भावना फूट पड़ता है। ग़ुस्से में आकर जूतों की माला बनाकर गाँधी प्रतिमा को पहनाने जाता है। लेकिन उसे यह काम अनुचित लगने पर इस विचार को छोड़ देता है और निराश होते हुए घर लौटता है ।

### ३.३.१.५. मैं ब्राह्मण नहीं हूँ :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ' कहानी में मोहनलाल शर्मा और गुलजारी लाल शर्मा दोनों पड़ोसी होने के नाते दोनों में बड़ी मित्रता थी। इसी मित्रता को आगे बढ़ाते हुए मोहन लाल शर्मा के लड़के अमित का गुलजारी लाल शर्मा की बेटी के साथ विवाह निश्चित हो जाता है। बीच में अचानक गुलजारी लाल शर्मा ब्राह्मण न होने का पता चलता है, तो दोनों के बीच वाद-विवाद चलता है। दोनों बनाए हुए संबंध को तोड़ लेना चाहते हैं। लेकिन गुलजारी लाल की बेटी सुनिता अमित के पास जाकर कहती है "मैं ब्राह्मण नहीं हूँ ।" अमित इस बात से विचलित नहीं होता क्योंकि वह आधुनिक विचारवाला होने के कारण इन दोनों में कोई समस्या खड़ी नहीं हो पाती है।

इस कहानी के माध्यम से कहानीकार ने स्पष्ट कह दिया है कि छुआ-छूत के बंधनों को तोड़ना मात्र नई पीढ़ी के हाथ में है। नई पीढ़ी किसी प्रकार के बंधन को नहीं मानेगी, मात्र मनुष्यता उसका ध्येय है।

### ३.३.१.६. दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी

समाचार पत्रिका के कार्यालय में काम करनेवाले दिनेशपाल जाटव से संबंधित कहानी है। दिनेशपाल जाटव एक दलित होने के कारण उसे संपादक पद के लिए, आवश्यक सभी योग्यताएँ होने पर भी नौकरी नहीं मिलती है। इसीलिए दिनेशपाल जाटव अपना नाम दिग्दर्शन कर लेता है। इसके बाद एक पत्रिका कार्यालय में उसे नौकरी मिलती है। उस कार्यालय में वह अच्छा अनुभव हासिल करता है। लेकिन काम में स्वतंत्रता नहीं थी। संपादक के कहने पर ही सभी कार्य चलते थे। एक दिन संपादक अन्य काम में बाहर जाने पर दिग्दर्शन पर जिम्मेदारी आ जाती है। दिग्दर्शन दलित विरोधी समाचार को बिना अनुमति छापने का आदेश देता है।

दूसरे दिन आफ़िस पहुँचते ही उसके हाथ में नौकरी से बर्खास्त किया हुआ पत्र मिलता है। इस कार्य से दिग्दर्शन क्रोधित हो जाता है। उसके सामने अपनी पुरानी यादे उमड़कर आने लगती हैं । इस कहानी में दिग्दर्शन को दलित होने के कारण किन-किन समस्याओं से गुज़रना पड़ता है आदि विचारों को दर्शाने की कोशिश की गयी है।

### ३.३.१.७. रिहाई :

डॉ. ओमप्रकाश द्वारा लिखित 'रिहाई' कहानी में दलितों तथा ग़रीबों पर इस समाज में शोषण किया जाता है, और उस शोषण के प्रति नई पीढ़ी के आक्रोश को व्यक्त करती है ।

लाला के गोदाम में रामसुखला मिट्टन और उसकी पत्नी सुगुनी दोनों कई सालों से काम करते हैं । इन दोनों को गोदाम में बंदी के रूप रखा जाता है । इनको कभी बाहर जाने का मौक़ा नहीं मिलता है, किसी भी कारण से उन्हें काम से छुटकारा नहीं मिलता । एक दिन मिट्टन की बुख़ार ग्रस्त स्थिति में भी उससे काम करवाया जाता है। काम करते समय ऊपर से बोरा उनके पीठ पर गिर जाने के कारण वह घायल हो जाता है। मिट्टन दर्द के मारे रोना शुरू करता है । पति की इस स्थिति को देखकर सुगुनी लाला से प्रार्थना करती है। जब लाला नहीं सुनता है तो वह उसके सामने गिड़गिड़ाती है। बाद में लाला दोनों को गोदाम में बंद करके ताला लगा कर वहाँ से चला जाता है। सुगुनी दरवाज़े के पास आकर चिल्लाते हुए दम तोड़ती है। उस समय उनका बेटा छुटकू नींद से जाग जाता

है ।

माँ के पास आकर देखने से उसे पता चलता है कि उसकी माँ मर गयी है। तब वह पिता को बुलाने जाता है तो उसे भी मरा हुआ पाता है। इस दर्दनाक सन्दर्भ को देखकर क्रोधित होकर पूरे गोदाम को आग लगा देता है। गोदाम से उठ रहे धुएँ को देखकर लाला ताला खोलकर अदंर आकर मरे हुए पति-पत्नी को देखकर डर जाता है। उसी समय छुटुकू ग़ुस्से में आकर लाला को पत्थर से मारकर बाहर निकलता है और बाहर खड़ी कार के शीशे को भी तोड़ देता है। लाला पीछा करने पर भी छुटुकू रोते हुए वहाँ से भागता है । इस कहानी को पढ़ने के उपरांत यह महसूस होता है कि ग़ुलामी आधुनिक काल में भी मौजूद है और उसके प्रति विद्रोह करने की क्षमता भी है ।

### ३.३.१.८. जंगल की रानी :

'जंगल की रानी' कहानी में स्त्री शोषण को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है । इस कहानी में दैनिक 'नया सवेरा' पत्रिका के संपादक सोमनाथ पर जानलेवा हमला होता है । इस कारण वह अस्पताल में अतिंम साँसे गिनता रहता है तब उसके आँखों के सामने कमली की धुँधली छाया दिखाई देती है।

यह कहानी फ्लैशबैक शैली में है। आदिवासी समुदाय में जब महिला प्रशिक्षण शिबीर का कार्यक्रम आयोजित होता है उसमें भाग लेने के लिए ज़िला कलेक्टर, ज़िला पुलिस आयुक्त और एम.एल.ए तीनों आ जाते हैं। उस कार्यक्रम में आदिवासी महिला कमली भी भाग लेती है । वहाँ आये हुए सरकारी तीनों अधिकारियों की नज़र कमली के सुंदरता पर पड़ जाती है। कार्यक्रम पूरा होते ही वे कमली पर बलात्कार करने की कोशिश करते हैं। कमली के इंकार करने पर उसे मारकर रेल की पटरी पर डाल कर आत्महत्या घोषित करते हैं। इस विषय का पता चलते ही सोमनाथ दैनिक पत्रिका के संपादक वहाँ पहुँचकर पूरी जाँच - पड़ताल कर असलियत का पता लगाकर पत्रिका में छाप देते हैं, तो उसे भी मारने की कोशिश की जाती है। इस कारण उसे अस्पताल में रहना पड़ता है। इस कहानी से ये पता चलता है कि इस समाज के सवर्ण ने अवर्णियों को अपने से दूर रखा है, उसे दलित का नाम देते हुए गाँव से अलग करता है । ऐसे में एक

आदिवासी महिला पर बलात्कार करते है तों कितने कमीने होंगे ये सवर्ण।

### ३.३.१.९ ब्रह्मास्त्र-

जाति का भेदभाव भारतीय समाज में बहुत पुराना है। यह भेदभाव कभी भी किसी को भी भेद सकता है। अशिक्षित ही नहीं बल्कि शिक्षितों में भी यह भेदभाव दिखाई देता है जो मनुष्यता का अभिशाप है।

अरविंद नैथानी और कंवल कुमार दोनों ने डिगरी, डी.ए.वी कॉलेज से एक साथ ली थी। अरविंद नैथानी का प्रिय मित्र कंवल था। इसीलिए उनेक विवाह की तारीख़ तय होते ही सबसे पहले उसने कंवल को सूचना दी थी। बारात में चलने के लिए आमंत्रित भी किया था। शादी के दिन कंवल ने कई झूठ बोलकर मैनेजर से दो दिन की छुट्टी माँगी और नौ बजे से पहले ही अरविंद के घर पहुँचा। कंवल को देखकर अरविंद और उसके पापा बहुत ख़ुश हुए थे।

विवाह में जाने के लिए कंवल भी सभी के साथ बस की ओर चल दिया। बस में बैठने के लिए पैर रखते ही पंडित माधव प्रसाद भट्ट ने उसे रोका। वह अरविंद के परिवार के पुरोहित थे। सभी पूजा पाठ, संस्कार वे ही करते आ रहे थे। पंडित ने कंवल से कहा कि- "यह किसी डोम चमार की बारात नहीं है। यह नैथानियों की बारात है जो टिहरी के ऊँचे ब्राह्मणों में जा रही है। इसमें एक डोम के लिए कोई जगह नहीं है.. जा.. अपने घर वापस।"१९ पंडित का एक एक शब्द उपेक्षा और घृणा की आग से भरा था। कंवल ने पूरी ताक़त से चीख़कर पंडित पर वार करना चाहा। लेकिन दूसरे ही पल में उसने अपने आक्रोश पर क़ाबू पा लिया था। वेद, उपनिषत् आदि मनुष्यता और भाईचारे की बात कहते हैं पर व्यवहार में यह कहीं दिखाई नहीं देता।

पंडित, अरविंद के पापा विष्णुदत्त नथानी के पास जाकर चिल्लाने लगा। उन्होंने पंडितजी को शांत करने के लिए बहुत कोशिश की। लेकिन पंडित जी उसकी बातों में नहीं आये। पंडितजी बारात में आने के लिए भी तैयार नहीं थे। उसने विष्णुदत्त नैथानी से कहा- "आपका दिमाग़ ख़राब हो गया है...मैं आपसे ज़्यादा बहस नहीं करना चाहता...आपको लगता है उसे ले जाना उचित और ज़रूरी है तो मैं नहीं जाऊँगा... मुझे

क्षमा कीजिए... मैं यहीं से लौट जाता हूँ वह डोम पढ़ा.. लिखा है उसी से शादी के संस्कार भी करा लेना..।"२० यह बात नैथानी की छाती पर ब्रह्मास्त्र के रूप में लगी । नैथानी ने कल्पना भी नहीं कि थी अचानक ऐसा कुछ घटित हो जाएगा। वे गहरे धरम संकट में फँस गये। कंवल से सीधे बात करने की मन:स्थिति और साहस उसमें नहीं था। उसने पंडितजी की बात मानकर बस में बिठा दिया। शिक्षित जनता जिस भेदभाव को भूलना चाहता है रूढ़िगत विचारवाले उन्हें भूलाने से रोकते हैं। कंवल अभी भी बस के पास ही खड़ा था। उसके मन में उथल-पुथल शुरू हो गई थी। पंडितजी और कंवल के पिताजी के बीच भी जाति को लेकर पहले ही लड़ाई हुई थी।

पिताजी ने पंडितजी को पैर से जूता लेकर भगाया था। यह घटना डाकरे में बहुत दिनो तक चर्चा का विषय रहा था। कंवल के मन में शंका उभर आयी थी कि कहीं पंडित उस घटना का प्रतिशोध तो नहीं ले रहा है। कंवल एक भयावह स्थिति में स्वयं को फँसा महसूस कर रहा था। नैथानी जी ने अपने पुत्र को सारा किस्सा सुनाया। वह अपने ख़ास दोस्त की बेइज्ज़ती नहीं करना चाहता था। उन दोनों के बीच जात-पाँत की बात कभी नहीं आयी। अरविंद ने पंडित जी के नज़रिए को मानने से इनकार किया। पिता के बहुत कोशिशों के बावजूद अतं में अरविंद कंवल को समझा बूझाकर विदा करने के लिए तैयार हो गया। उसने कंवल को बुलाया लेकिन दु:ख के कारण अपने सारे ग़ुस्से को मुसकराहट में बदलने की कोशिश की और अरविंद का कंधा थपथपाकर ख़ुशी से बारात लेकर जाने को कहा। अरविंद की माफ़ी माँगने पर कंवल ने उसको सांत्वना देकर तेज क़दमों से बाहर की ओर चल पड़ा।

बस के पास खड़े पंडितजी को देखकर कंवल के मन में ग़ुस्सा उभर आया था। लेकिन अरविंद के बारे में सोचकर उसने अपने ग़ुस्से को रोका । पंडित भी डरकर वहाँ से चला गया था। कंवल ने एक लंबी साँस खींची और घर की ओर चला गया। ऐसी कहानियाँ एक प्रश्न को उभारती हैं कि विकास की ओर अग्रसरित इस देश में, गाँधी के इस देश में कब तक व्यक्ति अपनी क़ाबिलीयत को सिद्ध करने पर भी मात्र जाति के कारण अमानवीय स्थिति को झेलता रहेगा। इन प्रश्नों का हल निकलना अति-आवश्यक है।

### ३.३.२ सलाम:

कहानी संग्रह में दलित जीवन की अनुभवों तथा संवेदनशीलता को उजागर करती श्रेष्ठ कहानियाँ संकलित की हैं । सलाम कहानी संग्रह में से अधिकांश कहानियाँ हंस पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं ।

### ३.३.२.१. सलाम :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'सलाम' कहानी में जात-पाँत और छुआ-छूत से संबंधित समस्याओं का चित्रण किया गया है। कमल और हरिश दोनों अच्छे मित्र थे। कमल हरिश के घर आता है। उसका पूरा नाम कमल उपाध्याय था। वह ब्राह्मण जाति का था और हरिश चूहड़ जाति का था। शादी के दिन होने के कारण घर में भीड़ ज़्यादा थी। कमल गाँव के स्कूल के बरामदे में सो जाता है। सुबह उठकर जब होटेल में चाय पीने के लिए जाता है तो इसे चूहड़ जाति का समझकर चाय नहीं दी जाती है। इस बात को लेकर झगड़ा भी हो जाता है। बाद में जब घर पहुँचता है तो वहाँ का वातावरण भी इसे अजीब लगता है। इसे देखकर कमल को अपने घर में हरिश को ले जाने के कारण से जिस प्रकार माँ ने उस पर गंगाजल छिड़ककर पवित्र किया था वह संदर्भ भी याद आ जाता है।

### ३.३.२.२. सपना :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'सपना' कहानी में कारख़ाने के साथ नये बसाए आवसीय कालनी में कारखाने के अधिकारी को लगता है कि इस कालनी में एक सुंदर मंदिर का निर्माण क्यों न करें? इस सिलसिले से संबंधित सभी अधिकारियों और लोगों को बुलाकर इस बात का ज़िक्र करते हैं। और वहाँ एक कमेटी भी बिठाई जाती है। सदाशिव शिरोडकर मंदिर निर्माण का सपना देखते है।

अधिकारी के सभी धर्म के लोगों में विचारों के मेल मिलाप की वजह से मंदिर निर्माण का कार्य नहीं हो जाता। शिरोडकर के बदले में आए अधिकारी के प्रयास और गौतम जैसे व्यक्तियों के प्रयास से बालाजी मंदिर का निर्माण हो जाता है। मंदिर में भगवान की मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा करने के लिए तैयारियाँ करने लगते हैं। सभी लोगों को बुलाया जाता है। उसमें गौतम परिवार के साथ आता है। वह सबसे आगे पूजा में बैठने

जाता है। नटराज उसे पीछे बैठने को कहता है। कारण पूछने पर कहता है कि शुभ कार्यों में एस.सी को आगे नहीं बिठाते। इस बात से झगड़ा शुरू हो जाता है। प्राण-प्रतिष्ठा का कार्यक्रम रोका जाता है। गौतम निराश होता है। कुछ समय के बाद भगवान की मूर्ति का प्राण प्रतिष्ठा कार्य संपन्न होने के साथ शिरोडकर जी का सपना पूरा होता है।

### ३.३.२.३. बैल की खाल :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'बैल की खाल' कहानी में पंडित ब्रिज मोहन का बैल बूढ़ा और कमज़ोर होने के कारण रास्ते के बीच में मर जाता है। उसी गाँव के दलित काले और भूरे दोनों मरे गाय को हटाते थे। जब पंडित ब्रिजमोहन उन्हें बुलावा भेजने पर नहीं आते हैं तो उसे ग़ुस्सा आ जाता है। कुछ समय बाद जब वे दोनों आते हैं तो उन्हें ख़ूब डाँटते हैं। डाँट खाने के बावजूद भी दोनों बैल को उठाकर गाँव से बाहर ले जाते हैं। अपने बेटे छुटुकू की सहायता से उसकी खाल चीरते हैं। दोनों खाल को बाज़ार में भेजने के लिए गाड़ी के इतंज़ार में पुलिया पर बैठ जाते हैं। लेकिन कोई गाड़ी नहीं रोकता दोनों अपने ख़यालों में खो जाने के बाद महसूस करते हैं।

अगर बचपन में ख़ूब पढ़ते तो इसे भेजने की नौबत नहीं आती। उसी से जीवन चलाना भी नहीं पड़ता था। बैठे-बैठ शाम हो जाती है। ट्रक नहीं मिलता है। जितने जल्दी शहर पहुँचकर खाल बेचते उतना ही अच्छा होता। नहीं तो खाल सड़ जाता था। ऐसे सोचते समय तेज़ी से आती गाड़ी के नीचे आकर गाय का बछड़ा गिर पड़ता है। दोनों बछड़े को बचाने का प्रयास करते हैं। लेकिन कुछ फ़ायदा नहीं होता। इस प्रकार यहाँ दोनों का चरित्र श्रेष्ठ बताने का प्रयत्न किया गया है।

### ३.३.२.४. भय:

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'भय' कहानी में दिनेश मुख्य पात्र है। वह एस.सी होने पर भी जाति छिपाकर एक आफ़िस में काम करता रहता है। एक फ्लेट में अपना घर बसाता है। एक दिन घर में माई मदारन की पूजा करना चाहता है तो उसके लिए सूअर का मांस चढ़ाना अनिवार्य होता है। इसलिए अपने परिचितों से बचकर सूअर का मांस ले आता है। माई मदारन की पूजा करके मांस को चढ़ाता है। लेकिन फ्लेट में किसी को पता न चले ऐसे सोचते चोरी से सब इतंज़ाम करता है। लेकिन दिनेश को

ज़्यादा भय रामप्रसाद तिवारी का रहता है। अगर वह घर आ जाता है तो पता चल जाएगा। आफ़िस में भी जाति का पता चल जाएगा इसी डर से सो जाता है। उसे रात को सपने में वही सूअर का बच्चा और रामप्रसाद तिवारी की डरावनी सूरत सामने आ जाती है तो वह भय से उठकर चिल्लाते हुए घर से बाहर निकलता है। चिल्लाते-चिल्लाते अँधेरे में सब के नज़रों से ग़ायब हो जाता है।

### ३.३.२.५. कहाँ जाए सतीश :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'कहाँ जाए सतीश' कहानी में नगरपालिका में सफ़ाई कर्मचारी बनाने के लिए अपने बेटे सतीश को उनके माँ-बाप ले जाना चाहते हैं। लेकिन उनके इच्छा के विरूद्ध सतीश रविशर्मा के सहायता से वह सुदर्शन पंत के यहाँ रहना शुरू करता है। वहीं रहते एक फैक्टरी में काम करना शुरू करता है।

लेकिन सतीश दलित होने का विषय छिपाके रखता है। एक दिन अचानक सतीश के माँ-बाप रविशर्मा के घर आ जाते हैं। उनसे पता चलता है कि सतीश डोम जाति का है। मिसेज पंत ने उसी समय से सतीश को घर में रखने से इनकार कर देती है। पति के समझाने पर भी नहीं मानती। सतीश को घर से निकाला जाता है। वह अपने फैक्टरी मालिक एजाज से मिलता है। उनसे अपनी कहानी सुनाता है। लेकिन एजाज सतीश को कुछ मदद नहीं कर सकता है इसीलिए सतीश वहाँ से रात में ही निकल पड़ता है।

### ३.३.२.६. ग्रहण :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित इस कहानी में एक स्त्री की मनोव्यथा का सुंदर चित्रण है। इसमें बिरमपाल और उसके घरवालों को एक कमी थी कि घर में एक भी बच्चा नहीं था। इसी बात को लेकर पति-पत्नी के बीच झगड़ा भी होता था। पंडित के सलाह के अनुरूप चंद्र ग्रहण के दिन भंगी बस्ती के लोगों को, दान देने से समस्या का समाधान होगा। पंडित ने इन बातों पर विश्वास करते हुए चंद्रग्रहण के दिन भंगी बस्ती के लोगों को दान देते है। दान लेनेवाले भीड़ में से रमेसर दिखाई देता है जो भंगी युवक था। बिरमपाल की पत्नी उसे अनाज देने के बहाने उसे घर के अदंर ले जाती है। वह वहाँ रमेसर से कहती है मुझे एक बेटा चाहिए। बेटा दे दो दान में मन चाहे गेहूँ के बोरे लेते जाओ।

दोनों एक हो जाने के बाद बिरमपाल की पत्नी की इच्छा कुछ  दिनों बाद में पूरी हो जाती है।

### ३.३.२.७. बिरम की बहू :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित इस कहानी में रमेसर जो भंगी बस्ती का युवा लड़का था। चंद्रग्रहण के दिन जब वह बिरम की बहू से जो संबंध अचानक हुआ था। इससे उसके मन की भूख बढ़ गई थी। तब से बहू को देखने को तरसता था और उसके आचरण में बदलाव आया था। उसे देखने की इच्छा से काम पूछकर हवेली पहुँचता है। लेकिन निराश लौटना अनिवार्य हो जाता है। इधर बिरम की बहू का पाँव भारी होने से वह रमेसर को मन ही मन शुभेच्छाएँ देने लगी थी। रमेसर बहू को देखने की इच्छा से पागल हो गया था। एक दिन अचानक मंदिर की ओर बढ़ते स्त्रियों के समूह में से बहू को देखने का मौक़ा मिलता है। वह बहुत ही नज़दीक से उसे देखता रहता है। लेकिन बिरमा की बहू उसकी ओर बिना देखे आगे निकल जाती है। इससे निराश हो रमेसर भारी मन से वापस घर लौटता है।

### ३.३.२.८. गोहत्या :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'गोहत्या' कहानी शोषण से संबंधित है। गाँव के मुखिया की गाय, जंगल में आटे में रखे बारूद खाने से मर जाती है। मुखिया इसका फ़ायदा उठाकर अपने घर का नौकर सुक्का के ऊपर अनुमान करके उसे डाँटता है।

समय के ताक में रहनेवाले मुखिया, सुक्का पर गोहत्या करने का आरोप लगाकर पंचायत बिठाता है। उसमें सभी अछूत भाग लेते हैं। गोहत्या का मामला होने के कारण से आरा में तपे लोहे के काल को दोनों हाथों में थामकर गऊमाता कहने पर कुछ  असर नहीं हुआ तो निर्दोष माना जाएगा। इसका प्रयोग सुक्का पर ही पहले किया जाता है। अछूत सुक्का की चीख़ चारों ओर गूँज उठती है | इसे देखकर निर्दयी मुखिया का चेहरा खिल उठता है।

गाँव के मुखिया के घर में सुक्का काम करता रहता है। मुखिया सुक्का के पत्नी पर बूरी

नज़र डालता है। सुक्का से कहता है कि तुम्हारी पत्नी को मेरे घर काम के लिए भेजो। सुक्का भेजने से मना करता है। इसी द्वेष को अपने मन में रखता है आगे एक दिन गाँव के मुखिया की गाय बारूद खा कर मर जाती है तो इसका आरोप सुक्का पर लगाने की कोशिश करता है। इसके माध्यम से अपना बदला लेना चाहता है।

### ३.३.२.९. ज़िनावर :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'ज़ीनावर' कहानी स्त्री शोषण से संबंधित है। इस कहानी में चौधरी के आदेशानुसार जगेसर बहू को हवेली से उसके मायके ले जाने के लिए तैयार हो जाता है। लेकिन बहू के आँखों में आसूं देखकर जगेसर को आश्चर्य हो जाता है। फिर भी उसे लेकर जाता है। वह राह में थककर बैठ जाती है। उसे उठाने को बहुत कोशिश करता है। लेकिन विफल हो जाता है। जगेसर के बहुत पूछने पर बहू का गला भर उठता है। वह बोलती है-मुझे हमेशा के लिए बाहर निकाल दिया गया है। उसका कोई मायका नहीं और यह भी पता चलता है कि चौधरी के घर में स्त्रियों पर अत्याचार किया जाता है। मुझ पर अत्याचार करने की कोशिश में कामयाब न होने कारण उसने मुझे हवेली से बाहर निकाल दिया है। मेरा कोई मायका नहीं वह एक ज़िनावर है। इसका पता चलते ही जगेसर के मन पर बुरा असर होता है। वह इन जैसे ज़िनावर के लिए अपना जीवन समर्पित करने का दु:ख व्यक्त करता है।

### ३.३.२.१०. कुचक्र :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'कुचक्र' कहानी एक एस.सी कर्मचारी जिनका नाम आर.बी है। वह निम्न जाति के होने के कारण कचहरी में उसे जल्द ही पदोन्नती मिलने की सूचना मिलती है; तो निशिकांत और वी.के दोनों मिलकर उसके ख़िलाफ़ कुछ न कुछ समस्याएँ खड़ा कर देते थे। निशिकांत आर.बी के ख़िलाफ़ पुलिस में रिपोर्ट करता है इसके साथ ये कुचक्र शुरू होता है। बाद में स्टोर रूम में जब आर.बी को डाला जाता है तो इस पर चोरी का इल्ज़ाम लगाया जाता है। वह स्टोर रूम में आकर ऐसे सोचता है कि एस.सी होने के कारण से स्कूल, कालेज, नौकरी सभी में किसी न किसी रूप में दबाव सहन करना पड़ रहा है, आख़िर एक दिन निशिकांत की बेटी और पंप अटेंडेंट के

विषय में हो रहे झगड़े के बीच आकर आर.बी फँसता है। उसके ख़िलाफ़ निशिकांत पुलिस में (कंप्लेट) रिपोर्ट दर्ज कराके उनको बंदी बनाने के माध्यम से अपना कुचक्र साबित करता है।

### ३.३.२.११. ख़ानाबदोश :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'ख़ानाबदोश' कहानी में मनुष्य को जीने के लिए आवश्यक रोटी, कपड़ा और मकान की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील होने का चित्रण किया गया है।

इस कहानी में मुखतार सिंह के भट्ठे में काम करनेवाले ग़रीब मज़दूर सुखिया और उसकी पत्नी मानों दोनों भट्ठे में ईटें बनाने का काम शुरू करते हैं। मालिक मुखतार सिंह छुट्टी लेने के कारण से उसका बेटा सुबेसिंह भट्ठे में आता है। सुबेसिंह की उसी भट्ठे में काम करनेवाली किसनी पर उसका बुरी नज़र पड़ने के बाद वह उसकी शिकार हो जाती है। धीरे-धीरे किसनी की हालत ख़राब हो जाती है तो उसका बुरी नजर मानो पर भी पड़ती है। वह ठेकेदार से मानों को आफ़िस में आने के लिए बुलावा भेजता है।

लेकिन मानों के बदले उनके साथ काम करनेवाला लड़का जसदेव पूछने जाता है। सुबेसिंह उसे थप्पड़ मारकर डाँटकर वापस भेज देता है। इससे उसका हालत बिगड़ जाता है। मानों और सुखिया उसे ले आते हैं। जब मानों उसके आफ़िस में नहीं आती इसी ग़ुस्से में दूसरे दिन बड़े सवेरे ईटं पाथने जाते हैं तो वहाँ कुचले डाले ईटों को देखकर निराश हो जाते हैं। मानों की लाल ईटों से घर बनाने का सपना भी अधूरा रह जाता है। दोनों इससे दुःखी होकर वहाँ से निकल जाते हैं।

### ३.३.२.१२. पचीस चौका डेढ़ सौ :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'पचीस चौका डेढ़ सौ' कहानी अशिक्षित अछूतों को समाज में किस प्रकार शोषित किया जाता है, इसका चित्रण है।

सुदीप पहली तनख़्वाह लेकर घर आते-आते बस में से कंगाल-कमज़ोर ग्रामीण व्यक्ति को देखते-देखते अपने अतीत में खो जाता है। उसके पिताजी अशिक्षित होने के

कारण मास्टर फूलसिंह को झुक-झुककर सलाम करते थे। एक दिन सुदीप ने पचीस चौका सौ कहा तो उसके पिता ने उसे बीच में टोककर पचीस चौका डेढ़ सौ कहा। सुदीप, मास्टर से जब इसी पचीस का पहाड़ा सुनाते पचीस चौका सौ बताने पर ठीक सुन लिया था। सुदीप के सही कहने पर भी पिताजी नहीं माने थे क्योंकि चौधरी ने उस दलित मनुष्य के दिमाग़ में भर दिया था कि पचीस चौका डेढ़ सौ है । तनख़्वाह पिताजी के हाथ में थमाकर उसमें से पचीस-पचीस रूपये की चार ढोइयाँ गिनने को कहता है। लेकिन पिताजी को बीस के आगे गिनना नहीं आता तो वह गिनकर पचीस चौका सौ बता देता है। उसके पिता अवाक रहते, पचीस तीस साल से चौधरी किस तरह शोषण कर रहा था इसे याद करके दु:खी मन से अपने आपको कोसने लगता है।

### ३.३.२.१३. अधंड़ :

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'अधंड़' कहानी एक अछूत अपनी जाति छिपाकर रखने का प्रयास और उसके परिणाम पर आधारित है।

अधंड़ कहानी का नायक सुक्कड़ ख़ुद का नाम मिस्टर. लाल रख देता है। सुक्कड अपने परिवार में सबसे छोटा था। अपने भाईयों के साथ सूअर के गोश्त बेचने का काम करता था। सुक्कड पढ़ने में तेज़ था। परिचितों के यहाँ रहते हुए वह अपनी पढ़ाई पूरी कर लेता है। जिसके फलस्वरूप उसे पूना के अनुसंधान संस्था में वैज्ञानिक की नौकरी मिल जाती है। तथा दीपचंदजी की भतीजी सविता से शादी हो जाती है। यहाँ रहते वह अपने एस.सी होने की बात छुपाता है। इतना मान-सम्मान प्राप्त करने के उपरान्त अपने मन में जाति छिपाने का कष्ट महसूस करता है । कुछ समय के बाद इनके दो बच्चे हो जाते हैं। वह दोनों को अच्छी शिक्षा दिलाता है। अपने परिवार के बारे में कुछ नहीं बताता है। अचानक एक बार वे सुक्कड़ के परिवारवालों से मिलते हैं तो वहाँ का वातावरण बच्चों को पसंद नहीं आता। वे बच्चे सुक्कड़ के माँ-बाप को अनजाने में कठोर शब्द कहते हैं। उसके उपरांत दोनों बच्चों को समझाने के बाद में उन्हें सत्य का पता चलता है। तब वे वहीं रहने की इच्छा प्रकट करते हैं।

इस दलित समाज में अनादी काल से हो रहे शोषण तथा अत्यचारों को ओमप्रकाश जी ने अपनी कहानियों में व्यक्त करके सामाजिक बदलाव की दिशा में कदम

बढ़ाया है। अन्ततः मुझे यह लगता है कि ओमप्रकाश जी ने समाज के उपेक्षित, शोषित, बहिष्कृत, अस्पृश्य लोगों की वेदना अवं व्यथा को अपनी कहानियों में समाज के अवर्ण वर्ग की चेतना उभारकर उनकी संवेदनाओं को जगाया है।

## ३.४.डॉ. सुशीला टाकभौरे

### जन्म तथा बाल्यकालः

दलित आदोंलन से जुड़ी महिला लेखिकाओं में डॉ. सुशीला टाकभौरे का नाम उल्लेखनीय है। उनका साहित्य दलित साहित्य को नया रूप देने और दलितों में जाग्रति और संघर्ष की चेतना जगानेवाला है। सुशीला टाकभौरेजी का जन्म मध्य प्रदेश के जिला होरंगाबाद की तहसील सिवनी मालवा के एक छोटा गाँव 'बानापुरा' में मार्च ४,१९५४ को हुआ है। सुशीलाजी के पिताजी का नाम श्री. रामप्रसाद घांवरी और माताजी का नाम श्रीमती पन्ना घांवरी है। सुशीलाजी का बचपन अपनी नानी के साथ बानापूरा में बीता था। सुशीलाजी के नाना प्रति दिन अच्छी-अच्छी कहानियाँ सुनाते थे, जिन्हें सुशीलाजी बचपन से बहुत ध्यान से सुनती थी। सुशीलाजी अकसर इन कहानियों के बारे में सोचती थी। सुशीलाजी बचपन में कल्पनाशील स्वभाव की थी।

### शिक्षा-दिक्षा:

छः वर्ष की आयू में ही उसका नाम स्कूलों में लिखाया गया था। स्कूल जाने के लिए उनके मन में बहुत ही उत्सुकता, जिज्ञासा और आग्रह था। उनकी प्राथमिक शिक्षा 'गेंज प्राथमिक शाला बानापूर' में हुई। बोर्ड की परीक्षा शासकीय नेहरू स्मारक उच्चतर माध्यमिक स्कूल में हुई। १९७४ में उन्होंने बानापूर के कुसुम महाविद्यालय से बी.ए. की डिग्री प्राप्त की। १९७५-७६ में नागपूर विश्वविद्यालय से बी.एड. परीक्षा उत्तीर्ण की। १९८६ में एम. ए. पास करने के पश्चात, नागपूर विश्वविद्यालय, नागपुर से पीएच.डी. की उपाधि हेतु शोधकार्य शुरू कीया। 'अज्ञेय के कथा साहित्य में नारी' इस विषय पर १९९२ में शोध कार्य पूरा कर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

**कृतित्व:**

लेखन के प्रति सुशीलाजी की रूचि बचपन से रही है । छः सातवी कक्षा से ही कविता और कहानी पढ़ाये जाने पर वे उसके कथ्य और भाव में डूब जाती थी। १९६८ में जब आठवीं कक्षा में पढ़ते समय उन्होंने अपनी पहली कहानी 'धर्मपाल' शीर्षक से लिखी थी । सुशीलाजी को इसी अवस्था में कविता और कहानी लेखन का शौक़ था । बी.एड. करते समय कॉलेज की स्मारिका में पहली बार 'मृगतृष्णा' कविता छपी थी । नागपुर आने के बाद साहित्यिक व्यक्तियों से भेंट, मुलाकात, विचारों के आदान-प्रदान ने साहित्यिक रूचि को प्रोत्साहित किया ।

**कहानी संग्रह**

१. टूटता वहम

२. अनुभूति के घेरे

३. संघर्ष

**काव्य संग्रह**

१. स्वाति बूँद और खरे मोती

२. यह तुम भी जानो

३. तुमने उसे कब पहचाना

४. हमारे हिस्से का सूरज

नाटक –

१.नंगा सत्य

**एकांकी संग्रह**

१. रंग और व्यंग्य ।

**लेख संग्रह**

१. परिवर्तन जरूरी है ।

**समीक्षा-**

१. हिंदी साहित्य के इतिहास में नारी

२. भारतीय नारीः समाज और साहित्य के ऐतिहासिक संदर्भ में ।

**पुरस्कारः**

सुशीलाजी के लेखन और सामाजिक कार्यों के फलस्वरूप उन्हें अनेक पुरस्कार भी मिले हैं । अनके सामाजिक और साहित्यिक संस्थाओं ने आपको सम्मानित किया है ।

उनको मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री. दिगविजय सिंह जी द्वारा मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी विशिष्ट सेवा सम्मान से सम्मानित किये गये हैं ।

वह उत्तर प्रदेश दलित साहित्य अकादमी फरूखाबाद द्वारा पद्मश्री गुलाब बाई सम्मान से भी सम्मानित हैं ।

हिमालय प्रदेश की साहित्य संस्था समन्वय हिमाचल की ओर से वह रानी रत्नकुमारी पुरस्कार एवं सारस्वत सम्मान १९९८ से भी सम्मानित हैं ।

## ३.४. डॉ. सुशीला टाकभौरे:

हिंदी दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ महिला साहित्यकारों में से एक डॉ.सुशीला टाकभौरे ने अपनी कहानियों के मध्यम से दलितों की सामजिक, धार्मिक, आर्थिक,नैतिक और शैक्षिक चित्रण के साथ-साथ सवर्णों के प्रति अपने विद्रोह को स्पष्ट किया है। उनकी ज्यादातर कहानियाँ अंबेड़करी विचारों पर आधारित हैं। उनकी कहानियों में शोषकों से

ही नहीं बल्कि अन्याय के ख़िलाफ़ आत्मकथात्मक एवं मनोविश्लेषणात्मक हैं। डॉ.सुशीला जी ने अपनी कहानियों में अपने विचार, जीवन की घटनाएँ तथा अनुभवों को प्रस्तुत किया है। दलित नारी मन के अंतद्र्वंद्व का चित्रण भी इन कहानियों का प्रमुख विषय रहा है। उनकी कहानियों में समाज में व्याप्त जतिभेद,शोषित, सामाजिक असमानता, सवर्ण-अवर्ण तथा छुआ-छूत की भावना और दलित समुदाय के पीडित व्यक्ति द्वारा भोगे हुए अनुभवों का कथन हैं ।

### ३.४.१.१ संघर्ष :

सुश्री सुशीला का यह कहानी-संग्रह दलित ज़िंदगी के यथार्थ को उदघाटित करता है। डॉ. सुशीला का मानना है कि दलित वर्ग का सही मायने में विकास न होने का कारण सही मार्गदर्शन का अभाव है। वे दलितोत्थान में डॉ. भीमराव अम्बेडकर की विचारधारा की संलग्नत मानना ज़रूरी सझती हैं। दलितों के जीवन का यथार्थ इन कहानियों में व्यक्त हुआ है प्रमुखतः महाराष्ट्र के दलितों की पीड़ा का रेखांकन इन कहानियों में है। लेखिका का भरपूर प्रयास रहा है कि संग्रह की कहानियाँ दलित युवा वर्ग में युगीन सत्यों का सामना करने का उत्साह व शक्ति का संचार करे। वे अपने वर्ग की कमजोरियों को चिन्हित कर अन्याय, शोषण,अत्यचार- अपमान और दमन के ख़िलाफ़ संगठित होकर जातिवाद व अस्पृश्यता का सफाया करने का प्रयत्न करें।

'संघर्ष' कहानी में १४ साल का शंकर बहुत शरारती होने के कारण घर में सभी को तंग करता रहता है। बाहर के बच्चें भी इसके शरारत से तंग होकर इसे छेड़ते रहते हैं। गाँव के कुछ लोग उसे अछूत मानते हैं। शंकर को गाँव के लोगों का उसे अछूत मानना अच्छा नहीं लगता है। शंकर अपने मित्रों के कार्य से क्रोधित हो कर जानबूझकर मित्रों के घर के अदंर घुसता है, और सवर्ण (मित्रों को) कड़कों से बदला लेकर वह अपनी टाँग अड़ाकर उसे गिरा देता है।

स्कूल में अध्यापक उसे अछूत होने के कारण परेशान करते हैं। उसकी नानी जाति और परंपरागत कार्य के प्रति समझाती है। कारण वश वह पढ़ाई में मन लगाने के बारे में

सोचता है। शरारतें कम करके ज़्यादा मन लगाके पढ़ना चाहता है, फिर भी अन्य बच्चे शंकर की नानी द्वारा सूअर पालने के कारण उसका मज़ाक़ उड़ाते हैं। इन सभी घटनाओं के बारे में सोचकर शंकर के मन में जब पढ़कर कुछ कर दिखाने की बात आती है तो वह ज्यादा अकं लेकर दसवीं कक्षा पास करता है।

### ३.४.१.२ जन्मदिन

इस कहानी में शोषित दलित समाज का चित्रण है। साथ ही अन्य सवर्ण जनता के बीच व्याप्त छुआ-छूत, जाति-भेद का चित्रण भी है। पूरे देश में हर शहर, हर गाँव, हर गली में सफ़ाई कामगार समुदाय के लोग रहते हैं, वे दलित है और पुराने ज़माने से ही उन दलितों को इस कार्य के लिए तय किया गया है। और ये लोग आज भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी सफ़ाई पेशे से जुड़े हैं। उन दलित पिछड़े समुदाय तक अबेंडकरवादी विचारधारा का संदेश पहुँचाना और उनमें जागरूकता, प्रगति तथा परिवर्तन लाना लेखिका का उद्देश्य है।

भारत में मध्यप्रदेश के होरंगाबाद ज़िले की एक तहसील सिवनी मालवा क़सबा है। यहाँ गरीब और पिछड़े समुदाय के अनेक अनपढ़ लोग रहते हैं। वे सभी सफ़ाई के पेशे से जुड़े हैं। ये अपने आत्मसम्मान से अनभिज्ञ है सम्मान क्या होता है और उन्नति क्या होती है ? इन विचारों से बहुत दूर है तथा यह लोग कुछ समझ नहीं पाते । देश स्वतंत्र हुए पूरे बीस साल हो गए है। यहाँ के समझदार, संपन्न, सम्मानित लोग सोचते हैं कि स्वतंत्रता के पचीस वर्ष हो गए तो वे रजत जयंती मनायेंगे। सफ़ाई कर्मचारी के भी बात सुनते हैं। लेकिन उन बातों को समझना उनके लिए मुश्किल था। क्योंकि वे जानते हैं कि रजत जयंती के बाद भी उन्हें अपना यही काम करना है। ये अवर्ण और अछूत देश की स्वच्छता की ज़िम्मेदारी अपने कंधों पर उठाकर तन, मन से अपना कर्तव्य निभाते हैं।

“गाडिखाना” मोहल्ला उस गाँव से बाहर है। वहाँ केवल दो घर हैं-एक प्रेम राठोर का दूसरा गौरेलाल का। प्रेम राठोर के घर में बेटा हुआ है। बेटे का जन्मदिन मनाने के लिए प्रेम राठोर गाँव के अपने लोगों को आमंत्रित करता है। किसी भी सफ़ाई कर्मचारी को प्रेम

राठोर ने आमंत्रित नहीं किया था। इसी गाँव में दलित व्यक्ति मुन्ना का घर प्रेम राठोर की बस्तियों से दूर है। उनके पिता रेलवे में चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी है। उसने सभ्य और सुसंस्कृत के साथ स्कूल की पढ़ाई की है, बाद में वह प्रेम राठोर के घर स्थित गाडिखाना मोहल्ले में आता है। गाडिखाना के लोग अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते। मुन्ना वहाँ बैलगाड़ी देखकर उसके बारे में पूछता है। मैला उठाने की बातें सुनकर मुन्ना आवेश में आ जाता है।

मुन्ना उस दिन को पंद्रह अगस्त का दिन समझकर इन सबको गंदगी साफ़ करने से मना करता है। इससे प्रेरणा पाकर सभी लोग 'हड़ताल' करने का निर्णय लेते हैं। मुन्ना जानता है कि सबको मार्गदर्शन की ज़रूरत है। इसी बीच मुन्ना, विशाल कंबले से मिलता है। वह मुन्ना को बाबा साहेब अबेंडकर के बारे में कहता है। मुन्ना को उससे नई ताक़त और हिम्मत मिलती है। मुन्ना ऐसे सोच लेता है- "क्या गांधीजी हमारी जाति की पीड़ा को जानते थे?...तब उन्होंने हमारे लिए क्या किया? हमारे लोग तो अभी भी झाड़ू लगाने और मलमूत्र उठाने के काम कर रहे हैं। तब गाँधीजी ने हमे क्या दिया? हरिजन नाम देकर हमारा कौन सा उद्धार किया है?"२१ मुन्ना यह संदेश सभी को देता है कि गांधीवादी और मनुवादी विचारधारा को छोड़कर, सभी दलित दलितों को अबेंडकरवादी विचारधारा से जुड़ना ज़रूरी है।

इस कहानी में दलितों को नयी दिशा देने का प्रयत्न किया गया है। अबेंडकरवादी विचारधारा शोषित, पीड़ित, समाज के लिए जागरूकता की संदेश देता है। इस विचारधारा को सभी दलित अपनाये इसी उद्धेश्य से यह कहानी लिखी गयी है।

### ३.४.१.३. बदला :

'बदला' एक ऐसी कहानी है इसमें समाज में व्याप्त जातिभेद, वर्णभेद और सामाजिक असमानता आदि का चित्रण है। साथ ही जनता के बीच व्याप्त छुआ-छूत भेदभाव आदि बातों पर भी कठोर व्यंग्य किया गया गया है। शोषित, पीड़ित जनता

शोषकों से बदला लेने के लिए कैसे संघर्ष करते हैं? इसका चित्रण भी इसमें प्रस्तुत किया गया है।

'कल्लू' नामक लड़का स्कूल में पढ़ता है। वह अपने सहपाठी सवर्ण बच्चों के साथ खेलता है। खेल-खेल में कल्लू का जीतना और उच्च जाति के लड़को का हमेशा हारना है। लेकिन वे कल्लू से चिढ़ते हैं और उससे बदला लेने की योजना बनाते हैं। गाँव में दलित अछूतों के साथ दुर्व्यवहार, अपमान और अत्याचार की घटनाएँ होती रहती हैं। इसीलिए घर के बड़े लोग उसे समझाते हैं। लेकिन उच्च जाति के बच्चे उसका बहुत मज़ाक़ उड़ाने पर वह उसे मार देता है। मारने के बाद कल्लू घर आता है। लेकिन कुछ देर बाद उन सवर्ण बच्चों के घरवाले उसे मारने के लिए डंडे लेकर आते हैं। कल्लू की दादी और उसकी माँ उनसे हाथ जोड़कर क्षमा माँगते हैं। लेकिन वे उन्हें जाति नाम जैसे भंगी की औलाद, अछूत, शूद्र, भिखारी, भिखमंगे आदि कहकर चिढ़ाते हैं। उनके साथ आयी स्त्रियाँ भी जातीयता के नाम पर उन्हें नीचे कहती हैं।

उन रघुवंशी स्त्रियों की बातें सुनकर छौआ माँ हक्की-बक्की रह जाती है। उसे महीनों पहले की एक घटना याद आती है। होली के अवसर पर गाँव की स्त्रियाँ उनके साथ होली खेलने के लिए उसे बुलाती हैं। छौआ माँ उनके साथ होली मनायी थी। उस दिन छौआ माँ ने अपने गाँव और वहाँ की स्त्रियों से प्रेम और अपनापन महसूस किया था । आज उन के मुँह से ऐसी बातें सुनकर उसको मालूम होता है कि उनमें छुआ-छूत और भेदभाव की भावना अभी भी है। ये सभी बातें उसे अपमानजनक लगती हैं। कल्लू की माँ और छौआ माँ का आर्तनाद सुनकर लोग वहाँ से लौटने लगते हैं। अगले दिन से कल्लू स्कूल जाता है। एक दिन स्कूल से लौटते समय लोग फिर हाथ में लाठियाँ लेकर आते हैं। उनके समाज के पूरे लोग वहाँ इकट्टा होते हैं। उनकी एकता देखकर सवर्ण लोग घबराकर वहाँ से भागते हैं। इस प्रकार एकता के बल पर वे दुश्मनों से बदला लेते हैं। छौआ माँ का निर्णय पूरे समाज को अधिक शक्ति देता है कि "अब हम किसी से नहीं डरेंगे । हम भी ईटं का जवाब पत्थर से देंगे। वे शेर तो हम सवाशेर बनकर रहेंगे।"२२ बदले की इस भावना ने उन सबको आत्मविश्वास दिया है। इस प्रकार कहानी में विद्रोह की भावना का चित्रण स्पष्ट दिखाई पडता है।

### ३.४.१.४. छौआ माँ :

इस कहानी में छौआ माँ नामक स्त्री का संघर्षमय जीवन प्रस्तुत करने का प्रयास है। सामाजिक असमानता, रूढि, परंपरा, जातीयता आदि का चित्रण इसमें किया गया है। छौआ माँ अपने क्षेत्र में संघर्षरत रहने वाले स्त्री के रूप में इस कहानी में प्रस्तुत हुई है।

छौआ माँ साठ उम्र की स्त्री है जो गाँव में जचगी का काम करती है। ज़चगी का काम ज़च्चा के सारे घर की साफ़-सफ़ाई, झाड़ू-पोंछा, लीपना-पोतना यह भी वह करती है। पूरे गाँव की बहू-बेटियों के 'दाईपन' का काम वही सँभालती है। ऊँची जाति कहनेवाले लोगों के घर के भीतर वह नहीं जा सकती है। वे केवल इसी काम के लिए उसका उपयोग करते आते हैं। इसके बाद वह उनके दरवाज़े के बाहर, आँगन से दूर खड़े रहकर ही बाते करती हैं। इस ज़चगी के काम के बाद उसे रूपये भी मिलते हैं। लड़की होने पर कम, लड़का होने पर ज़्यादा रूपये मिलते हैं। छौआ माँ की बेटी तुलसा उसके इस काम से नाराज़ है। छौआ माँ अपनी बेटी का ग़ुस्सा देखकर उसे प्यार से समझाती है- "काम पड़े तो करना ही पड़े हैं, मैं नहीं करत तो कौन करेंगे उनका काम?...बेचारी बहू-बेटियाँ मेरा रास्ता देखते हैं।"२३

छौआ माँ यह काम करने में बहुत गर्व भी महसूस करती है। उन्हें डॉक्टर ने दाई का सर्टिफिकेट भी दिया है। छौआ माँ अपना यह काम ममता, त्याग और परोपकार की भावना के साथ अकसर करती है। एक बार छौआ माँ सौदा खरीदने के लिए तहसील जाती है। उसी दिन गाँव के कुछ लोग ज़चगी के लिए छौआ माँ को बुलाने आते हैं। दाई के अभाव में वे लोग तुलसा से काम करवाना चाहते हैं। तुलसा बहुत मना कहने पर भी वे नहीं मानते हैं।

अतं में तुलसा काम करने पर विवश हो जाती है। दूसरे दिन दाई माँ लौट आती है। यह बात सुनकर बहुत क्रोधित हो जाती है। छौआ माँ को अपने गाँव से प्रेम है, उसे अपने काम से भी लगाव है। मगर वह अपनी बेटी से यह काम कराना नहीं चाहती है। वह गाँववालों बहुत चिढ़ती है। गाँववाले उसे और उसकी जाति को बुरा कहते हैं। छौआ माँ

आक्रोश के साथ जल उठती है। अतं में निर्णय लेती है कि वह कभी भी यह काम नहीं करेगी। कई महिनों के बाद गाँव के पटैल के घर से कुछ लोग उसे बुलाने आते हैं। पहले वह जाने के लिए तैयार नहीं होती। बाद में उनका मन ममता और दया से भर उठता है। पटैल के कारिंदे मशाल लेकर आये थे उनके द्वारा लगे आग पर अतं में वह विलीन हो जाती है।

इस कहानी में छौआ माँ एक आदर्श चरित्रवाली, अस्मितावाली नारी के रूप में सामने आती है। लेखिका यह बताती है कि "चरित्रवान औरत की अस्मिता पर यदि कलंक लगाया जाये तो वह आक्रोश की सीमा को भी पार कर जाती है।"२४ छौआ माँ इसका सफल उदाहरण है।

### ३.४.१.५. चुभते दंश :

इस कहानी में नारी मन के अतंर्द्वंद्व का चित्रण है। इस कहानी में विद्रोह का स्वर भी देख सकते हैं। दलित और सवर्ण लोगों के बीच का जातिभेद और मानसिक दूरी आदि समस्याओं को भी इसमें उठाया गया हैं।

भारत रत्न बाबा साहेब अम्बेडकर का महापरिनिर्वाण दिन 'समाजकल्याण शिक्षा संस्था' में छ: दिसंबर के दिन मनाने की तैयारियाँ चल रही हैं। प्रमुख वक्ता ठीक समय पर पहुँचते हैं। लेकिन सम्माननीय पदाधिकारी न आने के कारण कार्यक्रम में विलंब होता है। कार्यक्रम के तैयारियाँ बहुत पहले से ही आरंभ कर दी थी । संयोजक समिति बनायी गयी थी। इस समिति में प्राचार्यजी छ: लोगों के नाम मनोनीत किये थे। कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की थी। मंच सज्जा से लेकर आभार प्रकट करने का काम महिला प्राध्यापिका तक्षशिला बाघमोरे को दिया था । प्रमुख वक्ता डॉ.बाबा साहेब अबेंडकर विचारधारा के मूर्धन्य विद्वान प्रोफेसर. मेश्राम जी थे। वे जाने माने दलित साहित्यकार है।

संयोजक समिति में पूरे दलित लोगों के नाम दिये थे। इसके बारे में सवर्ण और दलित अध्यापकों के बीच वाद-विवाद चलता है। दलित लोग कहते हैं कि क्या बाबा साहेब सिर्फ़ हमारे हैं? सिर्फ़ हमारे लोगों को ही कमेटी में रखा गया है? बाबा साहेब सबके हैं। फिर ऐसा क्यों? सवर्ण लोग अपनी प्रतिक्रिया दिखाते हैं कि क्या डॉ.अबेंडकर

सिर्फ़ इन्हीं लोगों के हैं? क्या हमारे समाज में उनके बारे में बोलनेवाले विद्वानों की कमी है क्या? कार्यक्रम शुरू होता है। तक्षशिला बाघमोरे के मन में यह भय होता है कि प्रोफेसर. मेश्राम जी कहीं पीड़ित वेदना के साथ, नाराज़ी से कुट भाषण न देने लगे। संस्था के प्राचार्य ब्राह्मण है। उन्हें नाराज़ बनाने की बातें वे नहीं चाहती है। लेकिन मेश्राम के भाषण दलितों के दु:ख, दर्द, अन्याय, अत्याचार का पर्दाफाश करता हुआ तीखी फटकार से भरा था। फिर भी वहाँ एक शांतिपूर्ण स्थिति थी। प्राचार्य ने भी संतुलित, सरल और सौम्य भाषण दिया। अतं में आभार प्रकट करने के लिए तक्षशिला जी को आमंत्रित किया।

तक्षशिला वहाँ उपस्थित सभी को आभार मानकर गड़बड़ी में आभार का कार्य पूरा करती है। कार्यक्रम के अतं होने के बाद सभी प्रोफेसर. मेश्राम के भाषण की कटु आलोचना करते हैं। कुछ लोग संस्था में ऐसे कार्यक्रम बंद करने को कहते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि अब ये तो राष्ट्रीय कार्यक्रम बन गये हैं। अपने आपको समतावादी, समरसतावादी बताने के प्रचार-प्रसार के लिए ये सभी करते हैं। ये सभी बाते सुनकर तक्षशिला जी का सिर शर्म से झुक जाता है। इस समाज के बारे में सोचती है इन लोगों के बारे में सोचती है सोचते-सोचते उनका मन विद्रोहात्मक भावना से भर उठता है। ऐसे विद्रोहात्मक स्थिति में वह सोच लेती है-"कैसी बीभत्स भावना है? कैसी मानवीयता है? कैसी मक्कारी है? क्या ये लोग कभी बदल सकते हैं?"२५

इस प्रकार इस कहानी में शोषित, पीड़ित दलित समाज का विद्रोहात्मक स्वर देख सकते हैं। डॉ. तक्षशिला बाघमोरे के संघर्षपूर्ण चित्रण के साथ नारी मन के अतंर्द्वंद्व का चित्रण भी इसमें उभरकर आया है।

### ३.४.१.६. संभव असंभव :

नारी मन की अभिव्यक्ति की सफल कहानी है संभव असंभव। इस कहानी में नारी अतंर्मन की छटपटाहट का सुंदर चित्रण है। आज की नारी स्वतंत्र होते हुए भी परंपराओं में जकड़ी हुई है। इसकी कथावस्तु मनोविश्लेषणात्मक है। प्रेम के प्रति अतुल्य भावना का

चित्रण इसमें है। सामाजिक रीति, परंपराओं पर इसमें प्रश्न चिन्ह लगाये गये हैं। यह कहानी पाठकों को विचार करने के लिए मजबूर करती है।

इस कहानी की मनाली एक महिला साहित्यकार है। वह गरमी की छुट्टियों में पहाड़ पर घूमने अकेली जाती है। वहाँ उसका परिचय राजीव देशपांडे से होता है। दोनों महाराष्ट्र से आये हैं। दोनों की जातियाँ, वर्ण और सामाजिक स्तर अलग होने पर भी दोनों के बीच सौहार्द उत्पन्न होता है। दोनों बहुत ही सहजता के साथ मिलते रहते हैं। दोनों के उम्र में भी बराबरी नहीं हैं। मनाली पैंतीस वर्ष की है। दो बच्चों की माँ है। राजीव पचीस वर्ष का है। फिर भी दोनों के बीच एक संबंध बनता है।

एक हफ़्ता घूमने के प्रोग्राम में मनाली आती है। तीन दिन तक वह अकेली ही घूमती है। तब उसे एकांकिपन, नीरस, उदास, बेचैन लगती है। राजीव से मिलकर उसे बहुत अच्छा लगता है। वह मनाली का विशेष ध्यान रखता है। राजीव के साथ घूमने पर भी मनाली उससे कुछ दूरी महसूस करती है। अतिंम दिन घूमते हुए मनाली कुछ गंभीर बन जाती है। वह अपने मन में कई प्रश्न पूछती है। अतं में वह उससे विदा लेकर घर लौटती है। घर जाने पर वह अपने दैनिक कामों में व्यस्त हो जाती है। इस व्यस्तता के बीच भी वह राजीव के बारे में सोचती है। अतं में वह पहचान लेती है कि पहले से अपनी आँखों पर पट्टी बाँधकर एक आदर्श पत्नी का कर्तव्य निभाती रही।

अब वह अपनी आँखों पर पट्टी बाँधना भूल गयी है। अतं में जो आदर्शों के लिए वह जी रही थी उन आदर्शों को पोटली में बंदकर वह उसे लेकर कुएँ में फेंक देती है। अतिंम क्षणों में वह ऐसे सोचती है कि- "दुनिया की रीति-रिवाज और समाज की परंपराएँ बहुत बदल गए हैं। अब तक वह किस युग में जी रही थी? अगले जन्म की बातें बिलकुल बकवास हैं। जो करना है, जो पाना है वह इसी जन्म में ही संभव है।"२६ इन सभी बातों से पता चलता है कि उसकी मानसिकता आधुनिकता से जूझती है। वह पुनर्जन्म आदि बातों पर विश्वास नहीं रखती है। वह परंपराओं को तोड़ना चाहती है। वह अपने मन के अनुसार जीना चाहती है।

### ३.४.१.७. दमदार :

इस कहानी में एक पहलवान का चित्रण है जो अपने को अधिक शक्तिशाली और ताक़तवर समझता था। नारी शोषण का चित्रण भी इसमें मिलता है। इस कहानी के अतं में नारी यह समझ लेती है कि नारी कभी भी कमज़ोर नहीं है।

भग्गू ठाकुर एक पहलवान है जो दिल दिमाग़ से सज्जन और शालीन व्यक्ति है। जग्गू, भग्गू का छोटा भाई है। जग्गू दुबला-पतला, मरियल चरित्रहीन और गुंडा, बदमाश है। भग्गू को मान देने के लिए लोग जग्गू को भी पहलवान मान लेते हैं। जग्गू भी यह चाहता है कि सब उसे मान दें। उसे नहीं मानने के कारण वह पागल औरत और बेचारी प्रेमलता से अपनी शक्ति दिखाता है। उसकी इस प्रवृत्ति से गाँव के लोग उससे और डरने लगते हैं। बहू-बेटियाँ और सारी स्त्रियाँ अपनी इज्ज़त के लिए उससे ज़्यादा डरने लगती हैं।

जग्गू पहलवान पूरे गाँव में अपना अकड़ दिखाकर चक्कर लगाने लगता है। इसी समय सुमन नामक एक स्त्री किराये से रहने वहाँ आती है। वह कंजर जाति की महिला है। वह बहुत ही निडर, साहसी और ताक़तवर महिला है। उसका पति जेल में है। सुमन गाँव में मनमाने ढंग से जीवन बिताती है। जब सुमन सेठ की बेटी प्रेमलता के साथ हुई जग्गू पहलवान की अकश्ज़ सुनी तब वह उसे देखने और उससे बदला लेना चाहती है पहले वह जग्गू को अपने वश में कर लेती है। वह उसकी सब कमज़ोरियाँ जान लेती है। पागल औरत और प्रेमलता भी उससे बदला लेती है। लेखिका अपने मन का भाव ऐसे प्रकट करती हैं कि- "कई महिनों का आक्रोश और दबी हुई प्रतिशोध की भावना उसके चेहरे पर चमकने लगी। उसकी आँखों में ग़ुस्से का लावा है। मगर होंठों पर सफलता की ख़ुशी झूम रही है।"२७

इस कहानी में नारी शोषण के साथ समाज में व्याप्त अत्याचार, अन्याय आदि का विरोध का चित्रण भी है। इस कहानी की सुमन में विद्रोह की भावना है जो संघर्ष करते हुए अपनी जाति की इज्ज़त पाना चाहती है। समाज के साथ संघर्ष करते हुए समता-सम्मान के साथ जीने का संदेश इस कहानी में मिलता है।

### ३.४.२ टूटता वहम:

डॉ. सुशीला जी ने इन कहानियों में न केवल ब्राह्मणवादी मानसिकता के छोटेपन को उजागर करती हैं अपितु दलित समुदाय की रूढ़ियों व कमजोरियों से भी परिचय करवाती हैं। वे दलितोत्थान के लिए अम्बेडकरी विचारधारा पर जोर देते हुए कहती हैं कि हमें हमारी गलत व गंदी आदतों का त्याग कर शिक्षण व रोजगार के अवसरों को हाथ से नहीं जाने देना चाहिए।आर्थिक विपन्नता, सामाजिक असमानता, अनपढ़ता,शोषण, दरिद्रता, अंधविश्वास, नशाखोरी दलितों के पिछड़ेपन के मुख्य कारण हैं।

### ३.४.२.१. झरोखें :

इस कहानी के शीर्षक से ही ज्ञात होता है कि लेखिका ने अपने अतीत को, स्मृतियों के झरोखें में से देखा है। दलित बच्चों पर ऐसे संस्कार किए जाते हैं कि 'हम अछूत हैं', नीच जाति के हैं'। परंतु इस कहानी में यह वहम टूटता हुआ नज़र आता है। दलित लोग अपनी नयी पीढ़ी के मन में बचपन से यह भावना भर देते हैं। इस प्रकार की हीन ग्रंथी बन जाने के बाद बच्चों का व्यक्तित्व विकसित नहीं हो पाता है। बच्चे सर्वगुण संपन्न होने के बाद भी उनमें पूर्ण आत्मविश्वास नहीं होता है। दलित लोगों को सोचना चाहिए कि-"हम दूसरों को दोष देने से पहले अपनी ग़लती देखे और सिर्फ़ अपनी ग़लती देखते रहने पर हमें दूसरों का दुर्व्यवहार नज़र नहीं आता है। उनकी सिर्फ़ अच्छाई नज़र आती है और ऐसा नहीं होता है तो अपनी ही ग़लती मानकर चुप रहना चाहिए।"२८

ये पीढ़ीगत संस्कार लेखिका पर भी हुए हैं । परंतु उनकी माँ उन्हें पढ़ा-लिखाकर आगे बढ़ने का हौसला देया है। इसी कारण लेखिका के मन में आत्मविश्वास की कमी नहीं रहती है। संस्कारवश छुआ-छूत का डर लेखिका के मन में रहता है। इन्हीं संस्कारों की वजह से वह हमेशा संकोच में रहा करती थी कि कोई अपमानजनक व्यवहार न करें, कोई किसी प्रकार का एतराज़ न माने। उनके मन में भी यह वहम था कि हम निम्न जाति के हैं। लेकिन निम्न जाति की होने के बावजूद भी उन्होंने कभी किसी को महसूस नहीं होने दिया कि वे निम्न जाति की हैं। उनके कला गुणों की क़द्र होती रहती है। सभी से अपनापन मिलता है।

लेखिका ने स्कूल में नाम दर्ज करने से लेकर कई स्मृतियाँ बताई हैं। उन्हें सभी गुरूजनों से अच्छे संस्कार मिले, जिसके कारण निम्न जाति की होने का भाव जाता रहा और संकोच की जगह आत्मविश्वास निर्माण होता है। वह अपने गुरूजनों, सहेलियों के साथ बैठकर खाना खाती, खेलती फिर भी उन्होंने भेद-भाव महसूस नहीं होने दिया। उनको माता और गुरुजनों से संस्कार तो मिले मगर अधिकार से लड़ने की शिक्षा में कमी रहती है। लेखिका पर हुए संस्कार और आदर्श जैसे कारण दिखाई देते हैं।

इस प्रकार लेखिका ने इनमें अपने जीवन में की गई उन्नति के सोपानों को बताया है कि हम परिस्थितियों का सामना कर अपनी स्थिति में सुधार कर सकते हैं। जातिभेद के कारण अछूतों में हीन ग्रंथि की भावना भी पैदा होती है, जिससे उनमें संकोच का भाव उत्पन्न होता है। इसी कारण वे स्वयं आगे नहीं बढ़ते हैं। अत: लेखिका दलितों को इस भावना से मुक्त होने का संदेश देती है।

### ३.४.२.२. मेरा समाज :

इस कहानी में लेखिका ने दलित वाल्मीकि समाज की स्थितियों का चित्रण किया है। साथ ही उनके पिछड़े जाति में रहने के कारण भी बताएँ हैं। दलित समाज के सम्मुख अनेक प्रकार की समस्याएँ हैं। जैसे- बेरोज़गारी, आर्थिक विपन्नता आदि। लेखिका को शराब पीनेवालों से सक्त नफ़रत है। वे कहती हैं- “शराब और आपसी झगड़ा यही इस समाज की सबसे बड़ी ख़राबी है।”२९

दलित समाज अछूत शूद्र वर्ण कहलाता है। इस समाज के लोग स्वयं को वाल्मीकि कहकर गौरव का अनुभव करते हैं। लेकिन अपनी सामाजिक बुराईयाँ नहीं छोड़ते। इन लोगों की छोटी सी दुनिया होती है। उसमें ही वे ख़ुश होते हैं। कोई पंचायत में काम करता है तो, कोई डाकबंगले में, कोई अस्पताल में तो कोई स्कूल में। परंतु इस प्रकार का काम करने में इन लोगों को संकोच नहीं होता है। अपने बाप, दादा करते आए हैं इसीलिए वे भी वहीं करते हैं। कुछ लोग मैट्रीक, बी.ए पास करके अच्छी नौकरी न मिलने पर इसी प्रकार की नौकरी करते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जो सुबह आठ बजे तक बिस्तर में पड़े रहते हैं

और अपना कार्य छोटे बच्चें पर सौंपते हैं। इसी कारण बच्चे पढ़ नहीं पाते हैं।

लड़कियों की शादी १५ या १६ वर्ष की आयु में होती है। ये लोग इससे आगे की सोच नहीं पाते हैं। बेटी का जन्म होते ही उसकी पढ़ाई की अपेक्षा, शादी की चिंता की जाती है। शादी और बच्चें जैसे उनके जीवन का लक्ष्य हो। ससुराल में भी घर का सारा काम उसी को करना पड़ता है। अधिकांश लड़कियों को अपने पति की मार, सास की गालियाँ और ननंदो के ताने मिलते रहते हैं। हर घर में झगड़ा दिखाई देता है। कभी भाई-भाई का, कभी सास-बहू का तो कभी ननंद- भौजाई का । कारण कोई भी हो हर पुरूष अपना ग़ुस्सा अपनी पत्नी पर ही निकालता है।

इस प्रकार की परंपरा प्रिय विचारधारा को तोड़ना आवश्यक है। तभी यह समाज नए विचारों को अपनाएगा और शिक्षा के प्रति जिज्ञासु रह कर आत्मनिर्भर बनेगा। युवा शिक्षित पीढ़ी की सहायता से लेखिका इस स्थिति को बदलना चाहती है।

### ३.४.२.३. व्रत और व्रती :

यह कहानी उस अभाव ग्रस्त युवक की है जो अपने परिवार से दूर दिल्ली जैसे बड़े शहर में नौकरी के लिए दर-दर भटकता है। इस कहानी में धर्म के आडंबरों की समस्याओं को उठाया है। इसमें जो धर्मपाल है, वह अपने दु:ख दूर करने तथा भगवान की कृपा हो इसीलिए भगवान का व्रत करता है। वह पूर्ण मनोयोग से गणेश जी की पूजा करता है। वह कड़ी सर्दी में सुबह पाँच बजे से एकाग्रता से भगवान का ध्यान करता है। परंतु उसे भगवान के दर्शन नहीं होते हैं। वह बीमार मात्र पड़ जाता है।

दूसरी बार जन्माष्टमी के दिन भगवान श्रीकृष्ण का व्रत करता है। दिनभर भूखा रह कर वह उपवास करता है। वह कहता है- “मैं आज किसी भी तरह से अपना संकल्प टूटने नहीं दूंगा। मुझे भगवान से मदद चाहिए और भगवान तभी मदद करेंगे जबकि उनका व्रत नियम के अनुसार समय पर पूर्ण किया जाए”।३०

दोपहर से उसकी हालत बिगड़ने लगती है और कई बार चाय पीने के बाद भी वह कुछ खाने के लिए तड़पता है। शाम को पूजा के बाद खाना खाता है। परंतु ज़्यादा खाने से

सब अगल पड़ता है। उसे ख़ाली पेट सोना पड़ता है। (शाम को पूजा के बाद खाना) अतं में वह संकल्प करता है कि- "किसी देवता के नाम से व्रत, उपवास नहीं करेगा। मेहनत और कमाई से अपना पेट भरना पड़ेगा। इस भागती मशीनी ज़िंदगी मे अपने पेट की आग बुझाने का इतंज़ाम स्वयं ही करना पड़ेगा।"३१ इस कहानी में धर्म के आडंबरों पर व्यंग्य किया है।

### ३.४.२.४. मंदिर का लाभ :

प्रस्तुत कहानी में दलितों की हिंदू धर्म और भगवान में होनेवाली आस्था की तटस्थ मीमांसा की है। वे मंदिर तो बना लेते हैं परंतु अपने समाज की स्थिति को नहीं सुधारते हैं। इसमें एक ही भगवान को माननेवाले सवर्ण और अछूतों के बीच जातिभेद और छुआ-छूत की भावना का चित्रण किया है।

इसमें नानी एक रूढिवादी नारी है। उसे बेटा न होने के कारण वह अपनी बहन के बेटे के यहाँ रहती है न कि अपनी बेटी के पास। वह मानती है कि उद्धार तो बेटों से ही होता है। अत: उसकी निगरानी में एक-एक राधा-कृष्ण मंदिर बनाया जाता है। मंदिर का सारा ख़र्च नानी करती है। मंदिर में मूर्ति की स्थापना करने के लिए कोई पंडित या पुजारी नहीं आता है। नानी के कहने पर एक पंडित (वामन) सामान्य पूजा विधि कर भगवान की स्थापना करता है। नानी की बहन का बेटा हर रोज़ भगवान की पूजा करता है।

कुछ दिन पश्चात नानी कैंसर से पीड़ित होती है। खाना, पीना बंद हो जाता है। फिर भी नानी अपनी बेटी के पास नहीं आती है। मृत्यु के बाद उसकी सारी संपत्ति उसके बहन के बेटा हड़प लेता हैं। अगर नानी अपना सारा रूपया वाल्मीकि समाज सुधार में लगाती तो समाज का बहुत भला हो जाता। मंदिर केवल एक वस्तु बनकर उपेक्षित रहता है। उनके समाज के लिए कोई लाभ नहीं होता।

इस कहानी में धर्मांधता के प्रति विरोध दिखाया गया है। दलित समाज के लोग अपनी उन्नति की गति भगवान के भरोसे छोड़ देते हैं। वे ये नहीं जानते कि जब तक अपनी

उन्नति के विषय में हम ख़ुद नहीं सोचेंगे तब तक कोई भगवान या कोई मंदिर लाभ नहीं दे सकता।

### ३.४.२.५. मुझे जवाब देना है :

इस कहानी में बताया है कि शिक्षित दलितों का काम केवल अपने घर की साज़-सज्जा करने तक सीमित नहीं है। इससे आगे कुछ करना है। अच्छा खाना, अच्छा पहनना, इतना सीमित उनको होना नहीं चाहिए। बल्कि समाज की प्रगति में इनका योगदान भी आवश्यक है।

लेखिका के घर उनके पति के मित्र एक मीटिंग के सिलसिले में आते हैं। इससे पहले वे उनको एक अधिवेशन में मिले थे। उनकी इच्छा है कि लेखिका इस अधिवेशन के समापन के समय खुले चर्चा सत्र में हिस्सा लें। विद्वानों के सामने कुछ ऐसे प्रश्न रखें कि लोग उनकी बुद्धि-विवेक को मान्यता प्रदान करें। भाई साहब की यह भी इच्छा है कि लेखिका मीटिंग में अपने विचार समाज के सामने रखें।

वे महिला प्रतिनिधि के रूप में कुछ बोलें। पर वे अपना सारा समय नाश्ता बनाने में लगाती हैं। मीटिंग की कुछ भी बातें वे नहीं सुनती हैं। फिर भी अनगढ़ रूप में अपने विचार रखती हैं। इससे उसका समाधान नहीं होता। उसके मन में ग्लानि निर्माण होती हैं कि “यह महँगा फ्लैट यह घर की साज़-सज्जा सब बेकार है। जीवन का उद्देश्य घर सजाना, सुख भोग करना, मात्र धन कमाना नहीं है। इतना धन इस व्यर्थ साज़-सज्जा पर क्यों ख़र्च करें। इसका उपयोग समाज के लिए हो सकता है। हमें कुछ करना है। पूरे समाज के लिए, मानव समाज के लिए, साधारण जीवन का मूल्य समझना है। आदर्शों की मात्र कल्पना करने से तो कुछ भी नहीं हो सकता। अन्याय उन आँखों के सामने मैं गुनहगार क्यों साबित होती।”३२

इस प्रकार कहानी में बताया है कि संपन्न शिक्षित दलित, अपने समाज से दूर रहना चाहता है जो कि ग़लत है। दलित समाज का शिक्षित और संपन्न वर्ग अपने समाज की स्थिति को सुधारने का प्रयत्न कर रहा है। समाज की प्रगति में उनका भी योगदान

महत्वपूर्ण है। इस कहानी में झूठे दिखावे और शान शौकत पर व्यंग्य किया है। संपन्न दलित अपने समाज में प्रगति और परिवर्तन के लिए अधिक योगदान दें यही संदेश लेखिका देना चाहती है।

### ३.४.२.६. सिलिया :

यह कहानी एक दलित कन्या की है जो आत्मविश्वास के साथ पढ़ाई कर अपने समाज को सुधारना चाहती है। इसमें छुआ-छूत, असमानता की भावना आदि समस्याओं को उठाया है। एक दिन नई दुनिया अख़बार में एक विज्ञापन छपता है- "शूद्र वर्ण की वधु चाहिए।" मध्य प्रदेश के भोपाल के जाने-माने युवा नेता सेठी जी अछूत कन्या से विवाह करके एक आदर्श निर्माण करना चाहते हैं। सभी सिलिया की माँ को सलाह देते हैं। परंतु सिलिया की माँ कहती है- "नहीं भैया, यह सब बड़े लोगों के चोचले हैं। आज समाज को दिखाने के लिए हमारी बेटी से शादी कर लेंगे और कल छोड़ दिया तो हम ग़रीब लोग, उनका क्या कर लेंगे। अपने इज्ज़त अपनी समाज में रहकर भी हो सकती है। उनकी दिखावे की चार दिन की इज्ज़त हमें नहीं चाहिए। हमारी बेटी उनके परिवार और समाज में वैसा मान-सम्मान नहीं पा सकेगी, न ही हमारे घर की रह जाएगी। न इधर की न उधर की हमसे दूर कर दी जाएगी। हम उसको ख़ूब पढ़ाएँगे, लिखाएँगे उसकी किस्मत में होगा तो इससे ज़्यादा मान-सम्मान वह ख़ुद पा लेगी अपनी किस्मत वह ख़ुद बना लेगी।"३३

सिलिया आत्मविश्वास के साथ अपनी पढ़ाई करती है। उसे सभी गुरूजनों से मान-सम्मान मिलता है। परंतु उसे बचपन की बातें याद आती है कि जब उसकी मामी की बेटी मालती ने कुएँ का पानी लिया था; तो मामी ने उसे कितना मारा था। वह जब पाँचवीं कक्षा में थी तो टूर्नामेंट में उसने भाग लिया था। टूर्नामेंट जल्दी ख़त्म होने के कारण वह अपनी सहेली के घर जाती है। सहेली मौसी ने सिलिया की जाति का नाम सुनने के बाद उसे पानी तक नहीं देती है। सिलिया इन बातों पर बहुत विचार करती है। उसके मन में अनेक नए विचार आते रहते हैं। उसे छुआ-छूत, जातिभेद, सेठ जी महाशय का ढोंग अच्छा नहीं लगता है। वह आगे पढ़-लिखकर स्वयं को बहुत ऊँचा साबित करती

है। वह अपने समाज को उन्नति की ओर ले जाने के लिए प्रयास करती है। वह समाज से जातिभेद मिटाना चाहती है।

इस प्रकार इस कहानी में जातिभेद, छुआ-छूत और असमानता की भावना का चित्रण कर शिक्षा का महत्व बताया है। साथ ही यह भी बताया है कि कुछ सवर्ण अच्छे भी हैं, जो दलितों को सहायता और प्रगति की प्रेरणा देते हैं।

### ३.४.२.७. टूटता वहम :

इस कहानी में सवर्ण और दलित जाति के शिक्षितों के बीच की मानसिक दूरी को प्रस्तुत किया गया है। आज देश इतना प्रगतिशील बना है। फिर भी जातिभेद और अस्पृश्यता की भावना प्रचलित है। जातिभेद माननेवालों का आचरण सदा ही इसके विपरीत दिखाई देता है। परंतु आज दलित भी इस जातिभेद के मकड़ी जाल को समझ रहे हैं, पहचान रहे हैं। छल और दूरावों के व्यवहार को अपनी तर्क बुद्धि से सोच रहे हैं। वे सोच रहे हैं कि- "हम कुछ भी बन जाए, कुछ भी पा लें फिर भी जाति व्यवस्था का संरक्षण हिंदू हमारे साथ हमेशा भेदभाव करेगा। हमारे साथ अन्याय करता रहेगा और हम धोखे की मुट्ठी में पड़कर सदियों की चक्की में दु:ख, पीड़ा, तड़प और बेचैनी के साथ पीसते रहेंगे।"३४

जो लोग कभी शूद्रों को छूने की कल्पना नहीं कर सकते थे, आज वे उनके साथ बैठकर भोजन करते हैं। हाथों में हाथ मिलाकर बातें करने लगें हैं। यह बताने के लिए कि हम जाति भेद नहीं मानते। परंतु इसके पीछे सच क्या है? ये राज़ दलित पहचान रहे हैं। अब उनका वहम टूटता नज़र आता है। लेखिका जब नागपुर में शिक्षिका के पद पर आती है, तो संस्था के व्यवस्थापक बहुत ख़ुश होते हैं। स्कूल में कभी कोई कार्यक्रम होता तो बड़े-बड़े अतिथि और वक्ता आते रहते हैं। व्यवस्थापक बाहर से आए। प्रत्येक व्यक्ति से लेखिका का परिचय कराते समय उनकी जाति के बारे में बताते हैं। जाति का बार-बार उल्लेख करने के पीछे उनके मक़सद को लेखिका पहचान लेती है।एक बार लेखिका सभी सहयोगी प्राध्यापिकाओं को अपने घर खाने पर बुलाती है तो सिर्फ़ चार प्राध्यापिकाएँ

आती हैं। वे दोनों भी अनुसूचित जाति की होती है।

ऐसी ही और एक घटना उन्होंने बताई है कि, वह जिस कालोनी में रहती है, वहाँ एक प्लॉट उनको खरीदना होता है। परंतु इतने पैसे उनके पास नहीं होते हैं। तब वह पति के सहयोगी शिक्षक शर्माजी के साथ आधा-आधा प्लॉट खरीदने का सोचती है। परंतु शर्माजी यह टाल देते हैं। अत: वह प्लॉट दूसरा कोई ख़रीद लेता है- "जब भी हम उस प्लॉट के पास से गुज़रते हैं। उस पर बने मकान को देखकर लगता है हम भी ऐसा ही मकान बना लेते यदि हमें धोखें में न रखा गया होता।"३५

अत: दलितों को हिंदूओं के जातिभेद के इरादे को पहचानकर अपने मान-सम्मान और अस्तित्व की पहचान करनी आवश्यक है। इस प्रकार लेखिका ने अपने अनुभवों को बताने की कोशिश की है। इसमें दलितों के मकानों की समस्याओं, भेदभाव की समस्या, खान-पान का परहेज़ आदि समस्याओं का चित्रण किया है। यहाँ समानता के नाम पर झूठे भूलावे का चित्रण किया है जो मन को अधिक पीड़ित कर विचार करने को विवश करता है।

### ३.४.२.८. नयी राह की खोज :

यह कहानी उस युवक की है जो बुद्धिमान होते हुए भी घर में सभी अनपढ़ होने के कारण तथा आर्थिक विपन्नता के कारण कुछ नहीं कर पाता है। माँ-बाप अपने बच्चों को स्कूल भेजने से पहले यह नहीं सोचते कि पढ़ाई के बाद बेटा क्या करेगा? परिणाम स्वरूप बच्चे होशियार होकर भी मज़दूरी करते हैं।

रामचंद्र का बेटा लालचंद बहुत बुद्धिमान है। इसीलिए उसे कॉन्वेंट स्कूल में भेजा जाता है। घर का वातावरण तथा आर्थिक अभाव के कारण लालचंद आगे पढ़ नहीं पाता है। उसे कारपोरेशन की हिंदी प्राइमरी स्कूल में भेजा जाता है। उसे हिंदी अच्छी तरह से नहीं आती है। अत: उसकी पढ़ाई ख़त्म होती है। वह मैट्रिक भी नहीं हो पाता है। लालचंद कमाने लायक़ होता है तो घर के सभी बड़े उसे गालियाँ देते और कहते- "कुछ करो, कुछ

कमाओ, कब तक बैठकर दूसरों की कमाई खाओगे।"

रामचंद्र अपने समाज के जाग्रत लोगों के साथ मिलकर एक 'जागरूक' नामक सामाजिक संस्था द्वारा लोगों के मन में शिक्षा के प्रति जागरूकता निर्माण करने का प्रयास करता है। लालचंद भी इस संस्था द्वारा अपने-अपने समाज के लोगों में जाग्रति निर्माण करके अनेक व्यवसाय शुरू करता है और दलित समाज की अनेक समस्याओं को सुलझाता है। लालचंद के बेटे और बेटियाँ कालेज में जाने लगते हैं। वह सोचता है कि अपने समाज के पढ़े लिखे बच्चों को अपना पैत्रक या परंपरावादी काम नहीं करने देंगे। इसीलिए वे अनेक संस्थाओं का निर्माण करते हैं। इस संस्थाओं में अनेक बेरोज़गारों को उनकी योग्यता के अनुसार काम दिया जाता है।

इस प्रकार दलित समाज के लोगों ने अपने समाज में जनजागृति निर्माण करके समाज को आत्मनिर्भरता और सम्मान की ओर बढ़ाया है। उन्होंने एक नयी राह की खोज की है। अगर सभी लोग इसी राह पर चलेंगे तो समाज उन्नति कर सकता है।

इस कहानी में दलित समाज की स्थिति शिक्षा की समस्या, नौकरी की समस्या और सामाजिक प्रगति की समस्याओं को उठाया है। इसमें परंपरागत सफ़ाई के व्यवसाय को छोड़कर नयी पीढ़ी अच्छे, सम्मानित व्यवसाय और नौकरी करें इस बात का संदेश दिया गया है। लेखिका ने दलितों को नई दिशा दिखाने का प्रयास किया है।

### ३.४.२.९. धूप से भी बड़ा :

इस कहानी में जातिभेद का चित्रण है। सुनील रोमा से शादी करके अपने बड़प्पन का परिचय देता है। रोमा सुशिक्षित लड़की होने पर भी जातिभेद को मानती है। इसी जातीयता की भावना के कारण वह सच्चे प्रेम को पहचान नहीं पाती है। रोमा एक स्वतंत्र विचारवाली लड़की है। वह उच्च वर्गीय बड़े अधिकारी की इकलौती संतान होने के कारण वैभवपूर्ण और उन्मुक्त वातावरण में पली है। बी.ए फायनल में पहुँचकर वह अपने सहपाठी सुंदर खिश्चन बंटी से प्रेम करती है। दोनों मिलकर घरवालों का विद्रोह सहन करते हुए कोर्ट मैरिज करते हैं। शादी के बाद बंटी रोमा से दूर हो जाता है। वह शराब के नशे में मस्त रहता है। रोमा उसे सही रास्ते पर लाने की कोशिश करती है। परंतु बंटी

सुधरता नहीं है। रोमा को अपने किए पर पछतावा होता है।

रोमा सुनील की आँखों में बरसों से उसके प्रति प्रेम का भाव देखती है। फिर भी वह उसके प्रेम को कभी महत्वपूर्ण नहीं मानती है। सुनील रोमा से बहुत प्रेम करता है। जब रोमा की शादी बंटी से होती है तो वह शादी न करने का फ़ैसला करता है। रोमा सुनील को इसीलिए महत्व नहीं देती कि वह पिछड़े वर्ग का है। वह सोचती है कि सुनील डॉक्टर है, परंतु शूद्र ही है। बंटी को तलाक़ देकर वह मायके आती है। सुनील के प्रति उसके विचार बदलते रहते हैं। वह उससे प्रेम करने लगती है। सुनील भी उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है। रोमा इस पर बहुत सोचती है। बहुत सोचने के बाद वह शादी के लिए तैयार हो जाती है। दोनों कानूनी विवाह बंधन में बंधते हैं।

सुनील के घरवालों का प्रेम देखकर वह भाव विभोर हो जाती है। वह एक समझदार गृहिणी बनती है। उसे अपने वहम पर अफ़सोस होता है कि वह जातिवादी भावना के कारण सुनील के गुणों को देख नहीं पायी थी। अतं में वह सोचती है कि- "निश्चित ही सुनील और उसका परिवार, सुनील का पूरा समाज सम्मान योग्य है। सुनील का दिल सचमुच बड़ा है। सुरज से अधिक जीवनदायी, धूप से अधिक प्रकाशमान उसके विचार हैं। उसकी बराबरी वर्ण की उच्चता, जाति की श्रेष्ठता नहीं कर सकती। जिसके विचार ऊँचे हैं वह जाती धर्म से ऊपर है। सबसे श्रेष्ठ और महान है।"२० इस प्रकार यह कहानी सवर्णों की मानसिकता जातिभेद की भावना प्रस्तुत करती है। छोटी जाति के लोग छोटे नहीं है। वे धूप से भी बड़े होते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सुशीला जी ने इस कहानी संग्रह में दलित लोगों के एक अलग माहौल को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इस कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ प्रभावशाली हैं। झरोखें, टूटता वहम, मेरा समाज, और मंदिर का लाभ कहानियाँ आत्मकथात्मक हैं। अपने भाव-विचार, जीवन की घटनाएँ और अनुभवों को लेखिका ने इन कहानियों में चित्रित किया है।

### ३.४.३. अनुभूति के घेरे :

डॉ. सुशीला जी ने इस कहानी संग्रह में तमाम कहानियों में, मनुवादी समाज के शिकार दलित साहित्यकारों ने शोषण उपेक्षा, छूआछूत, पीड़ा, विवशता, अन्याय, भूख, लाचारी, अभाव, दरिद्रता को जीया और भोगा है। उसी की अभिव्यक्ति उन्होनें कहानियों में व्यक्त करने की कोशिश की है ।

### ३.४.३.१. भूख :

इस कहानी में पति-पत्नी के सच्चे प्रेम को दिखाया है। प्रेम चाहे वह भिखारी का हो या राजा का, प्रेम तो प्रेम ही होता है। प्रेम की अनुभूति और गहराई उच्चतम होती है। पूर्णत: अभावग्रस्त तथा विकलांग होते हुए भी भिखारी अपनी पत्नी की शारीरिक और मानसिक भूख मिटाता है। दूसरी तरफ़ सब कुछ पास होकर भी लोग प्रेम और मन से भूखे ही रहते हैं।

'भूख' आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानी है। इसमें पति-पत्नी स्टेशन के प्लैटफार्म पर बैठे हैं। पति पत्रिका आदि खरीदने थोड़ी दूर चले जाते हैं। पत्नी अपने नज़दीक यह दृश्य देखती है कि एक भिखारीन बीमार है। वह पास ही लेटी है, दूसरी स्त्री उसके पास बैठी है। भिखारी बीमार स्त्री की बहुत चिंता करता है। उसे अच्छा खिलाने-पिलाने और ख़ुश रखने का प्रयत्न करता है। यह देख कर पत्नी अपने जीवन में प्रेम की कमी महसूस करती है। साथ ही उसे भूख लगती है। यह भूख मनोवैज्ञानिक, मानसिक भूख है। वह चाहती है कि उसका पति भी उसे इसी तरह प्रेम के साथ खिलाएँ, बातें करें, उसकी चिंता करे और उसके लिए तरह-तरह के कष्ट उठाएँ। उनका अध्ययनशील, गंभीर और बुद्धिवादी पति उसकी भावनाओं पर ध्यान नहीं देता। इससे उनकी पत्नी मानसिक रूप से प्रेम की भूखी रहती है। वह पति का एकनिष्ठ प्रेम चाहती है। मगर पति अपने अध्ययन, मनन, चिंतन में डूबे जैसे पत्नी के प्रेम, लालसा की उपेक्षा करता है और उसके साथ तटस्थ व्यवहार करता है। भिखारी का पत्नी के प्रति प्रेम देखकर वह अचंभित होता

है। इस प्रकार इस कहानी में नारी की मानसिक स्थिति को चित्रित किया है।

### ३.४.३.२ त्रिशूल-

यह एक मनोवैज्ञानिक तथा स्वप्न शैली में लिखित कहानी है। इसमें नारी के अतंर्मन का द्वंद्व चित्रण किया है। मनुष्य के अतंर्मन में एक डर बैठा होता है, वहीं बार-बार उमड़कर आता है। व्यक्ति के जीवन में अनेक घटनाएँ घटती है। परंतु कुछ घटनाओं का प्रभाव जाने-अनजाने में व्यक्ति के स्वभाव पर रह जाता है। कभी सपने के रूप में भी कुछ घटनाएँ उजागर होती हैं।

इस कहानी में रेणु एक सपना देखती है कि वह पार्वती है और उसके प्रिय शिव उसके पास आना चाहते हैं। पर वह उसे पास आने नहीं देती है। क्योंकि पार्वती के पास उसकी बेटी मोहिनी है। शिव उसे एक ट्रक में बैठा दिखाई देता है। वह वहीं से कहता है , आओ आओ यहाँ शहद भी है और गुलाब जामुन भी है। परंतु पार्वती अपनी बेटी को लेकर एक मिट्टी के घर में आती है। उस घर को दरवाज़े और खिड़कियाँ नहीं होती हैं। उस घर की तरफ़ एक शिव की धुँधली मुखाकृति दिखाई देती है। वह वही व्यक्ति है जो ट्रक में बैठा होता है। अत: पार्वती दोनों के बीच जलती हुई लकडियाँ डालकर दोनों के बीच व्यवधान उपस्थित करती है। साथ ही वह चीख़ती भी है। परंतु उसकी आवाज़ गले के बाहर नहीं निकलती है।

रेणु की नींद खुलती है। घर, गृहस्थी, बेटा-बेटी, पति सबके बीच उलझी रेणु स्वप्नों के धागों को सुलझा नहीं पती है। शिव द्वारा पुत्री मोहिनी से कहना 'देखो यहाँ शहद भी है गुलाब जामुन भी है। यह प्रेम की भावना का प्रतीक है। ट्रक की ड्रायविंग सीट से शिव का आना प्रेमी का प्रतीक है। पार्वती का मिट्टी के घर में जाना रेणु का प्रतिरूप है। रेणु रूपी पार्वती अपने प्रिय के प्रेम को ठुकराती है। यह प्रिय रेणु का पति नहीं है, प्रेमी है, जो विवाह के पहले उसे चाहता था। परंतु विवाह नहीं हो पाया था। रेणु की यही अतृप्त प्रेम की भावना, स्वप्न रूप में दिखाई देती है। शिव की मुखाकृति धुँधली है क्योंकि रेणु ने अपने प्रेमी को बीस वर्ष पहले देखा है। त्रिशूल को भी प्रतीक रूप में रखा है।

रेणु बहुत परेशान होती है। उसे याद आता है कि बीस वर्ष पहले का युवक जो उसे प्रेम करता था और विवाह करना चाहता था। इसी प्रेम की लालसा उसके अवचेतन मस्तिष्क में थी जो स्वप्न के रूप में दिखाई दी है।

हम समझते हैं कि किसी बात को भूल गए हैं लेकिन वह बात हमारे मस्तिष्क के किसी कोने में छिपी रहती है। मनुष्य के मन की परतों के बीच अनेक भाव छुपे रहते हैं। कभी-कभी वे ही रूप बदलकर स्वप्न के रूप में दिखाई देते हैं और हम जीवन से जुड़े इस स्वप्नों को देखकर भी उसके कारणों को समझ नहीं पाते हैं। अत: नारी के मन में ये डर होता है कि वह उसके ही बारे में बार-बार सोचती है और बेवजह परेशान होती है।

### ३.४.३.३.सारंग तेरी याद में-

यह कहानी प्रतीकात्मक है। इसमें नारी के अतंर्मन की छटपटाहट का चित्रण मिलता है। इसमें बताया है कि आज नारी स्वतंत्र होते हुए भी परंपराओं में किस तरह जकड़ी हुई है। इस कहानी को कभी सौदामिनी और कभी नानी की कहानी की राजकुमारी के माध्यम से दिशा मिली है। सौदामिनी, राजकुमारी के माध्यम से अपने मन की बात बताने का प्रयास करती है। यह कहानी प्रेम के प्रति अतृप्त भावना की कहानी है। इस कहानी की कथावस्तु मनोविश्लेषणात्मक है। मन की स्थिति बदलने के साथ-साथ कथावस्तु भी बदलती है।

सौदामिनी की नानी उसको एक राजकुमार की कहानी सुनाती है। राजकुमार राजकुमारी से बहुत प्रेम करता है। वह उसको विवाह का प्रस्ताव भेजता है। परंतु राजकुमारी उसे स्वीकार नहीं करती है। राजकुमार किसी दूसरी राजकुमारी से शादी करता है। राजकुमारी की शादी भी किसी राजा से होती है। दोनों अपने घर में सुखी रहते हैं। परंतु राजकुमारी की सहेली उसे राजकुमार के प्रेम के बारे में बताती है। मगर राजकुमारी अब धर्म और कर्तव्य में बंध चुकी है। फिर भी वह एक बार राजकुमार को देखने के लिए तरसती है। वह अपने राजा के साथ यात्रा पर जाती है तो उसे इस राजकुमार के यहाँ रुकना पड़ता है। तब वह राजकुमार को केवल देखती है। क्योंकि वह सामाजिक दिखावे का है। बंधन में बंधी हुई है। वह सोचती है उसका अपना संसार अलग

है, जहाँ वह पत्नी है, माता है और स्वामिनी है, जहाँ उसका सम्मान है, समाज में आदर है।' राजकुमारी राजा के साथ अपने राज्य में लौट आती है।

सौदामिनी को नानी की कहानी अधूरी लगती है। वह नानी की कहानी में पूर्णता चाहती है। परंतु वह असंभव है। वे दोनों अपने घरों में संतुष्ट थे। परंतु यह सुख केवल सामाजिक दिखावे का है। यथार्थ में वे सुखी नहीं हैं। सौदामिनी कल्पना में दोनों को मिलाना चाहती है। परंतु असफल होती है; वह निराश होती है।

सौदामिनी को जो नहीं मिला वह राजकुमारी की कल्पना में देखती है। वह भी राजदीप से प्रेम करती है। परंतु शादी नहीं हो पाती है। वह अपने पति के साथ सुखी नहीं रहती है। उसके पहले प्रेम की चाहत उसके मन में मौजूद रहती है। समाज के रीति रिवाज, मान-प्रतिष्ठा दोनों को अपनी जगह स्थिर रखते हैं। वे मिलकर भी नहीं मिल पाते हैं।

अतं में पहेली को बदल दिया है कि एक सारंग की जगह दूसरा सारंग यानी प्रेमी क्यों नहीं हो सकता है। इन प्रयत्नों के बावजूद वह अपने संस्कारों के कारण असफल ही रहती है। इस प्रकार राजकुमारी का दु:ख सौदामिनी का दु:ख है। इस दु:ख का कारण प्रेम की अतृप्ति और सामाजिक रूढियाँ हैं।

इस प्रकार इस कहानी में नारी मन की उलझन का विश्लेषण किया है। बातों-ही-बातों में बात को उलझाकर सुलझाते हुए कुछ पा लेने का प्रयत्न दिखाया है। इसमें यथार्थ है और कल्पना भी। नानी की कहानी में जीवन की घटनाओं को प्रतीक रूप में रखा गया है। सामाजिक, नैतिक मूल्य नारी को इतना बाँध देते हैं कि नारी अपने संस्कारों के कारण चाहकर भी अपने मन की बात नहीं बता सकती है। ऐसी नारी मन-ही-मन छटपटाती हुई अनेक कल्पनाओं से अपने मन को बहलाती रहती है और अतं तक अतृप्त रहती है।

### ३.४.३.४. दिल की लगी-

इस कहानी में प्रेमियों का चित्रण किया है। पति-पत्नी का रिश्ता समझौते पर निर्भर करता है। हठ से वह टूट भी सकता है या उसमें दरार भी आ सकती है। इस कहानी की सफिया मौसी दिखने में सुंदर है। इसी कारण उसमें अहम् बहुत है। वह स्वयं को किसी बंधन में बाँधना नहीं चाहती है। मौसा के साथ उसकी बनती नहीं है। मौसा के रोब जतानेवाले स्वभाव को मौसी सहन नहीं करती है। मौसी ने उसके साथ कभी समझौता नहीं किया वह मौसा से अलग रहती है।

इस कहानी में स्यानी और ईश्वरदास इन दो प्रेमियों का सच्चा प्रेम दिखाया गया है। ईश्वरदास व्यवहार और विचारों से बहुत अच्छा है। वह स्थायी नहीं है। वह काली कलूटी और कुरूप है। सफिया मौसी उसके बारे में कहती है- "अरे वह, वह मेंढकी, ज़रा-ज़रा सी आँखे हैं। एक अक्षर नहीं पढ़ी कहाँ के कहाँ लड़के को फाँस के बैठी है। लड़का तो हीरे जैसा है। उस ज़रा सी मेंढकी के चक्कर में ऐसी सुंदर, गुणवती, पढ़ी-लिखी और शीलवती लड़की से शादी को मना कर दी..वाह परमेश्वर वाह...दिल लगी भी क्या चीज़ होती है? दिल लगा मेंढकी से तो मदमनी का क्या काम! धन्य हो...धन्य हो...।"३६

ईश्वरदास और स्यानी दोनों शादी करते हैं। शादी के बाद भी एक दूसरे को बहुत चाहते हैं। शादी के कुछ दिन पश्चात स्यानी जचगी में मर जाती है। ईश्वरदास को इस बात का पता चलते ही वह रेल के नीचे अपनी जान देता है। इस प्रकार वे दोनों अमर हो जाते हैं। सफिया मौसी को बहुत अफ़सोस होता है कि उसने अपनी सुंदरता के सामने प्रेम को महत्व नहीं दिया।

इस प्रकार इस कहानी में सच्चे प्रेम का चित्रण किया है। प्रेम में सुंदर-असुंदरता नहीं देखना है। तन की अपेक्षा मन का मिलन ही सर्वोत्तम होता है। प्रेम के लिए सुंदर तन की अपेक्षा स्वच्छ, पवित्र मन महत्वपूर्ण होता है।

### ३.४.३.५ हमारी सेल्मा

इस कहानी में नारी कुंठा तथा उसके अकेलेपन का चित्रण किया है। हर व्यक्ति के

जीवन में कुछ न कुछ घटनाएँ घटती जाती हैं। परंतु कुछ जाना-अनजाना प्रभाव उसके व्यवहार में सदा के लिए स्थायी हो जाता है, जिसे सुविधा की दृष्टि से किसी व्यक्ति विशेष का स्वभाव कह दिया जाता है।

सेल्मा किसी एक तनाव या किसी व्यवहार के कटु प्रभाव से इतनी कुंठित हो गई है कि जिसके फलस्वरूप वह अकेली रह गई है। शायद उसके जीवन में कोई घटना घटी हो। सेल्मा बचपन से बहुत स्वाभीमानी और ज़िद्दी है। परंतु शादी के बाद पति के साथ उसकी नहीं बनती है। न जाने पति के कौन से कठोर व्यवहार ने उसके मन में असंमजस्य का भाव नहीं रखती है। अपने पति, बेटे, और बहू के साथ रहकर भी मौन एकांत ही उसका साथी रहता है। बेटा-बहू उससे अलग रहते हैं। फिर भी उसका मौन टूटता नहीं है। वह घर के सभी काम चुपचाप करती है। पति के साथ रहकर भी वह अकेली, मौन और अतंर्मुखी रहती है।

व्यक्ति में परिवर्तन आने के लिए समय लगता है। बचपन का ज़िद्दी स्वभाव अपनी ग़लती मानने के लिए तैयार नहीं होता है। जब तक विवेक बुद्धि को सही मार्ग दिखाया जाता है, तब समय के साथ समझौता भी किया जाता है। जीवन की अतिंम अवस्था में अवश्य सेल्मा अपने अहम् स्वाभीमान, दृढ निश्चय और मानापमान की परिभाषा बदलने का प्रयत्न करती है। उसने समझौता करना सीखा है और अपनी ज़िद्द को स्वयं तोड़ दिया है। सेल्मा को कैंसर हो जाता है। इसी कारण जहाँ से भी मिल सके ख़ुशियों की बूँदे बटोर लेना चाहती है। जैसे उसने अपने जीवन का पुनर्मूल्यांकन किया हो।

इस प्रकार हर व्यक्ति को अपने जीवन का पुनर्मूल्यांकन करना आवश्यक है। क्योंकि अपनी ज़िद्द के कारण किसी समय विषय में कुछ खो देने का दुःख किसी को भी जीवन भर होता है। काल की गति बढ़ती ही है, किंतु व्यक्ति अपने अतीत को देख सकता है कि उसमें उसने क्या खोया और क्या पाया है। आख़िर अजांम यही हो सकता है कि मन की बातें मन में ही रहती हैं। ज़ीदगी सही अर्थों में कुछ समय के लिए सही मिले तो भी क्या कम है। अज्ञेयजी के उपन्यास 'अपने अपने अजनबी' की प्रमुख नारी पात्र सेल्मा में अहम् कुंठा, स्वार्थ, व्यक्तिवाद के सभी भाव और विचार मौजूद हैं। कुछ मात्रा में ये भाव

इस कहानी की सेल्मा में भी हैं। परंतु अज्ञेय की सेल्मा से इस सेल्मा में कुछ अलग विशेष बातें नज़र आती हैं।

### ३.४.३.६. प्रतीक्षा-

'प्रतीक्षा' एक तरफा प्रेम कहानी है। किसी के प्रति मन में अनुराग निर्माण हो जाए तो व्यक्ति उसी के बारे में सोचता रहता है। उसी की प्रतीक्षा में जीवन बीताता है। परंतु जिस व्यक्ति से प्रेम हो जाता है वह अगर इन बातों से अनजान हो तो क्या फ़ायदा?

इस कहानी में सुमन के एक तरफा प्रेम का चित्रण है। सुमन प्रकाश से प्रेम करती है। उसने उसे किसी समारोह में देखा है। परंतु प्रकाश इस बात से अनजान है। सुमन को विश्वास होता है कि वह भी उससे प्रेम करता है। वह मन ही मन उसकी प्रतीक्षा करती है। वह युवती से प्रौढ हो जाती है। लेकिन प्रतीक्षा का भाव मन में बना रहता है।

स्त्री बहुत ही नाज़ुक और संवेदनशील होती है। सुमन के आफ़िस में विनय की क्लार्क पद के लिए नियुक्ति होती है। उसे देखकर सुमन ज़िंदगी की बीती घड़ियों में खो जाती है। सुमन को अपने प्रेम पर इतना विश्वास होता है कि विनय को देखकर उसे लगता है- "कहीं ऐसा तो नहीं प्रकाश ने मेरे लिए नया जन्म लिया हो? पुनर्जन्म क्या असंभव है।"३७ उसे लोक लाज की चिंता होती है कि कहीं उसे आफ़िस के लोग ग़लत न समझे। सुमन उच्चशिक्षित और समझदार होकर भी अपने बारे में निर्णय नहीं ले पाती है। विनय की स्नेहपूर्ण बातों से उसके मन में असमंजस का भाव पैदा होता है। वह विनय के घर में प्रकाश की तस्वीर देखकर अचंभे में पड़ती है। वह तस्वीर प्रकाश की होती है।

विनय के घर में उसने अपना जीवन अविवाहित रहकर व्यतीत किया था। उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी प्रकाश की शादी हुई होगी और उसका बेटा विनय उसके जैसा ही दिखेगा। प्रकाश की गृहस्थी की हरी-भरी बगिया देखकर उसे अपना जीवन शियन रेगिस्तान की तरह लगता है। जिसमें वह अकेली भटकती है। वह स्वयं को तर्क-वितर्क में तौलती है- "क्या उसने ग़लती की है? एक तरफा प्रेम की मृग मरीचिका के पीछे भागती रही, शून्य में सुख ढूंढती रही और अब उसके सामने क्या शेष रहा है? जीवन का उद्देश्य क्या रह गया है।"३८ सुमन को बहुत पछतावा होता है। उसका

आत्मसम्मान जाग उठता है। उसमें प्रेमभाव के स्थान पर विश्वकल्याण की भावना जागती है। उसके पास शिक्षा, पद और सम्मान सब है। वह कहती है कि प्यार करना है कि प्यार तो पूरे विश्व से करूँगा समाज में बहुत दु:ख ग़रीबी है, उनके लिए काम करेगी। सुमन अतं में सोचती है, आज से मेरे विचार, मेरा चिंतन किसी एक नाम, किसी एक व्यक्ति तक सीमित नहीं रहेगा, दुनिया बहुत बड़ी है। मेरे जीवन का उद्देश्य और जीवन का आधार बहुत बड़ा असीम दिगंत तक फैला होगा, जिसमें लाखों, करोड़ों लोग होंगे। उनमें विनय भी होगा, प्रकाश भी होगा तब मुझे किसी एक प्रकाश के मान की ज़रूरत नहीं होगी। प्रकाशपुंज मेरे साथ में होंगे। मेरा मार्ग प्रकाशमान होगा, मेरा जीवन प्रकाशमान होगा ।

अत: प्रेम मनुष्य जीवन की अनमोल वस्तु है जिसके बारे में थोड़ीसी जानकारी मिलते ही मन भटकने लगता है। किसी के प्रेम में एकरूप रहना अच्छी बात है परंतु उसकी प्रतीक्षा में ज़िंदगी व्यर्थ बिताना असंगत है। स्त्री भावुक होती है। फिर भी उसे सोचना चाहिए कि जीवन का उद्देश्य क्या है? और उसे उद्देश्य की पूर्ति के लिए क्या करना होगा?

### ३.४.३.८. कैसे कहूँ-

इस कहानी में नारी मन के द्वंद्व का चित्रण है। भारतीय नारी छोटी-छोटी बातों पर भी बहुत विचार करती है। अपने मतानुसार कोई भी अनुमान लगाकर मन ही मन आनेवाले परिणामों के बारे में सोचकर बेकार ही डरती है। उसमें इतना साहस नहीं होता है कि वह अपनी बात को सीधे कह सके।

इस कहानी की कुसुमांजली एक साहित्यकार है। उसे किसी पाठक का प्रेमपत्र आता है। एक स्त्री लेखिका को पाठक का प्रेमपत्र आना धर्म संकट की बात हो सकती है। उसके मन में द्वंद्व चलता है कि यह बात किसी को बताए या नहीं। वह अपने पति को कहने से भी डरती है। क्योंकि वे कहीं उसे ग़लत न समझे। वह एक साहित्यकार होकर भी

अपनी बात किसी को बताने का साहस नहीं करती है।

कुसुमांजली यह बात अपनी सहेली को बताना चाहती है। मगर वह सोचती है कि उसका इस संबंध में कहना ग़लत होगा। क्योकि वह अपने मन का कुछ जोड़कर अपने नज़रिए से समाज के सामने पेश करेगी। नारी हर बात के प्रति सजग रहती है- "हर भारतीय नारी जो चाहे वह हिंदू, मुसलिम, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी, ईसाई कुछ भी हो। मानसिक रूप से नैतिक आधार पर वह यह मानकर चलती है कि उसका पति ही सामाजिक प्रतिष्ठा दे सकता है। एक से अधिक पति या, प्रेमी होने के साथ प्रेमिका होना उसे सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं दे सकता।"३९ अतं में हिम्मत के साथ वह प्रेमपत्र पति को दिखाती है। परंतु पति पर इस बात का कोई असर नहीं होता है। वे कहते हैं साहित्यकार होते हुए उसे इतनी सी बात पर विचार नहीं करना चाहिए।

अत: स्पष्ट है कि भारतीय नारी स्त्री-पुरूष समानता तो चाहती है। लेकिन भारतीय संस्कृति की मर्यादा को भी तोड़ना नहीं चाहती है। वह पतिव्रता धर्म को श्रेष्ठ मानती है। समाज की दृष्टि में सामाजिक मर्यादा को महत्वपूर्ण मानती है।

### ३.४.३.९. घर भी तो जाना है-

इस कहानी में आज के व्यस्त तथा आज़ादीपूर्ण जीवन का कामकाजी नारी की व्यस्तता का चित्रण किया है। साथ ही शासन व्यवस्था की लापरवाही तथा नियमों के खोखलेपन को बताया है।

इस कहानी की आशा एक कामकाजी नारी है। वह स्कूल में शिक्षिका है। घर के काम भी उसे करने पड़ते हैं। आशा की बेटी के जी में पढ़ती थी। वह उसे स्कूल से लाने के लिए जाती है। परंतु स्कूल में 'बालक दिवस' का कार्यक्रम मनाने के कारण छुट्टी नहीं हुई होती है। आशा प्रतीक्षा करती बाहर बैठती है । उसे स्कूल जाने में दो मिनट देर हो जाती है तो इचार्ंज की डाँट पड़ती है। वह देर होने का कारण बताती है। परंतु वह बिल्कुल नहीं सुनती है। इचार्ंज मुँह फुलाये कहती है- "और हाँ, पेपर के बंडल जाँच कर जल्दी ही वापस करना। मैं अभी नोटिस निकाल रही हूँ"२५ आशा को स्कूल से आते बेटी को लेना होता है। बस स्टाप पर पूरा एक घंटा जाता है। बेटी के स्कूल में आती है तो कार्यक्रम अभी भी

शुरू था। वह बहुत ग़ुस्सा होती है। आज एक तरफ़ सिर्फ़ नियमों के निर्देश कर काम किया जाता है। दो मिनट का भी समझौता नहीं होता। तो दूसरी तरफ़ नियम और वक़्त का कोई मूल्य नहीं है।

साथ में यह भी बताया है कि नारी कितना व्यस्त रहती है। आज की कामकाजी नारी इतनी व्यस्त है कि घर का काम संभालकर नौकरी करनी पड़ती है। अगर उसे स्कूल के लिए देर हो जाए तो उसे सभी नियम दिखाए जाते हैं। भले ही बस स्टाप पर घंटों मक्खियाँ मारनी पड़े। बस के कर्मचारी अपने काम में लापरवाही करे तो उन्हें कोई डाँटता नहीं है। अगर बस ही लेट आए तो देरी होगी ही। परंतु हर एक दूसरे को ही नियमों में बाँधने की चेष्टा करता है।

### ३.४.३.१० बंधी हुई राखी-

यह कहानी भाई बहन के रिश्ते पर आधारित है। ख़ून के रिश्ते से बढ़कर मुँह बोले रिश्ते में अपनापन होता है। परंतु वर्तमान युग में इन पवित्र रिश्तों का महत्व कम होता जा रहा है। आज रक्षाबंधन जैसे पारंपरिक त्यौहार में औपचारिकता दिखाई देती है। परंपरा के अनुसार भाई बहन की रक्षा करता है। परंतु वर्तमान युग में भाई बहन के रिश्ते में औपचारिकता आने लगी है। शहरों में रहनेवाली उच्च शिक्षा प्राप्त, नौकरी करनेवाली बहने अब इस परंपरा को औपचारिक मानती हैं। मायके जाकर भाई को अपने हाथों से राखी बाँधने की अपेक्षा राखी को लिफ़ाफ़े से भेजती है।

स्वयं लेखिका इस रिश्ते के प्रति तटस्थ रहती है। इस कहानी का हरिश स्वभाव से बहुत चंचल है, स्नेह का प्यासा है। लेखिका को वह अपनी बहन मानता है। परंतु वह इस रिश्ते के प्रति तटस्थ रहती है। वे सोचती है- "शहर की मशीनी ज़िंदगी में जब अपने ही घर-परिवार की ज़िम्मेदारी निभाना कठिन हो रहा है, तब यूँ ही कोई और रिश्ता बना लेना और उसे निभाते रहने की बात सोचना सरल या आसान नहीं हो सकता। मुँह बोले रिश्तों को जीवन भर के लिए कर्तव्य और ज़िम्मेदारी में बाँधना है, इतना वक़्त कहाँ है।"[४०]

रक्षा बंधन के दिन लेखिका हरिश को अपने घर नहीं बुलाती और न ही हरिश उनके

घर जाता है। दूसरे दिन लेखिका ने देखा उसकी कलाई पर राखी बंधी हुई होती है। उनको अच्छा लगा परंतु उसकी बंधी हुई राखी खुल जाती है तो वह लेखिका को बाँधने को कहता है। राखी बाँधते ही वह शरारत से 'मेरी अच्छी दीदी' कहकर भाग जाता है। उसकी कोई बहन न होने के कारण वह लेखिका को ही अपनी बहन मान लेता है।

इस प्रकार व्यक्ति अपनी ही चिंताओं और मनोविकारों से ग्रस्त है, जिसके फलस्वरूप वह एक दूसरे के प्रति नीरस और निर्विकार भाव रखते हैं। उनके व्यवहार में औपचारिकता अधिक दिखाई देती है।

### ३.४.३.११. ग़लती किसकी है-

इस कहानी में पारिवारिक समस्या को उठाया है। इसमें बताया है कि समान परिवेश होकर भी संस्कारों के अभाव में बच्चे बिगड़ते हैं। आज बेटा-बेटी को समान अधिकार होते हुए भी दोनों में फ़र्क़ किया जाता है। आज बेटे की अपेक्षा बेटियाँ ही ज़्यादा प्रगति करती हैं। माँ बाप की लापरवाही तथा कुसंगति के कारण बेटे बिगड़ते हैं।

इस कहानी में अनीता और सुनीता दोनों सगी बहनों की शादी एक ही घर में दो सगे भाईयों से होती है। उनके पति रमेश और महेश समान पद पर नौकरी करते हैं। अनीता जेठानी होने के नाते सुनीता पर रोब जमाती है। उसे तीन बेटे होने का गर्व है। वह अपने बेटों पर बहुत ख़र्चा करती है। सुनिता की तीन बेटियाँ हैं। वह अपनी बेटियों की पढ़ाई के लिए सारा ख़र्चा हाथ रखकर करती है। उनकी पढ़ाई पर पूरा ध्यान देती है। और उन पर अच्छे संस्कार भी करती है।

अनीता और उसके पति हमेशा सुनिता से बढ़-चढ़कर बातें करते हैं। वे दोनों सुनिता और उसके पति का उपहास करते हैं। महेश ऊपरी सहानुभूति से कहता है- "अरे लड़कियों, तुम्हें इसी घर में आना था क्या? मेरे छोटे भाई को तुम लोगों ने चिंता में डाल दिया है। बेचारा कैसे तुम तीनों का दहेज जुटाएगा, कैसे तुम्हारी शादी का बोझ उठाएगा? वह तो ज़िंदगी भर क़र्ज़ में दबा रहेगा तुम लोगों को मेरे भाई के घर ही आना था क्या?"४१

लाड़ प्यार के कारण अनिता के बेटे बिगड़ते हैं। बड़ा बेटा किसी बदमाश औरत के चक्कर में फँसता है और उससे ही शादी करना चाहता है। उसके छोटे भाई भी उसका चाल चलन और व्यवहार का अनुकरण करते हैं। अनीता के तीनों ही बेटे आवारा निकलते हैं। सुनीता उसे बहुत समझाने की कोशिश करती है। परंतु अनीता पर कोई असर नहीं होता है। सुनीता की तीनों बेटियाँ बहुत ही गंभीर, परिश्रमी और बुद्धिमान हैं। क्योंकि वह उन पर अच्छे संस्कार करती आ रही है। बड़ी बेटी सुषमा एम.ए., बी.एड करके नौकरी करती है और निराश और दु:खी होती है।

इस प्रकार इस कहानी में बच्चों के जीवन में संस्कारों का महत्व बताया है। साथ ही स्त्री शिक्षा को भी महत्व दिया है। माँ-बाप का कर्तव्य बनता है कि अपने बच्चों को प्यार और सम्मान के साथ उनके व्यक्तित्व के विकास में पूरा योगदान दें।

### ३.४.३.१२. सही निर्णय-

इस कहानी में नौकरी की भागदौड़ में संत्रस्त नारी का चित्रण है। साथ ही बेटा और बेटी के महत्व को भी बताया है। आज भी बेटा और बेटी में फ़र्क़ किया जा रहा है। आज की नारी शिक्षित होकर भी कुलदीपक के रूप में बेटा ही चाहिए है साथ ही यह भी बताया है कि आज की भागदौड़ की ज़िंदगी तथा महँगाई के कारण बच्चों की देखभाल करना कितना कठिन हो रहा है।

इस कहानी की इदुं एक शिक्षित और समाज सेविका है। उसकी दो बेटियाँ हैं। घर के काम के साथ बेटियों की देखभाल, नौकरी की भागदौड़ इसके कारण इदुं बहुत चिड़-चिड़ी बनती है। तीसरी बार वह पाँच माह का गर्भपात करवाती है। उसे बहुत दु:ख होता है। वह कुलदीपक को अपने हाथों से बुझा देते हैं। साथ में ये भी परेशानी होती है कि बच्चे को सँभालेगा कौन? इदुं बेटा न होने का दु:ख नहीं भूलती है।

दूसरी ओर नारी नि:संतान होकर भी दूसरों के बच्चों को गोद लेकर उनकी देखभाल में अपना दु:ख भूल जाती है। इदुं अपने देवर और देवरानी को गोद ली बेटी रीमा के साथ

प्रसन्न और संतुष्ट है तो उसे उनसे बहुत प्रेरणा मिलती है। उनकी सहेली कुसुम जिसने अपने बहन की बेटी को गोद लिया होता है। उसका उस बच्ची के प्रति प्रेम देखकर इंदु का हृदय कचोटने लगता है।

वह दो बेटियों की माँ होकर भी उन्हें कभी दिल से प्यार नहीं कर सकी है। उसे बहुत पछतावा होता है। वह मन ही मन कहती है- "छि! कितनी परंपरावादी है वह? इतनी पढ़ी है एम.ए, बी.एड, फिर भी उसके विचार कितने संकीर्ण और स्वार्थपूर्ण हैं? उससे तो कम पढ़ी-लिखी रीना और तृप्ति की अनपढ़ दादी ओह।"२८ इन सब बातों को सोचकर इदुं शर्म से गढ़ जाती है।

बहुत सोच-विचार के बाद इदुं फेमिली प्लानिंग का ऑपरेशन करा लेती है। अपनी दो बेटियों पर ज़्यादा ध्यान देने लगती है। वह निर्णय लेती है कि बेटा न होने का अफ़सोस वह कभी नहीं करेगी। अपनी बेटियों को ही ख़ूब पढ़ा लिखाकर बहुत ऊँचाई तक पहुँचाएगी। स्पष्ट है कि आज की नारी शिक्षित होकर भी उसके विचार कितने संकीर्ण और स्वार्थपूर्ण लगते हैं। परंतु उसका इस संकुचित विचारों के घेरे से बाहर आना महत्वपूर्ण है।

### ३.५ डॉ. जयप्रकाश कर्दम:

### जन्म तथा बाल्यकाल

हिंदी साहित्य के विशेष रूप में दलित लेखन क्षेत्र के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का जन्म ५ जुलै १९५८ में उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद के निकट स्थित गाँव इदंरगढ़ी के एक ग़रीब दलित मज़दूर परिवार में हुआ । उनके पिता हरिसिंह, माता उतरकली थी । घर की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी । लेकिन पढ़ाई में बहुत होशियार होने के कारण सदैव प्रथम श्रेणी में पास होते रहे ।

### शिक्षा-दिक्षा

जयप्रकाश कर्दम जी की प्रारंभिक शिक्षा गाँव के महानंद मिशन हरिजन प्राइमरी पाठशाला में हुई । उसके बाद इटंरमिडियट तक की शिक्षा गाजियाबाद के आध्यात्मिक नगर इटंर मिडियट कॉलेज में से पूरी की । इसके बाद गाजियाबाद के एम.एम.एच.

कॉलेज से १९८० में बी.ए. इतिहास प्राइवेट छात्र के रूप में क्रमशः १९८४ और १९८६ में मेरठ के चौ. चरणसिंह विश्वविद्यालय से पूरी की। इसके बाद इसी विश्वविद्यालय से उन्होंने हिंदी में पीएच.डी. भी की।

**कृतित्व**

साहित्य जगत के सशक्त हस्ताक्षर जयप्रकाश कर्दम जी अधिकांश साहित्यकारों के समान किसी एक साहित्यिक विधा में सफलता प्राप्त कर प्रसिद्ध नहीं हुए। परंतु उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, जीवनी संपादन आदि सभी क्षेत्रों में सफलता हासिल की है। आपका अधिकांश लेखन बुद्ध और दलितों पर आधारित है।

**काव्य संग्रह**

१. गूँगा नहीं था मैं

२. तिनका तिनका आग

**कहानी संग्रह**

१.तलाश

**उपन्यास**

१. छप्पर

२. करूणा

३. श्मशान का रहस्य

**आलोचना -**

'रागदरबारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन' (२०००) 'इक्क सवीं सदी में दलित आदोंलनः साहित्य एवं समाज चिंतन' (२००५), 'दलित विमर्श : साहित्य के आइने में (२००६),

'हिंदुत्व और दलित : कुछ प्रश्न कुछ विचार' (२००७), 'वर्तमान दलित आदोंलन' (१९८३), 'और अबेंडकरवादी आदोंलन-दशा और दिशा' (१९११), कर्दम जी द्वारा लिखित आलोचनाओं का संग्रह हैं। आपके द्वारा लिखित 'दलित साहित्य में सामाजिक सांस्कृतिक चेतना' ग्रंथ भी प्रकाशित है।

**बाल साहित्य**

श्मशान का रहस्य (१९९४), हमारे वैज्ञानिक-सी. वी. रामन (१९९७), डॉ. अबेंडकर की कहानी (१९९४), बुद्ध और उनके प्रिय शिष्य (१९९६), बुद्ध की शरणागत नारियाँ (१९९४) और महान बौद्ध बालक।

**जीवनियाँ**

आपके बौद्ध जीवन पर आधारित तीन जीवनियाँ हैं ट्ट 'बौद्ध धर्म के आधार स्तंभ' (१९९७), 'बौद्ध दार्शनिक' और 'मानवता के दूत।'

**अनुदित ग्रंथ**

**१. चमार**

**संपादन**

जातिः एक विमर्श (१९९९), 'गुलामगिरी', 'धर्मांतरण और दलित' (२००२), अभिमुख नायक, पत्रिका के दलित साहित्य पर आधारित 'सहस्त्राब्दे अकं २०००' दलित साहित्य (वार्षिकी) के सात अंक (१९९९ से २००५ तक) के संपादक रहे हैं।

**साहित्यिक सम्मान**

कर्दम जी के साहित्य के लिए कई पुरस्कार प्रदान किए गए हैं। जैसे - 'चमार' के लिए 'डॉ. अबेंडकर नेशनल अवार्ड', 'गूँगा नहीं था' के लिए १९९४ में 'बाबु जगजीवनराम साहित्य सारस्वत सम्मान', साहित्य अकादमी से 'कबीर सम्मान', 'छप्पर'

उपन्यास के लिए पंद्रह हजार रूपएँ का प्रथम पुरस्कार मिला । भारत सरकार द्वारा फेलोशिप और बौद्ध महासभा उत्तर प्रदेश फेलोशिप सहित कई अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है ।

### ३.५. जयप्रकाश कर्दम :

कर्दम जी की कहानियों का मूल उध्देश्य दलित समुदाय को पराधीनता की उन रुढियों से मुक्ति दिलाने का है जिसने उन्हें हज़ारों वर्षों से भारतीय समाज की मुख्यधारा में अस्पृश्य तथा कमजोर बनाए रखा है । इनकी कहानियों में आशा का संचार है तथा जातिवादी, सामंतावादी एवं ब्राह्मणवादी व्यवस्था के विरोध-प्रतिरोध का स्वर मुखरित करती है ।

### ३.५.१ सांग-

डॉ. जयप्रकाश कर्दम द्वारा लिखित 'सांग' कहानी में मुखिया अपने नौकर के साथ किस प्रकार अमानवीय व्यवहार करता है तथा दु:ख के प्रतिकार लेनेवाले के रूप में चंपा का चित्रण है।

इस कहानी में भूल्लन उसी गाँव के मुखिया के खेत में काम करता है। भूल्लन दलित था। भूल्लन को सांग देखने का शौक़ था। इसीलिए एक दिन बीमार होने पर भी वह मुखिया के खेत में काम करने के बजाय वह सांग देखने जाता है। मुखिया अपने घर के काम करने न आने के कारण उसके घर के सामने आकर ज़ोर से चिल्लाने लगता है। लेकिन भूल्लन उससे विनती करता है- "आपके काम की कभी ना नहीं है मालिक ठीक होता तो ज़रूर जाता पानी लगाने लेकिन ठीक से खड़ा नहीं हुआ जाता है। पानी मुझ से नहीं लग सकेगा ठीक हो जाएँ, फिर चाहे जो काम करवा लेना, आधी रात आपकी तावेदरी में रहूंगा।"४२

अबे ओ भूल्लन! अबे कहाँ हो? करके चिल्लाते मुखिया आकर उसे डाँटने लगता है। मुखिया के तेवर को देखकर भूल्लन की निकर गीली हो जाती है; वह काँपने लगता है तथा पूछता है क्या क़सूर हो गया मुझ से मालिक? तो वह कहता है- "पापी बुलाने के

नाम पर बीमार होता है खड़े नहीं हुआ जाता, चक्कर आते हैं और सांग देखने के लिए जान आ जाती है। झूठे हरामख़ोर..."४३ कहने के साथ भूल्लन की गर्दन को मुखिया ने पकड़ा और एक ज़ोर का धक्का देते ही भूल्लन औधें मुँह ज़मीन पर जाकर गिरता है। वह उसके पीठ पर भी प्रहार करता है।

भूल्लन गिड़गिड़ाता, मिमियाता रहा तड़पता रहा। अपने बीबी, बच्चों, माँ की दुहाई दे-देकर दया की भीख माँगता रहा। लेकिन मुखिया लाल आँखे करके भूल्लन को घूरने लगा और जब घूँसे नहीं रूकते तो उसकी मार से बेहोश होकर ढेर हो जाता है। भूल्लन की पत्नी चंपा को यह मालूम होते ही वह आकर मुखिया से भूल्लन को छोड़ने के लिए कहती है। मिन्नते करते हुए गिड़गिड़ाती है, उसके पैर पकड़ती है। लेकिन कोई लाभ नहीं होता । मुखिया भूल्लन का बहुत बुरा हाल करता है। चंपा उसे बुरी हालत में घर ले जाकर उसकी सेवा करती है।

एक दिन मुखिया चंपा के घर के सामने आकर उसे अश्लील शब्दों का प्रयोग करते हुए खेत में नलाई करने बुलाता है। चंपा के मेरी तबीयत ठीक नहीं है कहने पर भी उसे डाँटने लगता है। चंपा को पकड़ने हाथ बढ़ाते मुखिया को वह ओढ़नी में से गँड़ासा निकालकर एक ही क्षण में सर काट कर मार देती है।

### ३.५.२. मोहरे-

जयप्रकाश कर्दमजी की कहानी 'मोहरे' में सवर्णों द्वारा दलितों का शोषण दृष्टिगोचर होता है ।

सत्यप्रकाश एक विद्यालय में कार्यरत था। वह जवाहर नगर के बच्ची कालोनी में रहता था। जहाँ अधिकांश दलित रहते थे। सत्यप्रकाश को एक निष्ठावान और समर्पित अध्यापक होने के नाते स्कूल में ही नहीं बल्कि पूरे डिस्ट्रिक्ट में उसकी एक सम्मानजनक इमेज थी। हर साल जब भी बेस्ट टीचर्स अवार्ड के लिए नाम अनुमोदित होकर जाते तो डिस्ट्रिक्ट के सभी स्कूलों में संभावित अध्यापकों में उसका नाम सबसे ऊपर होता था। इससे उस स्कूल के चापलूस क़िस्म के अध्यापक निराश और दु:खी होते थे। लेकिन सत्यप्रकाश पूर्ववत पूरी तत्परता से बच्चों को पढ़ाने में जुट जाता था। लेकिन बाकी

अध्यापक कक्षा में होशियार बच्चों को पढ़ाने के काम में लगाते थे। ऐसे अध्यापक जहाँ छात्रों से पढ़ाई से ज़्यादा बाहर की बातें करने में समय व्यर्थ गँवाते थे। लेकिन सत्यप्रकाश ऐसे अध्यापक नहीं थे। बाकी अध्यापक परीक्षा में तैयारी के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न देते थे। सत्यप्रकाश बच्चों को महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं बताते थे । उनके अनुसार 'सब पाठ और सारे प्रश्न इपोर्टें हैं। इस तरह कड़ी  मेहनत से बच्चों को पढ़ाते थे। साथी अध्यापक उसको इतनी मेहनत से पढ़ता देखते, उसे टोकते कहते- "कितनी भी मेहनत करलो वेतन उतना ही मिलेगा। तुम ख़ुद को झोंक दो लेकिन सरकार में इस बात की कोई क़ीमत नहीं है।"४४

एक दिन सत्यप्रकाश स्कूल में सातवीं कक्षा में पढ़नेवाले छात्र मनोज को कक्षा में बैठने के लिए कहता है, नहीं समझने पर उसे प्यार से समझाकर उसे कक्षा में जाकर पढ़ने को कहा और कक्षा में नहीं जाने पर उसने मनोज का हाथ पकड़ कर और उसके मुँह पर हलकी सी एक चपत लगा देता है। छोटी सी घटना को लेकर साथी अध्यापक और प्रधानाध्यापक षड्यंत्र के रूप में उस पर कंप्लेंट कराने का नाटक करते हैं। छात्र मनोज को भड़काते हैं। उसके पिता से कहकर सत्यप्रकाश के ख़िलाफ़ विभाग के डिप्टी डायरेक्टर तक सत्यप्रकाश का एक हिंसक और क्रूर अध्यापक के रूप में शिकायत करके इन्क्वायरी कराते हैं। इन्क्वायरी में सभी के पूछताछ के बाद सत्यप्रकाश को दोषी ठहराते हैं। उसका तबादला दूसरे स्कूल में कराते हैं। भारी मन से सत्यप्रकाश वहाँ से निकलता है सोचने लगता है- "मेरे समाज के लोग दूसरों के हाथों के मोहरे कब तक बनते रहेंगे।"४५

### ३.५.३.  नो बार-

जयप्रकाश कर्दमजी द्वारा लिखित 'नो बार' कहानी समाज में जाति तोड़ने की दोहरी नीति रखनेवालों के मुँह पर तमाचा है।

'नो बार' कहानी में राजेश एक दलित नवयुवक था। वह पेपर में  निकलनेवाले हर एक 'मेट्रीमोनियल' कालम को अवश्य पढ़ता था। उसे एक ऐसी योग्य लड़की की तलाश थी । चाहे वह अपनी जाति की हो या किसी अन्य जाति की। एक दिन उसे पत्रिका में ऐसा ही एक मैट्रीमोनियल देखने को मिला। तुरंत एक विवरण युक्त पत्र लड़की के घर भेजा। इसमें जाति का उल्लेख नहीं था।

क़रीब डेढ़ सप्ताह के बाद उस पत्र का जवाब मिला और बताया गया था कि लड़कियोंवालों ने उसे अपने घर आमंत्रित किया है । वह लगभग एक घंटे तक वहाँ रहा। उसने लड़की को देखा तो वह उसे पसंद आयी। लड़की के पिता ने इनसे कहा, देखिए राजेश जी, हम बड़े खुले विचारों के आदमी हैं। जाति-पाँति, धर्म, संप्रदाय किसी प्रकार के बंधन को नहीं मानते। ये सब बाते पिछड़ेपन की प्रतीक हैं। हमारे परिवार में जितनी भी शादियाँ हुई हैं अतंर्जातीय हुई हैं।

इस तरह शादी के मामले जल्दबाज़ी में नहीं करना है। आप दोनों को एक दूसरे को पहचानना चाहिए, समझना चाहिए। तुम, लोग पढ़े-लिखे हो दुनिया को देखते हो अपना भला-बुरा अच्छी तरह समझते हो; तुम जो भी करोगे ठीक ही करोगे। यदि तुम्हें अच्छा लग रहा है तुम्हारा मन कह रहा है तो हमारे लिए भी अच्छा है। तुम्हारी ख़ुशी में ही हमारी ख़ुशी है और इतना कहकर वह चुप हो गए थे ।

राजेश और अनिता दोनों शादी के सपने देखते हैं। बाद में अनिता के पिता राजेश से राजनीतिक विचारों को लेकर चर्चा करते हैं । इसमें सभी प्रमुख राजनीतिक नेता एवं पार्टी की बात होती है। इसमें से पता चलता है कि यह लड़का पिछड़े जाति का है। क्योंकि यह हमेशा ऐसे पक्ष और ऐसे लिड़रों के बारे में अपनी राय देता था। अनिता के पिता अदंर जाकर मन के संदेह को व्यक्त करता है। अनिता वह लड़का किस जाति का है? वह कहती है पापा मुझे मालूम नहीं मैंने भी कभी उसे पूछा नहीं? लड़का अच्छा है और अच्छी आदत है। पत्रिका में जो 'नो बार' छापा था, इसीलिए नहीं जानना चाहा कि वह किस जाति का है? यह सुनकर अनिता के पिता कहतें है-

"वह सब ठीक है कि हम जाति-पाँति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। फिर भी कुछ चीज़ें तो देखनी ही होती है। आख़िर 'नो बार' का यह मतलब नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ"४७ ऐसे कहते हुए राजेश को अछूत और निम्न जाति का समझकर उसके साथ अनिता की शादी कराने से मुकर जाता है।

### ३.५.४. मुवमेंट-

जयप्रकाश कर्दमजी द्वारा लिखित 'मुवमेंट' कहानी एक आत्मकथात्मक शैली है।

इसमें सुनिता अपने पति के व्यवहार से नाराज़ दिखती है। जब भी पति घर में आता है तो उसे देखकर चिढ़ती है। सुनिता अकेले ही घर के सभी काम-काज करती रहती है। घर के काम में पति का सहयोग नाम मात्र भी नहीं था। इसका कारण था सुनिता का पति हर समय घर से बाहर रहता था। मुवमेंट में कार्य करता रहता था। मुवमेंट में रहते समाज का कार्य करने के कारण सुनिता से कटु शब्दों को भी सुनना पड़ता था। सुनिता ग़ुस्से में आकर कहती थी कि- "समाज समाज, हर समय समाज का नशा छाया रहता है तुम्हारे दिमाग़ पर न खाना न पीना, न चैन, न आराम, न घर की चिंता, न बाहर की चिंता जब देखो समाज। मैं पूछती हूँ क्या देता है समाज तुम्हें? तुम भूखे मरते हो कोई तुम्हारी दवा-दारू नहीं कराता। तुम फटे चिथड़े लटकाए फिरते हो कोई तुम्हें कपड़े नहीं देता। तुम्हारे बच्चों के स्कूल की फ़ीस टाइम से नहीं जाती तो कोई पूछने नहीं आता। बार-बार तुम किराए के मकानों में कभी यहाँ कभी वहाँ सामान उठाए फिरते हो कोई तुम्हें रहने को नहीं देता। फिर कैसा समाज, किसका समाज? सब अपनी-अपनी आपाधापी में लगे हुए हैं, सब कॉपिटिशन में उलझे हुए हैं। क्या ऐसे ही स्वार्थ में लिप्त लोगों के समूह को समाज कहते हो।"४८

सुनिता को बाबा साहेब अबेंडकर के समाज सेवा के महत्व को समझाने का वह प्रयत्न करता है। फिर भी वह नहीं मानती। फिर दोनों के बीच लंबी बहस चलती है। अतं में वह कहती है कि - "मनुष्यता ही सिर्फ़ तुम्हारा? एक तुम ही तो मनुष्य हो इस धरती पर और तो कोई है नहीं तुम ही करोगे सबकी ज़रूरतें पूरी।"४९

सुनिता पति से कहती है कि जिस तरह आस-पास के लोग पारिवारिक जीवन यापन करते हैं जैसे पति-पत्नी एक साथ शॉपिंग जाया करते हैं, उनके पास जिस प्रकार की सुविधाएँ हैं उसी तरह के सुविधाएँ होने के साथ समाज में अपना अस्तित्व बनाए रखना चाहती है। घर के चार दीवारी में रहते घर की ज़िम्मेदारी अकेली नहीं लेना चाहती है।

सुनिता पति को समझाती है कि पहले घर को सँभालो, न्याय स्थापित करो बाद में समाज में जाकर भाषण झाड़ों यही मुवमेंट है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ-


१. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , ७०.

२. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , १९.

३. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , २०.

४. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , २०.

५. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं ट्ट २२.

६. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी, पृ , ट्ट २४.

७. बुद्ध शरण हंस- तीन महाप्राणी , पृ सं , ४५.

८. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , ५७.

९. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , ११.

१०. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , १२.

११. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , १५.

१२. बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , ३७.

१३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं , पृ सं , २५.

१४. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं , पृ सं , २८.

१५. ओमप्रकाश वाल्मीकि - ब्रम्हास्त्र , पृ सं , ८४.

१६. ओमप्रकाश वाल्मीकि - ब्रम्हास्त्र , पृ सं , २२.

१७. डॉ.सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , ४३.

१८. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , ६३.

१९. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , ६८.

२०. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , ११२.

२१. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , १२९.

२२. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , १२ .

२३. डॉ. सुशीला टाकभौरे -टूटता वहम , पृ सं , २६.

२४. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , १३६.

२५. डॉ. सुशीला टाकभौरे - व्रत और व्रती , पृ सं , ४९.

२६. डॉ. सुशीला टाकभौरे - व्रत और व्रती , पृ सं , ५३.

२७. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , ५८ , ५९.

२८. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , ६१.

२९. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , ८०.

३०. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , ८१.

३१. डॉ. सुशीला टाकभौरे - टूटता वहम , पृ सं , १०६.

३२. डॉ. सुशीला टाकभौरे - अनुभूति के घेरे , पृ सं -

३३. डॉ.सुशीला ठकभौरे - प्रतीक्षा , पृ सं , १६.

३४. डॉ.सुशीला ठकभौरे - प्रतीक्षा , पृ सं , १७.

३५. डॉ.सुशीला टाकभौरे - कैसे कहूँ , पृ सं , १८.

३६. डॉ.सुशीला टाकभौरे - घर भी तो जाना है , पृ सं - १९

३७. डॉ.सुशीला टाकभौरे - बंधी हुई राखी , पृ सं

३८. डॉ.सुशीला टाकभौरे - गलती किसकी है , पृ सं , २१.

३९. डॉ.सुशीला टाकभौरे - सही निर्णय , पृ सं.

४०. सुरेशपाल चौहान - हिंदी के दलित कथाकारों के प्रकाशित पहली कहानी , पृ सं , ११७.

४१. सुरेशपाल चौहान - हिंदी के दलित कथाकारों के प्रकाशित पहली कहानी , पृ सं - ११८

४२. जयप्रकाश कर्दम - मोहरे , पृ सं , २०३.

४३. जयप्रकाश कर्दम -मोहरे , पृ सं , २०९.

४४. जयप्रकाश कर्दम - मोहरे , पृ सं , ११६.

४५. हाशिए से बाहर - रजत रानी मीनू संपादक , पृ सं , १०५.

४६. हाशिए से बाहर - रजत रानी मीनू संपादक , पृ सं , १०८.

४७. डॉ. तेजसिंह - आज का दलित साहित्य , पृ सं , ९.

४८. डॉ. तेजसिंह - आज का दलित साहित्य , पृ सं , ९.

# चतुर्थ अध्याय

# हिंदी दलित कहानियों में अभिव्यक्त दलित विमर्श

प्रस्तावना :

४.१ जातिभेद के प्रति विद्रोह की भावना

४.२ शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता

४.३ शिक्षा के क्षेत्र में शोषण

४.४ आत्मविश्वास की कमी

४.५ आक्रोश का चित्रण

४.६ धार्मिक आडम्बरों में विश्वास

४.७ छुआ-छूत की समस्या

४.८ नई पीढ़ी में उभरते विद्रोह का चित्रण

४.९ आर्थिक विपन्नता का चित्रण

४.१०.१ स्वाभिमानी स्त्री

४.१०.२ सुशिक्षित नारी

४.१०.३ शोषित नारी

## प्रस्तावना

समकालीन साहित्यिक विमर्श का आधार सिर्फ़ तीन ही आधारस्तम्भों पर टिका हुआ नज़र आता है-दलित विमर्श, नारी विमर्श तथा विस्थापित विमर्श। १९६५ के आसपास मराठी भाषा से आरम्भ होने वाला दलित विमर्श १९८५ तक हिंदी एवं साहित्य जगत की अन्य अनेक भाषाओँ में इस प्रकार प्रवेश कर गया कि इन विमर्शों के बिना आधुनिक आलोचना साहित्य अधूरा सा लगता है तथा अब धीरे-धीरे यह इतना विस्तृत होता जा रहा है कि वह विमर्श न रह कर चेतना के रूप में दिखाई देता है। कहानी एक ऐसे माध्यम है चेतना को जगाने के लिए सशक्त माध्यम माने जाते हैं।

आज के समय में दलित विमर्श अपनी कलम की बेबाकी दिखा रहा है। अलग-अलग भाषाओं तथा साहित्यिक विधाओं में दलितों की स्थिति का चित्रण हमें देखने को मिलता है। दलित कहानिओं में वैचारिक क्रांति तो हमें दिखाई दे रही है,

लेकिन प्रस्तुत समय में भी इन हरिजनों के लिए केवल सिर्फ़ कर्तव्य है, उनका अधिकार उनके हाथों में नहीं है। मानों दलितों की ज़िंदगी, और इनका रहन-सहन के निर्णय भी सवर्णों के हाथों में है। दलितों को पहले से ही अपना कुछ भी अस्तित्व नहीं है। ब्राह्मण और पूंजीवादी समाज-व्यवस्था ने तो इन प्रश्नों को और गहरा बना दिया है। दलित आर्थिक रूप से तो पराजित हैं ही, साथ-ही-साथ मानसिक रूप से भी ग़ुलामी झेल रहे हैं।

प्रस्तुत दौर हम देख सकते हैं कि दलित कहानी और कहानीकारों में काफी बदलाव आया है। आज भी नारी शोषण का शिकार तो जरी ही है, लेकिन अब उसने वक्त के परिवर्तन हुए स्वरूप के साथ विरोध करने की हिम्मत भी जुटा ली है। अपने पर हो रहे बलात्कार तथा अत्याचारों से वे भली-भाँति परिचित हैं और अवसर पाकर उसका विद्रोह करने की शक्ति भी है। दलितों द्वारा लिखित कहानी के नारी पात्र अब अपने को आज़ाद करनी चाहती हैं तथा उसके लिए इनमें साहस भी है, आत्म-विश्वास भी है और परिस्थितियों से जूझने की हिम्मत भी हैं। इस प्रकार दलित कहानी साहित्य उत्तरोत्तर अधिक समृध्द होता जा रहा है। भारतीय दलित जीवन की विभीषिकाएँ जहाँ दलित कहानियों को जीवन से जोड़ते हैं, और ये कहानियाँ मानवीय सरोकारों को प्रतिबध्दता के साथ उजागर भी करती हैं।

## ४.१ जातिभेद के प्रति विद्रोह की भावना

वेदकाल से लेकर आज तक जातिप्रथा की व्यवस्था चलते आ रही है। आज विभिन्न क्षेत्रों में याने साहित्यिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, वित्तीय आदि क्षेत्र में बदलाव प्रगति हो रहे हैं। लेकिन जाति व्यवस्था के अतंर्गत उतनी मात्रा में बदलाव नहीं आया है। आदमी किसी जाति में ही जन्म लेता है, जीवनयापन करता है और जाति के साथ ही मरता है। लेकिन मरने के बाद भी उनकी जाति नहीं मरती। इस संदर्भ में डॉ. सुशीला टाकभौरेजी का वक्तव्य सटीक लगता है- "हिंदू समाज व्यवस्था में जाति ऐसी चीज़ है जो इन्सान के जन्म के साथ ही जुड़ जाती है और वह इन्सान के मरने के बाद भी

नहीं जाती है।"१ इस वक्तव्य से यह पता चलता है सूरज जब तक रहेगा तब तक यह जाति व्यवस्था स्थिर रहेगी। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लोगों को इस व्यवस्था के कारण से कष्ट उठाना पड़ रहा है। जातिभेद के कारण ही हिंदू, इस्लाम लोगों में झगड़ा चलता है।

उसी प्रकार सवर्णों से दलित लोगों को तरस खानी पड़ती है। ख़ास कर हिंदी दलित साहित्य में इस प्रथा के कारण होनेवाले समस्याओं का चित्रण अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। आधुनिक संदर्भ में, आदमी शिक्षा के कारण हर एक समस्या के प्रति विद्रोह की भावना अपनाता है। उसी प्रकार जाति प्रथा के प्रति भी इनकी विद्रोह की भावना तेज़ पकड़ती है।

जानेमाने दलित कहानीकार डॉ.सुशीला टाकभौरेजी के 'संघर्ष' कहानी में 'शंकर' नामक लड़के को दलित होने के कारण बहुत संघर्ष करना पड़ता है। गाँव के कुछ लोग उनको अछूत मानते हैं। वह उसे अच्छा नहीं लगता । उनके मित्रगण उसके घर के अदंर नहीं आते और उन मित्रों के घर से उसे भगाते हैं। इस अपमान के बदले में वह जानबुझकर उन लोगों के घर के अदंर प्रवेश करता है। छुआ-छूत माननेवाले लड़कों से बदला लेना चाहता है। राह में चलते समय शंकर अपने सवर्ण मित्रों को अपनी टांग अड़ाकर गिराकर मन ही मन ख़ुश हो जाता है।

इसी प्रकार डॉ.दयानंद बटोही जी के 'भूल' कहानी में भी जातिप्रथा के प्रति विद्रोह की भावना उभरकर आयी है। जैसे कि इस कहानी के नायक रमेश और नायिका पार्वती अपने प्यार के संदर्भ में आड़े आनेवाले जातिप्रथा के संदर्भ में अपनी चिंता व्यक्त करते हुए रमेश कहता है कि- "पारो वह दिन कब आयेगा जब समाज में जाति भावना का नाश हो मानवता पराकाष्ठा पर होगी, काश हम दोनों के लिए जाति न होती।"२

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के कहानी 'सपना' में भी जातिप्रथा की विरोध भावना उभरकर आयी है। सवर्ण लोग गौतम नामक दलित आदमी से पूरे मंदिर का निर्माण कार्य कर लेते हैं। जब मंदिर में बालाजी की प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा कार्यक्रम में जब गौतम अपने परिवार के साथ आकर आगे की पंगत में बैठता है तो सवर्ण उसका विरोध करते हैं। गौतम इनके क्रूरता से क्रोधित होकर पेंडाल गिराकर जाति के प्रति विद्रोह व्यक्त करता

है।

वाल्मीकिजी के 'प्रमोशन' कहानी में दिनेशपाल जाटव उर्फ़ दिग्दर्शन पहले स्वीपर बनके काम करता था। बाद में प्रमोशन होकर 'मज़दूर' बन जाता है तो सवर्ण लोग मानने को तैयार नहीं होते। इनको सभी स्वीपर के रूप में ही देखते हैं। इस व्यवहार से दिनेशपाल जाटव क्रोधित होकर इस प्रकार बताता है- "स्वीपर था, अब नहीं हूँ...अब मैं मज़दूर हूँ ...कामगार...मज़दूर-मज़दूर भाई-भाई ...इंक़लाब ज़िन्दाबाद"।३

'रिहाई' कहानी में छोटे छुटकू के माँ-बाप को गोदाम के मालिक लाला गोदाम के अदंर काम करने के लिए ग़ुलाम के रूप में रख लेता है। जब इन दोनों का देहांत हो जाता है तो इनका बेटा छुटकू इसका बदला लेना चाहता है। वह एक दिन गोदाम के मालिक के कार का पीछा करते गोदाम तक पहुँचता है। गोदाम में प्रवेश करके पूरे गोदाम को आग लगा देता है। 'कूड़ाघर' कहानी में अजबसिंह को एस.सी होने के नाते मकान मालिक घर से निकाल देता है- "मकान ख़ाली कर दो....तुम लोगों ने मकान किराए पर लेते समय यह नहीं बताया था कि तुम एस.सी हो।"४

शिक्षित सवर्णों के इस कथन से अजबसिंह का ख़ून उबल आया था। उसने कहा- "बताया नहीं...मतलब....उस समय तो बहुत प्रगतिशील बन रहे थे...अरे तुमने पूछा होता तो हम बताते...यह तो कोई बात नहीं हुई।"५ आगे पत्नी से कहता है- "इनसे जितना डरकर बात करेंगे ये हमें दबाने की कोशिश करेंगे। तुम इनकी फ़ितरत नहीं जानती। जात-पाँत के सवाल पर ये सब इकट्ठे हो जाएँगे, चाहे आपस में जितना एक-दूसरे के ख़िलाफ़ लड़े।"६ अजबसिंह के शब्दों में पूरे सवर्ण जाति के प्रति विद्रोही भावना स्पष्ट होता है।

'शवयात्रा' कहानी में सुरजा के द्वारा पक्का मकान बनाना गाँव के प्रधान जी बलरामसिंह को अच्छा नहीं लगता। उनका कहना था कि- "अटीं में चार पैसे आ गए तो अपनी औक़ात भूल जाता है। बल्हारों को यहाँ इसीलिए नहीं बसाया था कि हमारी छाती पर हवेली खड़ी करेंगे...वह ज़मीन जिस पर तुम रहते हो, हमारे बाप-दादाओं की है। जिस हाल में हो...रहते हो...किसी को एतराज़ नहीं होगा। सिर उठा के खड़ा होने की कोशिश करोगे तो गाँव से बाहर कर देंगे।"७ बलराम सिंह का एक-एक शब्द तीर की तरह

सुरजा पर लगा था।

सवर्णों की इस अमानुषीय व्यवहार पर सुरजा को ग़ुस्सा आया। उसने अपने बेटे से कहा- "तू सच कहता था कल्लू...यो गाँव रहणे लायक ना है।" आगे उसमें आत्मविश्वास जागा, "ना बेटे, मकान तो ईब बणके रहवेगा...जान दे दूँगा, पर यों गाँव छोड़के न जाऊँगा।"८ दलित तो उसकी वेदना, पीड़ा और उसके साथ किये गये अमानुषीय बर्बर व्यवहार के प्रति सदियों से संवेदनशील रहा। लेकिन अब उसमें इसके विरूद्ध लड़ने की शक्ति आ गई है।

'प्रमोशन' कहानी में जब सुरेश मज़दूर होने पर भी पत्नी को डर लगता है। उसके शब्दों से यह स्पष्ट है- "अजी, तुम भी किस चक्कर में पड़ गए हो अपनी डयूटी करो, घर वापस आ जाओ...कुछ ऊँच-नीच हो गया तो क्या करेंगे....?९

सुरेश में गहरा आत्मविश्वास था। उसने शांति को डाँट दिया- "तू हमेशा रहेगी डरपोक ही...मज़दूर बने हैं तो मज़दूरों का दर्द भी तो जानना पड़ेगा...कल तक मैं एक स्वीपर था...जिसके दर्द का किसी को ख्याल भी नहीं था...न वे अपने दर्द को ठीक से जानते हैं...इसीलिए वे अपना कोई संगठन भी ना बना सके हैं...।"१० सुरेश तो दलितों का दु:ख-दर्द समझता है और मज़दूरों के साथ यूनियन में शामिल होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहता है।

ग्रामीण अथवा क़सबाई अशिक्षित दलितों के जीवन की अपेक्षा शिक्षित दलितों के प्रति सवर्णों का प्रत्यक्ष छुआ-छूत या शारीरिक शोषण कम हैं। अप्रत्यक्ष रूप से उनका शोषण किया जाता है।

'दिनेशपाल जाटव उर्फ़ दिग्दर्शन' में दिनेशपाल को दलित होने के कारण अख़बार के कार्यालय से अपमानित होकर निकलना पड़ा। "अब पत्रिकाओं में भी आरक्षण माँगनेवाले आने लगे...अब भंगी-चमार भी संपादक बनेंगे..."११ एक-एक शब्द सुनकर उसके मन में विद्रोह भावना लावे की तरह फूटने लगा। लेकिन वह कुछ नहीं कह पाया। उसका विद्रोह आँखों से फूट पड़ा।

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'बैल की खाल' कहानी में आर्थिक विपन्नता का चित्रण मिलता है। काले और भूरे ग़रीब दलित थे। शराब के कारण वे मृत बैलों की खाल निकालकर बेचना, उसी पैसे से जीविका चलाना उनका दैनिक कार्य था। एक दिन अचानक पंडित बिरिजू मोहन का बैल रास्ते में मर जाता है। मृत बैल को निकाल ने के लिए इन दोनों को बुला भेजने पर भी नहीं मिलते हैं तो पंडित को ग़ुस्सा आ जाता है। जब पता चलते ही काले और भूरे दोनों रस्सी लिए आते हैं तो पंडित उन दोनों को डाँटते हुए- "कहाँ गए थे भोसड़ी के...तड़के से ढूंढ़-ढूंढ़ के गोड्डे टूट गए हैं। अब आ रहे हो महाराज की तरियो...इस बैल को कौन उठायेगा तुम्हारा बाप..."१२ गालियाँ पड़ने पर भी दोनों बिना कुछ कहे अपने काम में व्यस्त हो जाते हैं। बैल को वहाँ से हटाते हैं।

कँवल अपने दोस्त की शादी को उलझन से बचाने के लिए वहाँ से चला जाता है। "क्षण भर को कंवल पंडित के पास रूका। उसने कंधे पर लटके बैग को एक बार फिर उसने कसकर पकड़ लिया था। पंडित को दौड़ाने का विचार उसकी चेतना में उभरा। एयर्बैंक पंडित की खोपड़ी पर मरने के लिए बैग कंधे से उतारा- अरविंद की छलछलाई आँख सामने आ गई। हाथ वहाँ रूक गए थे।"१३ शिक्षित वर्ग भेदभाव को भुलाना चाहता है। इसका उदाहरण है अरविंद, कंवल और विष्णुदत्त नैथानी। लेकिन परंपरागत विचारों को पकड़कर रहनेवाले पंडितजी जैसे ब्राह्मण भेदभाव को भूलने नहीं देते। प्रत्येक क्षेत्र में प्रगतिशील विचारधारा से आगे बढनेवाला भारतीय सिर्फ़ जातिगत रूढियों में बदलाव नहीं ला पाया। जाति व्यवस्था के दासत्व से मुक्ति के लिए दलितों को संगठित होकर लड़ना होगा।

वह अब पहले की दलित नारी नहीं रही। उसमें भी विद्रोह की शक्ति आ गयी है। वह हार को जीत में बदलना चाहती है। बिरमा ने सभी को संबोधित करते हुए कहा- "इस हार पर मुँह क्यों लटका रहे हो यह अतं न है...तुम लोगों नें मेरे विश्वास को जगाया है...इसे मरने मत देणा।"१४ वह आगे संघर्षरत रहना चाहती है। सभी को अपने शब्दों से जागृत करती है। युवा पीढ़ी में संघर्ष के लिए चेतना जागृत कर बिरमा न्याय का रास्ता बनाती है।

दलित ही नहीं सवर्ण भी, जाति व्यवस्था के बंधनों को तोड़ सकता है। 'ब्रम्हास्त्र'

कहानी में अपने पिता और पंडित द्वारा मित्र को अपमानित करने पर अरविंद कहता है- "कंवल मेरा सबसे अच्छा दोस्त है.. हमारे बीच जात-पाँत कभी नही आयी । मैं उसे इस तरह घर बुलाकर बेइज्ज़त नहीं कर सकता।"१५ वह जाति के भेद-भाव को मिटाना चाहता है। अत: कहा जा सकता है कि वर्ण व्यवस्था की दिवार अब टूटने के कगार पर है।

'रिहाई' कहानी में छोटा छुटकू अपने माँ-बाप के मरने से उस पर कोई असर नहीं हुआ। यह कोठरी की ओर दौड़ा। कोठरी के आले में एक माचिस रखी थी। उसी पर अचानक उसकी नज़र पड़ी उसने लपककर माचिस उठाई। दौड़ते हुए गोदाम में घुसा। माचिस की तीली जलाकर बोरे में लगा दी। देखते ही देखते बोरा सुलग उठा। बोरे को सुलगते देख छुटकू को लगा जैसे उसने दुश्मन को पहचान लिया है।"१६ छुटकू जैसे छोटे लड़के में भी जातीयता ने रोष जगाया है। वह भी इससे मुक्ति चाहता है। "अनजान और अजनबी सड़क पर दौड़ते हुए छुटकू को लग रहा था जैसे वह गोदाम की चार दिवारी से हमेशा के लिए मुक्त हो गया है।"१७ भारतीय समाज व्यवस्था में परिवर्तन आरंभ हो चुका है। उच्चवर्ग ने भी इससे सहयोग प्रदान किया है जो मनुष्यता के उभरने का संकेत है।

'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ' कहानी में अमित से शादी करने से रोकने पर सुनिता कहती है- "पापा...आप बने रहिए श्रेष्ठ..ब्राह्मण.. मिरासी से ऊँचे। लेकिन मैंने कभी भी अपने आपको ब्राह्मण नहीं माना...यह सच्चाई है। न मैंने 'शर्मा' होने की आड़ में कभी ब्राह्मण बनने की कोशिश की। मेरे लिए ब्राह्मण होना ही इसांन की श्रेष्ठता का प्रतीक नहीं है। यह एक भ्रम है जिसमें सभी ऊँच-नीच का खेल खेल रहे हैं। आप जितना मातम मनाएँ.. मैं शादी अमित से ही करूँगी। उसके पुरखों का मिरासी होना मेरे लिए मायने नहीं रखताङ्गकहकर वह बाहर की ओर लपकी।"१८ यहाँ सुनीता नयी पीढ़ी का प्रतीक है। जाति व्यवस्था के बंधनों से मुक्ति के लिए वह कोशिश करती है। उसके शब्दों में जाति व्यवस्था के हीन भावना पर आक्रोश है। बंधनों से मुक्ति का मार्ग नई पीढ़ी के हाथ में है।

## ४.२ शिक्षा के क्षेत्र में शोषण :

किसी समाज की प्रगतिशीलता वहाँ की शिक्षा पर आधृत होती है। सामाजिक प्रक्रिया में शिक्षा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। समाज में जिस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होगी उसी के अनुरूप समाज का निर्माण भी होगा। शताब्दियों से दलितों के

पिछड़ेपन का कारण उनका अशिक्षित होना ही है। आज दलितों में शिक्षितों की कमी है। शिक्षा के अभाव के कारण वे न कभी अपने अधिकारों को समझ सकें, न उनकी प्राप्ति के लिए आवाज़ उठा सकें। शोषण का आधार क्या है? ये जाने बिना संघर्ष नहीं किया जा सकता। यह ज्ञान शिक्षा से ही प्राप्त हो सकता है।

'सुरंग' कहानी में कहानीकार डॉ.दयानंद बटोही ने अपने जीवन में घटित घटना का चित्रण किया हैं। बटोही एस.सी होने के कारण सवर्ण लोग उसे साहित्य में पीएच.डी रेजिस्ट्रेशन करने नहीं देते। बटोही से कहते हैं- "क्योंकि आप सेकेंड क्लास एम.ए हैं। मार्क्स कम हैं रिसर्च नहीं कर सकते।"२० मार्क्स कम होने का कारण बताकर पीएच.डी करने की उनकी इच्छा का गला घोंट देते हैं।

'बैल की खाल' कहानी में अशिक्षित भूरे को ग़रीबी से व्यक्त जीवन अच्छा नहीं लगता। वह बैठे-बैठे अपने छुटकू के शिक्षा के बारे में सोचता हुआ अपने अतीत को याद करता है जैसे- "न जाने कितनी बार स्कूल के पास खड़े होकर उसने छोटे बच्चों को पहाड़े रटते देखा था। जब वे एक सुर में बोलते थे तो उसे बहुत अच्छा लगता था। वह सोचता था कि किसी दिन उसका छुटकू भी इसी तरह बच्चों के बीच खड़ा होकर पहाड़े रटेगा।"२१

भूरे अपने बेटे को स्कूल भेजके उसे अच्छी शिक्षा दिलाने और अपने बेटे को बड़े-बड़े कारख़ाने में नौकरी करते हुए देखने की इच्छा से छुटकू को स्कूल में भर्ति करने का निर्णय लेता है। लेकिन पैसों के अभाव में नहीं कर पाता है।

'घुसपैठिये' कहानी में भी शिक्षा के क्षेत्र में शोषण का चित्रण है। मेडिकल कालेज में शिक्षा प्राप्त करना दलित छात्रों के लिए कठिन है-"मेडिकल कालेज की जो हालत हैं उसमें हमारे लिए पढ़ाई जारी रखना दिन-प्रतिदिन कठिन हो रहा है। ये साल हमने जिन यातनाओं के साथ गुज़ारें हैं हम ही जानते हैं। कई बार तो लगता था पढ़ाई छोड़कर वापस लौट जाएँ लेकिन माँ-बाप की उम्मीदें, रास्ता रोककर मजबूर कर देती हैं। उन सब यातनाओं के साथ पढ़ाई जारी रखना बहुत तकलीफ़ देता है..एक तो मैंने आत्महत्या तक कर लेने का निश्चय कर लिया था।"२२

दलित छात्र अमरदीप के इस कथन में निराशा और हताशा की भावना व्यक्त है।

उसके अतंस में गूँजती चित्कार साफ़-साफ़ सुनाई पड़ रही थी।

मेडिकल कालेज में प्रवक्ताओं में भी दलित छात्रों के प्रति भेदभाव करना, सवर्ण छात्रों को आतंरिक मौल्यमापन में ज़्यादा से ज़्यादा अकं देना और अछूतों को कम अकं देना आदि के बारे में नितिन मेश्राम का कहना है- "इतना ही नहीं प्रेक्टिकल की परिक्षाओं में भी भेदभाव बढता जाता है। न क्लास अटेंड करता है न प्रेक्टिकल। फिर भी त्रिवेदी सर उसे ही सबसे ज़्यादा अकं देते हैं। अटेंडेन्स की भी समस्या नहीं होगी।"२३

इस प्रकार घुसपैठिये कहानी में छात्रों में होनेवाले शोषण का चित्रण किया गया है।

## ४.३ शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता :

किसी भी समाज की प्रगतिशीलता वहाँ की शिक्षा पर निर्भर होती है। सामाजिक प्रक्रिया में शिक्षा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। समाज में जिस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होगी उसी प्रकार के समाज का निर्माण भी होगा। सदियों से दलितों के पिछड़ेपन का कारण उनका अशिक्षित होना है। आज भी दलितों के बीच में शिक्षा की कमी है। शिक्षा के अभाव के कारण वे न कभी अपने अधिकारों को समझ सकें; न उनकी प्राप्ति के लिए आवाज़ उठा सकें। शोषण का आधार क्या है? यह जाने बिना संघर्ष नहीं किया जा सकता। यह ज्ञान शिक्षा से ही प्राप्त हो सकता है।

'नई राह की खोज' कहानी में रामचंद्र अनपढ़ है। वह अपने बेटे लालचंद को अग्रेंजी कॉनवेंट स्कूल में भेजता है। मगर घर में सभी अनपढ़ होने के कारण उसके आगे की पढ़ाई नहीं हो पाती है। परिणामस्वरूप उसे पाँचवीं कक्षा से फिर कारपोरेशन की हिंदी प्राइमरी स्कूल में दाखिला किया जाता है। उसे हिंदी अच्छी तरह से न आने के कारण यह स्कूल से भागने लगता है। अत: वह मैट्रिक भी नहीं कर पाता। घर में सभी यह कहते हैं- "अरे आगे चलकर तो बाप का ही काम करना है क्या ज़रूरत है। अग्रेंजी पढ़ाई-लिखाई की। साहब बाबु की नौकरी हम लोग के नसीब में कहाँ होती है?"१९

दलित समाज के लोगों को यह जानना ज़रूरी है कि जीवन की लड़ाई को लड़ने के लिए शिक्षा ही सबसे ज़्यादा मारक और शक्तिशाली अस्त्र है। ये लोग अपने बच्चों के बारे में

गंभीरता से सोचते नहीं हैं। अत: बच्चे होशियार और बुद्धिमान होकर भी कुछ नहीं कर पाते। घर का वातावरण और अर्थाभाव उनकी पढ़ाई अधूरी रह जाने का और एक कारण है। अत: उनमें यह संदेश देना ज़रूरी है कि शिक्षा के माध्यम से ही अन्याय और असमानता के ख़िलाफ़ संघर्ष कर सकते हैं।

## ४.४ आत्मविश्वास की कमी :

आत्मविश्वास की कमी दलित समाज के लोगों के मन में घर कर गई है। वे अपने आपको हमेशा निम्न और हीन मानते हैं। उनके इन विचारों में परिवर्तन लाना तथा उनमें आत्मविश्वास जगाना ज़रूरी है।

'झरोखे' कहानी में ऐसा कहा है कि घर के बड़े लोग अपने बच्चों को बचपन से यह सिखाते हैं कि "हम जाति में छोटे हैं, बड़े लोगों के घर के भीतर नहीं जा सकते।"२४ ऐसे विचार भरने से बच्चों के मन में संकोच का भाव पैदा होता है। ऐसे विचार मन में जगाने के बाद व्यक्ति का संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता। इससे उनमें हमेशा संकोच, शर्म, पीछे रहने की भावना, जातिभेद का दु:ख अपमान होने का भय आदि बना रहता है। "जो सर्वगुण संपन्न होने के बाद भी उसमें पूर्ण आत्मविश्वास नहीं जगाने देता है। साथ ही अन्याय का सामना और डटकर खड़े रहने की भावना नहीं पैदा होती है"२५

दलित समाज के लोगों को यह समझने की कोशिश करनी चाहिए कि सम्मान और अपमान के भेद को समझे और सही रूप में सम्मान का हक़दार बने। अत: इन लोगों को अपने बलबूतें पर विश्वास करके स्व उद्धार कर लेना आवश्यक है।

'बदला' कहानी के कल्लू अपने सहपाठी सवर्ण बच्चों से झगड़ा करता है तो उसका नाम स्कूल से निकाला जाता है। छौआ माँ और उसके माता-पिता मास्टर से प्रार्थना करते हैं। ऐसे संदर्भ में कल्लू में संकोच की भावना उत्पन्न होती है।

'सिलिया' कहानी में भी सार्वजनिक कुएँ के पानी पीने के कारण मालती को उसकी माता बहुत डाँटती है। सवर्ण लोग मालती पर यह आरोप लगाते हैं कि उसने रस्सी,

बाल्टी और कुएँ को छू कर अपवित्र कर दिया है। उसकी माँ, मालती को बहुत मारती है। सिलिया यह सब देखती है। परंतु संकोच के कारण वह कुछ भी बोल नहीं पाती है।

## ४.५ आक्रोश का चित्रण :

हर एक व्यक्ति किसी न किसी वक़्त बेबसी और लाचारी से अपना आक्रोश व्यक्त करता है। उसके अदंर की पीड़ा बाहर प्रतिक्रिया के रूप में प्रकट होती है।

'सिलिया' कहानी में आक्रोश का सुंदर चित्रण हुआ है। युवा नेता सेठ जी विज्ञापन द्वारा शूद्र वर्ण की लड़की से विवाह करने का विचार प्रकट करता है तो सिलिया सेठ जी के ढोंग पर अपना आक्रोश व्यक्त करती है। और सोचती है कि- "हम क्या इतने लाचार हैं? आत्मसम्मान रहित हैं? हमारा अपना भी तो कुछ अहंभाव है, उन्हें हमारी ज़रूरत है, हमको उनकी ज़रूरत नहीं, हम उनके भरोसे क्यों रहेड्गअपना सम्मान हम ख़ुद बढ़ाएँगे।"२६ यहाँ सिलिया सेठ से शादी करके दया का पात्र नहीं बनना चाहती। सिलिया अपना सम्मान और गौरव को बनाए रखना वह आवश्यक मानती है।

'संघर्ष' कहानी में शंकर को सहपाठी सवर्ण मित्र, मिलकर पीटते हैं। अवसर मिलने पर वह उससे बदला लेता है। शंकर के मन में आक्रोश उभरकर आता है तो शंकर चाहने लगता है कि- "उसके पास भी अमोघ शक्तियाँ हो जिससे वह अपनी दुश्मनों को आग में जलाकर भस्म कर दें, आँधी, तूफ़ान द्वारा उन्हें आसमान में तिनकों की तरह उड़ा दे, प्रलय की बाढ़ में बहाकर मानव सभ्यता से दूर फेंक दे, उन सबको रस तल में पहुँचा दें।"२७ 'टिल्लू का पोता' कहानी में बूढ़े किसान हरिसिंह को पता चलता है कि भंगिया -चमार जाति के हैं तो वह कुएँ के पानी खींचने नहीं देता। बदले में उन्हें जाति के नाम पर कुछ बोलने लगता है। उसे सुनकर कमला का सुर्ख़ चेहरा और आँखें अगांरों सी दहकने लगते हैं। कमला आक्रोश के साथ बच्चों को बाज़ूओं में पकड़ कर खींचते हुए आक्रोश में कहती है- चलों...ये पानी नहीं ज़हर है। अपने घर जाकर पीयेंगे...नहीं चाहिए आपका मीठा पानी..।"२८

कमला का आक्रोश देखकर किसान हरिसिंह सहम जाता है। सोचने लगता है कि भंगिन इस तरह उसे बेइज्ज़त करती है।

'साज़िश' कहानी में नत्थू एक अछूत लड़का है। जब बैंक मैनेजर इसे पिगरी लोन देने तैयार हो जाता है नत्यू घर आकर सारी बातें अपनी पत्नी शांता से बताता है । शांता को मैनेजर की साज़िश मालूम हो जाती है। वह दूसरे दिन कुछ अन्य प्रतिनिधियों सहित मैनेजर से मिलकर लोन के बारे में पूछती है तो मैनेजर की बात सुनकर आक्रोश में बोलने लगती है। "बस कीजिए मैनेजर साहब। अपनी भलाई की बात अब हम ख़ुद सोच लेंगे। आप कष्ट मत कीजिए सदियों से आप लोग सोचते रहे हैं हमारे लिए। अब आप आराम कीजिए। अपना नफ़ा नुकसान हम ख़ुद समझेंगे। ग़लत करके ही लोग सीखते हैं। हमें गुमराह मत कीजिए। आप अपने बेटे को पिगरी का लोन देकर प्रशिक्षित करें तो अच्छा रहेगा। पिछले हफ़्ते आपने क्या कहा था और अभी कैसे बात कर रहे हैं गिरगिट की तरह रंग बदलना तो कोई आप लोगों से सीखे।"२९यहाँ शांता, मैनेजर को बताना चाहती है कि पिछड़े लोगों को इस प्रकार की साज़िश में फँसाने का कुविचार छोड़ दें।

'ख़ानाबदोश' कहानी में जब सुबेसिंह की बुरी नज़र सुखिया की पत्नी मानो पर पड़ती है। एक दिन सुबह आते ही भट्ठी की मुंशी से दफ्तर बुला भेजता है तो उसी भट्ठी में काम करनेवाला जसदेव सुकिया के आक्रोश को देखकर वह ख़ुद जाता है। "जी जो भी काम हो बताईए...मैं कर दूँगा..."३० ऐसे नम्र स्वर में बोलते ही सुबेसिंह उसे मारता है तभी भट्ठी के सभी मज़दूर आते ही सुबेसिंह वहाँ से जीप में शहर की ओर दौड़ लगाता है। ऐसे बुरी नज़र डालनेवाले के विरूद्ध आवाज़ उठाने का प्रयास किया जाता है।

'भोज के कुत्ते' कहानी में सावजी ब्राह्मभोज रखता है। उसमें ब्राह्मण खाने में व्यस्त होने के साथ कुछ-कुछ अपने झोलियों में भी भरने लगते हैं। इसे देखकर परोसनेवाले कुछ गालियाँ अप्रत्यक्ष रूप में देने लगते हैं। सावजी को भी परोसनेवाले ज्ञात कराते हैं कि ये ब्राह्मण लोगों को खिलाने से अच्छा, पेड़ पर बैठे कौए, कुत्तों को खिलाना अच्छा और पुण्य का काम होता है। इन ब्राह्मणों के नीच काम को जानते ही सावजी आक्रोश में बोलने लगता है- "चलो दीनू राजू, बारू, संता, राणा, आओ तो सब चोरों की तलाशी लो। आज इन भिखारी की सब ब्राह्मनाई भुला दो। सबको ठगानेवालों को आज ठगना सिखा दो।

ब्राह्मणों ने हमें हर दिन मूर्ख बनाकर लूटा है।"३१

'अगूंरी' कहानी में अगूंरी एक दलित स्त्री है। गाँव के मुखिया पंडित चंद्रभान की बुरी नज़र अगूंरी पर पड़ती है। पंडित और काले पहलवान दोनों मिलकर अगूंरी के पति को बाहर भेजने की साज़िश करके रातों रात अधेंरे में घर आ जाते हैं। जब पंडित प्रणय निवेदन करता है तो अगूंरी ग़ुस्से में चीख़ते हुए बोलती है- "ठहर बंज्जात, बेहया...दूसरे की बहू-बेटियों पर बुरी नज़र रखनेवाले निकल घर से बाहर। यदि तुने मुझे हाथ भी लगाया तो मैं तेरा ख़ून पी जाऊँगी।"३२ अगूंरी पूरी ताक़त से अपनी लात चंद्रभान के पेट पर दे मारती है तो वह गिर पड़ता है। तुरंत हँसिया से उसके हाथ में डाल देती है।

डॉ.सुरेश मा. मुळे जी की 'दूसरी शादी' नामक कहानी में नारायण दलित होने के कारण टेलर होने के बाद भी उसे लोग चमार का नारायण के नाम से ही जानते हैं। नारायण कहता है- "यह तो इस देश की कूट नीति है। इन नियमों को बदलने के लिए पहले हमें बदलना चाहिए, हमारी मानसिकता बदल देनी चाहिए।"३३

'गुरुदेवो भव:' कहानी में सीता के साथ काम करनेवाले गणित शिक्षक जो जाति में सवर्ण हैं। जब वह स्टाफ़ रूम में अकेली रहती है तब बह बगल की कुर्सी पर बैठकर एक एस.सी शिक्षक को सूचित करते व्यंग्य करता है। तब सीता आक्रोश व्यक्त करते हुए कहती है- "वह अगर अब्राहम लिंकन है तो तुम क्या हिटलर हो? हम जो एकता से रहते है सो सूहाता नहीं ? तुम लोग युगयुगों से दलितों में फूट डालते आये हो और आज आधुनिक युग में भी ऐसा काम करते हुए शरम नहीं आती? अच्छे शिक्षित दलितों का ही तुम लोग आज शोषण कर रहे हो तो क्या हमारे अशिक्षित और कमज़ोर मासूम दलितों को जीने देंगे? होशियार आइदां ऐसी बाते होगी तो मुहक्की खानी पड़ेगी।"

'शादी की दावत' कहानी में अछूतों का सवर्णों के अत्याचार के प्रति आक्रोश चित्रित हुआ है। जैसे दलित एक होकर भीमराव के शव संस्कार करके प्रण करते हैं कि- "सभी अछूत स्वाभिमान से जीए और आज से सवर्णों के घर का गोबर नहीं उठाए और उनके मरे हुए जानवरों को हम लोग नहीं उठाएगें चाहे मरे हुए जानवरों को वे ही खींचें ।"३४

'अगूंरी' कहानी में आक्रोश का चित्रण है। अगूंरी के रूप यौवन पर कामांध होकर गाँव के मुखिया पंडित चंद्रभान और काले पहलवान ने अगूंरी का जीना हराम कर रखा था। पंडित चंद्रभान समय-समय पर डराता, धमकाता रहता था। कई बार उसने अगूंरी से प्रणय निवेदन किया। लेकिन अगूंरी ने क़तई ध्यान नहीं दिया। काले पहलवान ने भी अपनी ताक़त का दबाव अगूंरी पर डाला। जब भी उसे एकांत में देखता उसके साथ छेड़-छाड़ करने से न चूकता। अगूंरी बहुत परेशान थी। किसी तरह अपनी इज्ज़त बचाया करती थी इन भेड़ियों से। अपने पति गेंदालाल से इन दोनों के करतूतों के बारे में बताने पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। एक दिन पंडित और काले पहलवान योजना बनाकर गोंदालाल को शहर भेजकर अगूंरी के घर आ धमके। पंडित अगूंरी की ओर बढ़ने लगा तो वह चीख़ते हुए बोली- "ठहर बंज्जात, बेहया..दूसरे की बहू बेटियों पर बुरी नज़र रखनेवाले, निकल घर से बाहर"३५ इतना कहने पर भी ग़ुस्से में अगूंरी पर झपटा तो अगूंरी पूरी ताक़त से अपनी लात चंद्रभान के पेट पर दे मारती है और चौंके में रखा हुआ हँसिया लेकर पंडित के हाथों पर वार कर देती है। लहू लुहान पंडित, काले पहलवान प्राणों की भीख माँगते वहाँ से भाग निकलते हैं।

'टिल्लू का पोता' कहानी में आक्रोश का चित्रण इस प्रकार है- हरिसिंह अपनी पत्नी कमला और बच्चों को अपने गाँव ले जाते समय बच्चे पानी पीने की इच्छा प्रकट करते हैं। हरिसिंह पास के बगीचे के अदंर बैठे कृषक से पानी माँगता है। उस किसान को जब यह लोग दलित हैं यह पता चल जाता है तब वह चिढ़ता है। चिढ़कर कमला को पानी देने आगे बढ़ता है। जब कमला किसान मुख से निकले छुआ-छूत और जातिभेद से संबंधित भाव समझती है तब ग़ुस्से में आकर अपने दोनों बच्चों के बाज़ूओं को पकड़ कर खींचकर चीख़ते हुए बोलने लगती है कि- "चलो ये पानी नहीं ज़हर है। अपने घर जाकर पीयेंगे... नहीं चाहिए आपका मीठा पानी।"३६ इस तरह कहते वे तेज़ कदमों से बगीचे से बाहर निकल आते हैं।'शादी की दावत' कहानी में अछूतों के ऊपर सवर्णों का अत्याचार, शोषणों पर आक्रोश व्यक्त होता है।

भूख से परेशान भीमराव खाने की चीज़ को ढुंढता है। इसे देखकर माली पाटिल भीमराव को मारता है। सभी दलित भीमराव के शव को रखकर आक्रोश व्यक्त करते हैं,

और निर्णय लेते हैं कि- "स्वाभिमान से जीएगें और आज से सवर्णों के घर का गोबर नहीं उठायेगें और मरे हुए जानवरों को वे ही खींचे।"३७ माली पाटील अपनी बेटी के शादी में गाँव के सभी को दावत में बुलाता है। गाँव के सभी सवर्ण लोगों को पहले भोजन देता है। दलित बच्चे भूख के मारे रोने लगते हैं।

'घुसपैठिये' कहानी में सवर्ण के मेडिकल कालेज में दलित छात्रों का शोषण लगातार करते आ रहे हैं। इसका विरोध या विद्रोह क्रोध भरी प्रतिक्रिया के रूप में मात्र शब्दों में या हाव-भाव से ही प्रकट हुआ है। मेडिकल कालेज के डीन से समस्याएँ बताने पर भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी थी। राकेश के शब्दों में भी आक्रोश की भावना सुनाई देती है। "डॉक्टर साहब आरक्षण पर हम लोग फिर कभी चर्चा कर लेंगे, अभी तो उन हालात का कोई समाधान निकालिए, जिनकी हमने चर्चा की है, दलित छात्रों का उत्पीडन रोकिए।"३८ सुभाष सोनकर की मौत की ख़बर सुनकर विचलित होकर रमेश चौधरी कहता है- "राकेश साहब, कल पोस्टमार्टम के बाद सोनकर की लाश का अतिंम संस्कार मेडिकल कालेज के मुख्य द्वार पर होगा...आप में साहस हो तो पहुँच जाना..।"३९

'प्रमोशन' कहानी में आक्रोश का चित्रण है। दलित को दलित रूप में देखना ही सवर्ण लोग पसंद करते हैं। सुरेश स्वीपर था। पदोन्नति मिलने पर वह मज़दूर तो बन गया। लेकिन फैक्टरी के सवर्णों के नज़र में वह स्वीपर ही था। मज़दूर बनने पर भी उसे वे स्वीपर समझते हैं तो वह इससे क्रोधित होकर कहता है- "स्वीपर था, अब नहीं हूँ...अब मैं मज़दूर हूँ...कामगार...मज़दूर-मज़दूर भाई-भाई...इनक़लाब ज़िंदाबाद...।"४०

## ४.६ धार्मिक आडंबरों में विश्वास :

दलित समाज के लोग, धर्म में विश्वास रखते हैं। वे अपनी उन्नति की गति और भाग्य भगवान के भरोसे छोड़ देते हैं। दलित लोगों को यह सोचना ज़रूरी है कि जब तक वे अपनी प्रगति के विषय में ख़ुद नहीं सोचेंगे तब तक कोई भी भगवान और मंदिर से लाभ नहीं होगा।

'मंदिर का लाभ' कहानी में बहुत अधिक रूपए ख़र्च करके एक राधा-कृष्ण का

मंदिर बनाया जाता है। परंतु मंदिर में मूर्ति की स्थापना करने के लिए कोई भी पुजारी नहीं आता। एक पुजारी आता है सामान्य तरीके से पूजा करके मूर्ति की स्थापना करता है। कुछ दिन लोग पूजा-पाठ करने मंदिर में आते हैं। बाद में उस मंदिर में कोई नहीं जाता। वह मंदिर केवल एक वस्तु बनकर रह जाता है। समाज के लिए उसका कोई लाभ नहीं होता है। धर्म के नाम पर आडंबर और अधीं भक्ति समाज का उद्धार नहीं कर सकती।

'व्रत और व्रती' कहानी में धर्मपाल एक अभाव ग्रस्त युवक है जो मेहनत मज़दूरी करके अपना जीवन बिताता है। वह अपने कष्टों को दूर करने के लिए जन्माष्टमी के दिन भगवान श्री कृष्ण का व्रत करता है। वह दिनभर उपवास करता है। परंतु दोपहर से उसकी तबीयत बिगड़ने लगती है। वह रात को किसी तरह से पूजा करके खाना खाता है। मगर ज़्यादा खाने से सब उगल पड़ता है। उसे रात भर ख़ाली पेट से सोना पड़ता है। अतं में वह समझ लेता है- "इस भागती मशीनी ज़िंदगी में अपने पेट की आग बुझाने का इतंज़ाम भी स्वयं ही करना है।"४१

डॉ. सुरेश मा. मुळेजी की कहानी 'दूसरी शादी' में नारायण दलितों के धार्मिक आडंबर और विविध देवी देवताओं की पूजा, अर्चना का कड़ी सक्ति से खंडन करते हुए कहता है कि- "इन छत्तीस करोड़ देवी देवताओं की पूजा करते बैठेगें तो हमारा जीवन बरबाद हो जाएगा कभी सुधार नहीं होगा।"४२

## ४.७ छुआ-छूत की समस्या :

प्राचीन काल से ही दलितों को अस्पृश्य या अछूत माना गया है। दलितों को सार्वजनिक कुएँ, तालाब से पानी लेना भी मना है, जबकि उस तालाब से जानवर तक पानी पीते थे। सवर्णों के घर के अदंर तो दूर, उनके मुहल्लों में चलने के लिए भी पाबंदी थी। भारतीय संविधान में अस्पृश्यता दूर करने का नियम बना है। लेकिन आज भी हमारे देश में छुआ-छूत की भावना क़ायम है।

सुशीलाजी 'जन्म दिन' कहानी में कहती है- "आजकल हर जघन्य बीमारी का इलाज संभव है। ऐसी बीमारी से पीड़ित या संसर्गपूर्ण रोग से पीड़ित रोगियों को भी लोग अपनों

से अलग या बस्तियों से बाहर नहीं रखते हैं। मगर अस्पृश्यता ऐसी बीमारी है जिसका अभी तक उपाय संभव नहीं हो सका है। न साधु, संतों की वाणी से, न समाज सुधारकों के प्रयत्नों से, न अग्रेंजों की मानवतावादी तर्कपूर्ण से देश की स्वतंत्रता से और न ही संविधान से।"४३ यहाँ कहानीकार अस्पृश्यता को एक जघन्य बीमारी की तरह मानती है। उनके अनुसार आज की प्रगतिशीलता ने भी इसमें कोई परिवर्तन नहीं होने दिया है।

'संघर्ष' नामक कहानी में शंकर बहुत शरारत करनेवाला लड़का है। दलित होने के नाते सब उसे अछूत मानते हैं। शंकर के कुछ सहपाठी मित्र उसके घर में नहीं आते और उनके घर से उसे डाँटकर भगाते हैं। इस अपमान के बदले में उसे लोगों को सताने में बहुत मज़ा आता है। वह ऐसा सोचता है कि- "लोग कैसे हड़बड़ी में उसे भगाते हैं, घर की एक-एक चीज़ पर पानी छिड़ककर शुद्ध करते हैं, घर में ज़मीन पर पानी डालकर घर को पवित्र करते हैं।"४५

'टूटता वहम' कहानी में भी इसका चित्रण मिलता है। इस प्रगतिशील युग में भी आज भी जनता के बीच जातिभेद और अस्पृश्यता की भावना प्रचलित है। इस कहानी की लेखिका अपनी सहेलियों को अपने घर खाना खाने बुलाती है। लेखिका अछूत होने के कारण सहयोगी प्राध्यापिकाएँ विभिन्न कारण बताकर बात टाल देती है। अनुसूचित जाति की दोनों खाना खाने आती है ।

'सिलिया' कहानी में भी यही समस्या को देख सकते हैं। इसकी नायिका मालती को बहुत प्यास लगती है। वह निर्भय होकर कुएँ से पानी निकालकर पीति है। कुएँ के पास रहनेवाली एक बकरीवाली स्त्री, मालती और उसकी माँ को बहुत डाँटती है। वह ऊँचे स्वर में चिल्लाकर सारा मुहल्ला इकट्ठा करती है- "अरी बाई, दौड़ो री...जा मोडी को समझाओ, देखो तो, मना करने के बाद भी कुएँ से पानी भर रही है...हमारी रस्सी बाल्टी ख़राब कर दई जाने..।"४६ इस प्रकार छुआ-छूत की समस्या हर कहीं देख सकते हैं यद्यपि कुछ लोग कहतें हैं कि वे जातिभेद को नहीं मानते परंतु उनका आचरण इसके विपरीत दिखाई देता है। दलितों को छुआ-छूत की इस अमिट भावना को मिटाने के लिए संघर्षशील होना ज़रूरी है।

'कच्ची दिवार' कहानी में यह समस्या है। शांतवारिक दलित या अछूत होकर भी छुआ-छूत को महत्व देता है। वह स्कूल में आयोजित भोजन पंगत से, पार्वती की बेटी को उप्पिट नहीं लेने देता। शातवारीक पार्वती की बेटी को कहने लगता है कि- "हे धेड़नी चल उठ नहीं तो लात मारकर पंगत से बाहर भेजूँगा।"४७

डॉ.सुरेशराव मुळेजी कृत 'शादी की दावत' कहानी में सवर्ण और अछूतों में स्थित जाति भेद और छुआ छूत की समस्या का सुंदर चित्रण दिया है। सवर्ण मारूति के शब्दों से पता चलता है। जैसे-मारती "अबे महर के मेरा हाथ छुआ? मुझे भ्रष्ट किया? तुझे अब नहीं छोडुंगा।"४८ धेड की औलाद मुझे छुकर भ्रष्ट करता है तुझे अच्छा सबक सिखाता हूँ तुझे लातों से खाना देता हूँ, हाथों से नहीं।"४९ कहते हुए अछूत बालक भीमराव को अमानवीय रीति से मार देता है।

'सलाम' कहानी में हरीश चूहड़ा जाति का लड़का था। कमल ब्राह्मण था। शादी की रस्म पूरी होते-होते रात के दो बज गए थे। कारणवश कमल स्कूल के बरामदे से निकलकर सुबह होते ही चाय के दुकान में आता है। उसी समय चायवाले ने कमल से पूछ कि तुम कहाँ से आए हो? तब कमल बारात के बारे में बताता है तो चायवाला कहता है- "वह बारात तो चूहड़ों के घर आयी है।"५० इसे सुनते ही चायवाला इसे चाय देने से मना करता है। इसका एकमात्र कारण गाँव के चूहड़ परिवार के सदस्यों को चाय नहीं मिलती थी । रामपाल को देखते ही चायवाला कहता है- "चूहड़ा है। ख़ुद कू बामन बतारा है जुम्मन चूहड़े का बाराती है इब तुम लोग ही फैसला करो। जो यो बामन है तो चूहड़ों की बारात में क्या मूत पीने आया है? जात छिपाके चाय माँग रहा है? मैने तो चूहड़े का बारात में क्या मूत ब साफ़ कह दी। बुद्धु की दुकान पे तो मिले गी ना चाय चूहड़ों-चमारों कू, कहीं और ढूँढ़ ले जाके।"५१ सलाम कहानी में कमल और हरीश एक साथ पढ़ाई करते समय एक बार कमल हरीश को अपने घर ले जाता है। कमल की माँ हरीश को खाने के लिए कुछ देती है। सहज ही हरीश से पूछती है तुम्हारे पापा क्या करते हैं? "जी नगरपालिका में सफ़ाई कर्मचारी है।" हरीश का जवाब सुनते ही कमला की माँ आग बबूला हो गई थी। कमल के गाल पर थप्पड़ देते हुए कहा- "पता नहीं कहाँ-कहाँ से इन

कंजड़ों को पकड़कर घर ले आता है। ख़बरदार जो आगे से किसी हरामी को दुबारा यहाँ लाया.."५२ हरिश के घर से जाने के बाद सारा घर दुबारा धोया गया और गंगाजल छिड़ककर ज़मीन पवित्र की गई।

'कहाँ जाए सतीश' कहानी में छुआ-छूत की समस्या का चित्रण है। यहाँ सतीश अपने मास्साहब रवि शर्मा की सहायता से अपनी पढ़ाई पूरी करने की इच्छा से घर छोड़कर मिसेज पंत के यहाँ रहने लगता है। वहीं पढ़ाई करता है पर घरवालों को अपनी जाति के बारे में नहीं बताता। वे भी उसकी कभी जाति नहीं पूछते। एक दिन सतीश के माँ-बाप सतीश को ढूँढ़ते हुए मिसेज पंत के घर आते हैं। वे बता देते हैं कि हम सतीश के माँ-बाप हैं, नगरपालिका में सफ़ाई कर्मचारी का काम करते हैं।

मिसेज पंत को इनके अछूत होने का पता चलते ही सतीश को घर से बाहर जाने को कहते हैं। तार पर सतीश के कपड़े सूख रहे थे । अदंर जाते समय मिसेज पंत को छू गए तब उसके शरीर में बिजली सी दौड़ गई जैसे कोई ग़लीज़ चीज़ शरीर को छू गई हो। वह ग़ुस्से में भीतर जाकर बरामदे में रखे लंबे बाँस को उठाकर तार से सतीश के कपड़े नीचे गिरा देती है। वह उसे करकट की तरह फेंक देती हैं। पति से ग़ुस्से में कहती है- "मैं कुछ नहीं जानती उससे कहो वह इसी वक़्त चला जाए...इतने दिन अपनी जात छिपाकर रहा यही क्या कम है।"५३

इस कहानी में छुआ-छूत की समस्या का चित्रण है। यहाँ कहानी का नायक दशहरे की छुट्टियाँ होने के कारण पूरे परिवार के साथ हरिद्वार में अर्द्धकुंभी मेला देखने हरिद्वार पहुँचता है। वहाँ अधिक भीड़ होने के कारण ठहरने के लिए जगह नहीं मिलती तो वह एक मंदिर के पुजारी से मिलता है। मंदिर में अछूतों को प्रवेश नहीं देते। इधर रूकने के लिए और जगह नहीं होती है तो नायक अपने जाति को छिपाने का प्रयत्न करता है। पुजारी पूछता है- "तुम किस जाति के हो?"५४ तब वह राजपूत चौहान करके बोल देता है। मंदिर में रहने के लिए उसे जगह मिल जाता है। इस प्रकार दलितों को मंदिर में प्रवेश वहाँ मिलता है।

टिल्लु का पोता' कहानी में छुआ-छूत का चित्रण है। हरिसिंह अपनी पत्नी कमला और बच्चों को लेकर अपने गाँव सोनपुर जाता है। जाते समय रास्ते में कमला और बच्चों को

प्यास लगती है। वे पानी पूछते हैं। पास के बगीचे में उन्हे एक बूढ़ा दिखता है। उससे पानी माँगने पर वह उन्हें ख़ुद कुएँ से पानी खींचकर पीने को कहता है। जब हरिसिंह कुएँ से पानी खींचने लगता है तो तब वह बूढ़ा आवाज़ देता है कि- किस गाँव और किसके घर जा रहे हो? तब उत्तर में हरिसिंह बता देता है कि हम सोनपुर के हैं और मैं टिल्लु का पोता हूँ। यह सुनते ही जल्दी से- "ठहरो पानी मैं खींचकर पिलाऊँगा"५५ कहता है।

झट से हरिसिंह के हाथों से बाल्टी छीनकर उसे रेत से माँज कर साफ़ करने लगता है। कुछ बड़बड़ाते हुए कुएँ से पानी खींच के देता है। जब कमल पानी पीने के लिए झुकी और एक क़दम आगे बढ़ी तो किसान जोर से बोला- "अरे भंगिनीया देख पीछे कु हट के पानी पी, यह शहर न है, गाँव है, मारे लट्टिया के कम्मर तोड़ दई जाएगी। साले भंगिया-चमार के सहर में जाकै नये-नये लत्ता पहन के गाँव आ जात हैं। कुछ पतौ न चलतु कि ये भंगिया-चमार के हैं कि नहीं।"५६ इस प्रकार छुआ-छूत का चित्रण देखने को मिलता है।

इस कहानी में सविता एक ब्राह्मण परिवार की पढ़ी-लिखी प्राध्यापिका होने पर भी अपने प्रेमी गोपाल की जाति का पता चलते ही उसे घृणा, तिरस्कार एवं हीनता की दृष्टि से देखती है और उससे अपना मधुर प्रेम बंधन तोड़ने का प्रयत्न करती है। क्योंकि गोपाल भंगी जाति का लड़का है। ये जानकर उसमें मनपरिवर्तन होता है। जाति का पता चलते ही उसके मन में क्रोध का ज्वालामुखी फूटने लगता है। दिखावे के लिए मुस्कुराते हुए- "गोपाल मैं तुम्हारी परीक्षा ले रही थी सच में तुम कितने ईमानदार हो? जिस घर का नमक खाते हो उस घर को कभी नहीं धोखा देते हो।"५७ इस प्रकार भंगी जाति के प्रति जो विचार व्यक्त किया है यह एक प्रकार से छुआ-छूत की समस्या है।

'घमंड जाति का' कहानी में छुआ-छूत की समस्या का चित्रण है। ठाकुर प्रतापसिंह अपने बेटे बीरू को अछूत बच्चों के साथ कंचा खेलते हुए देखकर क्रोधित होता है और वह ग़ुस्से में नीम के पेड़ के संटी तोड़कर चार-पाँच अपने बेटे बीरू को जमा देता है और किरपाल को पीटते, डाँटता है कि- "सारे भंगियों के ठाकुर के बालक के संग कंचा खेलतु ठौर मार दूँगा।"५८

ठाकुर ने एक बाल्टी पानी खींचकर और नीम की टहनी पानी में डूबों कर वीरू को छींटे देते हैं तो वीरू पूछता है क्यों मुझे पानी से भिगो रहे हो तो ठाकुर कहते हैं- "अरे चुप नालायक एक तो भंगियों के बालक के संग खेल कर अपने आप कुँ अपवित्र कर लिया और फिर पूछता है कि पानी के छींटे क्यों डारी रहे हो?।"५९

'प्रमोशन' कहानी में छुआ-छूत का चित्रण है। इस कहानी में सुरेश एक स्वीपर का काम करता था। पदोन्नति मिलने पर वह मज़दूर बन जाता है। सुरेश स्वीपर होने के कारण फैक्टरी के अन्य मज़दूर उसको मज़दूर स्वीकार नहीं करते। एक वर्कर कहता है- "साहब, आपको नहीं पता...सुरेश स्वीपर है...उसके हाथ की चीज़ कोई कैसे खा-पी सकता है?"६० इस प्रकार छुआ-छूत के कारण यहाँ तो दलितों को मनुष्य भी नहीं माना जाता है।

'मंदिर का लाभ' कहानी में एक ही भगवान को माननेवाले सवर्ण और अछूतों के बीच जातिभेद और छुआ-छूत की भावना का चित्रण है। इसमें नानी राधकृष्ण का मंदिर बनवाती है। परंतु मंदिर में भगवान की मूर्ति की स्थापना के लिए पुजारी साफ़ इनकार कर देते हैं। एक पुजारी कहता है- "शास्त्रों में कहीं लिखा है कि तुम्हारी जाति के लोग मंदिर बनवाए और भगवान की स्थापना करें, तुम लोगों ने बड़ा पाप किया है, भगवान को भी अपवित्र कर दिया है। हम ऐसे काम में तुम्हारा साथ नहीं दे सकते और फिर तुमने सोच कैसे लिया कि हम तुम्हारे घर और तुम्हारे मंदिर में आकर पूजा करेंगे? राम, राम हे भगवान बहुत पाप बढ़ गया हैं। इसी से तुम्हारी मति मारी गई। तुम्हारा तुम जानो; हमारे आने की राह मत देखो; जो दिखता है जो समझ में आता है; ख़ुद कर लो।" एक पंडित सामान्य तरीक़े से मूर्ति की स्थापना करता है और जाते समय लोटे का पानी सभी वस्तुओं पर और स्वयं पर छिड़ककर पवित्र होता है।

'टूटता वहम' कहानी में लेखिका अपनी सहेलियों को अपने घर खाने पर बुलाती है। परंतु वे विभिन्न कारण बताकर टाल देती हैं। घर में खाना खाने केवल चार सहेलियाँ आती हैं। उनमें से दो की चतुर्थी थी, खाने पर दलित समाज की सिर्फ़ दो ही थी।

'चेता का उपहार' कहानी में ठाकुर जिलेसिंह के यहाँ काम करनेवाला चेता चमार जाति का था। घर में आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण इनके घर का काम करता है। चेता युवक होने के कारण ठाकुर को इसका घर में आकर काम करते रमा से कभी बात करना शंका का कारण बनता है। इन बातों को मन में रखते चेता को लाठी लेकर ख़ूब पीटता है तो चेता बेहोश गिर जाता है।

ठाकुर कहता है- "चूहड़े-चमारों को मारने के लिए भी किसी अपराध की ज़रूरत होती है भला। इन सालों का तो काम ही है पिटाई खाना।"६१ चेता की माँ अनारो रोती हुई वहाँ आती है। बेहोश पड़े चेता को देखकर ठाकुर से कहती है- "अरे ठाकुर मेरे इस ग़रीब बच्चे ने तेरा क्या बिगाड़ दिया जो तूने इसे इतनी बुरी तरह से मारा। सारे दिन यह तेरी बेगारी करता है, उसके बाद भी यह नतीजा।"६२ आर्थिक विपन्नता के कारण दलितों को सवर्णों का शोषण, अत्याचार सहन करना अनिवार्य हो जाता है।

डॉ. दयानंद बटोही द्वारा लिखित 'भूल' कहानी में रमेश और पारो एक साथ पढ़े थे। दोनों ने एक-दूसरे से अतिंम साँस तक साथ-साथ जीने की सौगंध खायी थी। लेकिन इन दोनों के बीच समस्या जाति की थी। रमेश एक दलित और पारो ब्राह्मण लड़की थी। दोनों अकेले बैठे विचार करते हुए इस जाति व्यवस्था की ठोस निंदा करते हैं। रमेश कहता है- "पारो वह दिन कब आयेगा जब समाज में जाति भावना का नाश होकर मानवता की भावना पराकाष्टा पर होगी। काश! हम दोनों के लिए जाति न होती...।"६३ इस प्रकार सोचकर जाति के प्रति विद्रोह करते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'सपना' कहानी में समाज में अभी भी स्थित जात-पाँत, ऊँच-नीच की भावना का चित्रण है।

मंदिर निर्माण के बाद प्राण प्रतिष्ठा की तैयारियाँ पूरी हो चुकी थी। मंदिर के प्रांगण में बड़ा-सा शामियाना लगाया गया था। जिसके नीचे दरी बिछी थी। गौतम अपने परिवार को लेकर आया और शामियाना के नीचे सबसे आगे बैठने के लिए जा रहा था। क्योंकि भीड़ बढ़ जाएगी तो वहाँ से कुछ दिखाई भी नहीं देगा उतने में नारायण जी ने उन सबको पीछे बैठने के लिए कहा। नारायणजी और गौतम के बीच वाद-विवाद शुरू हो जाता है। आख़िर नारायणजी बता देता है कि- "ये गौतम..एस.सी है।" आगे कहते है-

:पूजा अनुष्ठानों में उन्हें आगे नहीं बैठाया जा सकता? यह रीत है, शास्त्रों की मान्यता है।"६४

## ४.८ नई पीढ़ी में उभरते विद्रोह का चित्रण :

दलित समाज की नई पीढ़ी रूढिवाद और परंपरावाद के प्रति विद्रोह प्रकट करते हैं। वे जानते हैं कि उच्च जाति के लोग हमारे साथ जातिभेद और अन्याय करने का कारण परंपरावाद ही है। इसीलिए परंपरावाद के विरूद्ध वे अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं।

'जन्मदिन' कहानी के मुन्ना के विचार में नई पीढ़ी के आक्रोश का स्वर दिखाई पड़ता है। अपने समाज के सफ़ाई कर्मचारियों के काम के बारे में वह बहुत चिंतित है। प्रेम राठौर के मुँह से मैलगाड़ी के बारे में सुनते ही मुन्ना इसके विरूद्ध अपना मत व्यक्त करते हुए कहता है- "साहब बनना इतना आसान नहीं है भैया। इसके लिए माँ-बाप को बहुत त्याग करना पड़ा है। तुम भी अपने पप्पु के अच्छे भविष्य के लिए इस नौकरी का त्याग कर दो। कुछ दूसरा अच्छा काम करके इज्ज़त की ज़िंदगी जीयो।"६५

वह आत्म विश्वास के साथ विद्रोह प्रकट करते हुए कहता है कि- "सब मिलकर हड़ताल कर दो। आज से कोई भी कच्ची संडासे साफ़ नहीं करेगा। सिर पर मैला कोई नहीं उठाएगा। कच्ची नालि साफ़ नहीं करेंगे। जब तुम काम पर नहीं जाओगे तब लोग अपना इतंज़ाम ख़ुद कर लेंगे।"६६

'छौआ माँ' कहानी में छौआ माँ की बेटी तुलसा अपनी माँ की ज़चकी का काम करने का विरोध करती है। नयी पीढ़ी की तरह तुलसा अपनी माँ के रूढिवादी काम से घृणा करती है। यह ज़चगी का काम छौआ माँ अपने पुश्तों पूर्वजों से मिला मानती है। इसके विरोध में तुलसा कहती है- "अपनो कैसे गाँव? गाँव का काम करने के लिए अपनों गाँव हैं और किस बात के लिए अपनो गाँव? चुपचाप सब काम करते रहो...सबसे डरते रहो...। सबका कहा बुरा-भला सुनते रहो, गाली-गलौज खाते रहो...सबका दलिहर उठाते रहो-तो अच्छा है, नहीं तो कौन पूछे अपन को? मैं नहीं करूँ गाँव का काम, न मेरे मोडा मोडी करेंगे। हमे नहीं अच्छे लगे ये सब गंदे काम..।"६७

'नई राह की खोज' कहानी में रामचंद्र अपने बेटे लालचंद को अग्रेंजी कॉनवेंट स्कूल में भेजता है। लेकिन घर के अनपढ़ वातावरण में वह आगे नहीं पढ़ सकता है। अत: उसकी पढ़ाई ख़तम हो जाती है। लालचंद अपने बेटे को ख़ूब पढ़ाता है। समाज के जागृत लोगों के साथ मिलकर वह 'जागरूक' संस्था खोलता है। लालचंद का बेटा हरिचंद नई पीढ़ी का प्रतीक बनकर समाज को नई राह की खोज का संदेश देते हुए उपदेश देता है कि समाज को उद्योग व्यवस्था की ओर प्रेरित करना आवश्यक है। इससे ही समाज को आत्मनिर्भर और समानता-सम्मान मिलेगा। उनकी राय में "तभी नई पीढ़ी के होनहार नैनिहालो का भविष्य सुंदर, सुखद और सुरक्षित रह सकेगा। मगर वह सब तभी संभव हो सकेगा जब सभी लोग इस नयी राह पर चलेंगे।"६८

नयी पीढ़ी के विद्रोह के चित्रण अनेक कहानियों में मिलते है। इस विद्रोह के माध्यम से परंपरागत सफ़ाई व्यवसाय छोड़कर अच्छे सम्मानित व्यवसाय और नौकरी आदि पाने की नयी पीढ़ी की उत्कट इच्छा है। इसमें दलितों को नयी दिशा दिखाने का रास्ता भी निहित है।

'सुरंग' कहानी में स्वयं कहानीकार को हिंदी साहित्य में पिएच.डी. करने की इच्छा होती है तो घर की गंभीर परिस्थितियों में भी वह बहुत कोशिश करते हैं। लेकिन कोशिश में कामयाब नहीं होते तो वह अपने समाज के संघ के सेक्रेटरी से बात करके उनकी मदद से विश्वविध्यालय में अपनी माँग का लेटर भीड़ के साथ जाता है। सब की आवाज़ गूँज उठती है- "हम सब मानवतावादी हैं। पुराना ढोंग नहीं चलेगा।"६९

सुरेश मा.मुळे द्वारा लिखित 'दूसरी शादी' कहानी में नारायण के विचारों से पता चलता है कि रूढिवादी समाज के प्रति विद्रोह की भावना का प्रकटीकरण होता है। "कहाँ के नियम है यह सब? कि चमार चप्पल ही बनावे, कुम्भार मटकी ही बनावे, ढोर चमड़ा ही बनावे यह नियम तो हम बना लिए हैं। मैं बारहवीं कक्षा तक पढ़ा हूँ फिर समाज में सम्मान जनक ज़िंदगी जीने की इच्छा मन में जागी-इसलिए चप्पल बनाना छोड़कर कपड़े सीना सीखा।"७०

नारायण और दाक्षायणी दोनों भारतीय समाज व्यवस्था और दलितों के प्रति समाज की प्राचीन विचारधारा से दु:खी होकर बौद्ध धर्म स्वीकार करने का निर्णय लेते हैं। जैसे-

“समाज में समानता आएगी, बुद्ध धर्म के तत्वों से यह धर्म एक मात्र वैज्ञानिक धर्म है जो विश्व को शांति दे सकता है और जातिवाद को मिटाने में सहयोग कर सकता है। मैंने तय किया है कि अगर जीवन में सम्मान मिलेगा तो बौद्ध धर्म से। इसीलिए आनेवाले अक्तूबर को नागपुर जाएगें और बौद्ध धर्म को अपनाएगें और जीवन को सफल बनाएगें।”७१

डॉ.सुरेश मुळे जी की कहानी ‘गुरूदेवो भव:’ कहानी में शिक्षक द्वारा किए गए अनुचित व्यवहार का विरोध करते हुए उसके नाज़ुक अगं पर ज़ोर का वार करते हुए चंडी का रूप धारण करते उस पर चप्पलों की वर्षा करने लगती है और कहती है- “हे सवर्णों, दलित याने पैर की धूल समझ रखा है। हम वह नस्ल नहीं हैं जो सहकर ज्योहार माई-बाप कहकर झुकनेवाले थे। अब हम वह ताक़त बन गए हैं जो सदियों से ख़ून चूसनेवाले को मिटानेवाले फ़ौलादी काल बनकर जन्म लिए हैं। संघर्ष ही हमारा जीवन है और अपमान सहना ही हमारे लिए मृत्यु है। तु तो गुरू के नाम पर कलंक है।”७२ कहकर सीता चिल्ला उठती है। इस प्रकार सीता सवर्ण शिक्षक पर अपने ग़ुस्से के साथ विद्रोह व्यक्त करती है।

‘कहाँ गया तुम्हारा स्वाभिमान’ कहानी में नई पीढ़ी के लोगों का अपने समाज के प्रति जागृति लाना और सवर्णों का समाज के महिलाओं पर होनेवाले अत्याचारों पर आक्रोश व्यक्त करते हुए रोकने के लिए प्रयास करते हैं। गुरूजी कहते हैं- “देखिए हम नाग वंश के लोग हैं। हमारी संस्कृति सम्मान योग्य थी। हम लोग बड़े मेहनती और स्वाभिमानी थे और आज भी हैं। सवर्णियों ने हमारे पूर्वजों पर हमला करके हमारे भविष्य का सर्वनाश किया और हमे ग़ुलाम बनाया है।”७३ इस प्रकार दलित युवा पीढ़ी को गुरूजी, सवर्णों के आचरणों के विरूद्ध खड़े होने के लिए कहते हैं।

दयानंद बटोही द्वारा लिखित ‘भूल’ कहानी में पंडित (गोबर) बुद्ध के ऊपर चोरी का इल्ज़ाम लगाने के लिए जो साज़िश करके गाँव भर तलाशी लेने का नाटक कर रहा था। उस समय दारोग़ा लखन सिंह से तलाशी न करने को कहने के लिए कोई तैयार नहीं होते। तब उसी गाँव के पढ़े-लिखे लोगों में से रमेश विषय मालूम होते ही दौड़ा आया। आकर दारोग़ाजी से कहा- “दारोग़ाजी यह ग़लत है कि चोरी हुई है।”७४ यह सुनकर दरोग़ा उसे नहीं मानता तब रमई बोलता है- “मतलब क्यों नहीं हम सब इस गाँव के निवासी हैं। अच्छाई बुराई में हमारा सहयोग है, हमारी सरकार है, हमारा राज्य है, हमारा गाँव

है।"७५ दोनों ने मिलकर गोबर पंडित और दारोग़ा के विरूद्ध विद्रोह की भावना अभिव्यक्त करते हैं।

'गोहत्या' कहानी में नई पीढ़ी के लोगों में उभरते विद्रोह का चित्रण मिलता है। इस कहानी में सुक्का कई सालों से मुखिया के घर का नौकर था। सुक्का घर-बाहर का पूरा काम तन्मयता से करता था। जब से उसका ब्याह हुआ तबसे उसमें बदलाव आ गया था। उसके चेहरे पर छाई ख़ामोशी, कोहरे-सी छाँट गई थी। दुलहन को ऐसे सहेजकर रखता था जैसे कोई बेशक़ीमती हीरा अचानक उसकी झोली में आ गिरा हो। उसकी दुलहन थी भी वैसी ही। सुक्का की दुलहन के रूप रंग और स्वाभिमानी स्वभाव की चर्चा मुखियाजी के कानों तक पहुँच चुकी थी। वे उसे देखने को आतुर हो उठे थे। और मुखिया सुक्का से- "सुक्का तेरी लुगाई को आए दो महिने हो गए हैं और वह भी अभी तक हवेली में नहीं आयी ।

मुखिया की बात सुनकर सुक्का काम रोककर खड़ा हो गया। शब्दों को मुँह में चबाते हुए बोला "वह हवेली नहीं आएगी।" इस बात से नाराज़ होकर मुखिया डाँटने लगा तो सुक्का कमज़ोर पड़ते साहस को समेटा और बोला "मुखियाजी काम करता हूँ तो दो मुट्ठी चावल देते हो...वह हवेली नहीं आएगी।" इस प्रकार सुक्का मुखिया के विरूद्ध बोलने का साहस करता है।

'साज़िश' कहानी में नई पीढ़ी का विद्रोह चित्रित है। इस कहानी का नायक नत्थू जो जाति से दलित है। वह ट्रान्सपोर्ट धंधे के लिए लोन की याचना करते बैंक मैनेजर रामसहाय से मिलता है। मैनेजर उससे पिगरी लोन देने के लिए तैयार हो जाता है। पर उसे ट्रान्सपोर्ट धंधों में नुकसान का डर दिखाते हैं। इस बात को नत्थू अपनी पत्नी शांता से आकर बता देता है। शांता को उस सवर्ण मैनेजर की साज़िश मालूम हो जाता है। वह सभी दलित लोगों को एकत्रित करके बैंक के सामने जमा होकर नारा लगाने शुरू करते हैं। परिस्थिति का ज्ञान होते ही मैनेजर उन लोगों को समझाने का प्रयत्न करता है। लेकिन शांता ज़ोर से कहती है- "बस कीजिए मैनेजर साहब। अपनी भलाई की बात अब हम ख़ुद सोच लेंगे। आप कष्ट मत कीजिए। सदियों से आप लोग सोचते रहे हैं हमारे लिए अब आप आराम कीजिए। अपना लाभ-नुकसान हम ख़ुद समझेंगे। हमे गुमराह मत कीजिए। आप अपने बेटे को पिगरी का लोन देकर प्रशिक्षित करें तो अच्छा रहेगा। पिछले हफ़्ते आपने क्या कहा था और अब क्या कह रहे हैं। गिरगिट की तरह रंग बदलना तो कोई आप लोगों

से सीखें।"

"आइदां फिर किसी को ग़लत पट्टी पढ़ाई तो अच्छा नहीं होगा शर्माजी। जो जैसा कर्ज़ माँगे वैसा दीजिए। आदर्श उपदेश देने का धंधा बहुत हो चुका अब यह सब बंद कीजिए। अब सुनना नहीं तो अच्छा नहीं होगा।"७६ गाँव के युवकों ने एक स्वर में कहा कि 'मैनेजर स्वीकृति दिया है कि आइदां ऐसा नहीं होगा।''परिवर्तन की बात' कहानी में नई पीढ़ी के दलित युवकों के विद्रोह का चित्रण उन्होंने सामाजिक रुढियों, जात-पात, छुआ-छूत को माननेवाले सवर्णों के विचारों को डटकर विरोध किया है।

एक गाय ने ठाकुरों के कुएँ के पास ही दम तोड़ दिया था। ठाकुरों का पूरा मौहल्ला पानी भरने के लिए तरस रहे थे। इसीलिए रघु ठाकुर अपने बेटे रामेश्वर को मरी गाय उठाने के लिए किसान को बुलावा भेजते हैं। लेकिन किसन सहज ही आने से इनकार करता है। ठाकुर से वह कहता है- "ठाकुर मैंने और मेरे मुहल्ले के सभी लोगों ने मरे जानवर उठाना बंद कर दिया है।"७७

यह मामला थाने तक पहुँचता है। थानेदार आकर किसना को थाने में बंद करने की धमकी देता है तो किसना बताता है- "क्या आप यह चाहते हैं कि हम जीवन भर गाँव के मरे जानवर ही उठाते रहें। अब समय बदल रहा है लोग अपना पुश्तैनी धंधा छोड़ कर दूसरे कार्य करने लगे हैं। हम दूसरा अन्य कार्य करके अपना पेट भर लेंगे, लेकिन मरा जानवर हम नहीं उठाएगें।"७८ इस प्रकार नई पीढ़ी के दलित युवा पुरानी रूढिवादिता का विद्रोह करते हैं।

'मुंबई कांड' कहानी में जाति व्यवस्था से उत्पन्न विद्रोह स्पष्ट है। जब से प्रदेश में अपनी जाति का मुख्यमंत्री बना है तब से सुमेर को दफ्तर में अनेक तरह की यातनाएँ सहनी पड़ती है। गुप्ता से दफ्तर में उसकी झपट हुई थी। "क्यों सुमेर आजकल तो धड़ाधड़ शहरों के नाम बदले जा रहे हैं। अपने शहर का नाम कब बदलवा रहे हो?"७९ गुप्ता के लहजे में छिपे व्यंग्य सुनते ही सुमेर ने उसका ठीक जवाब दिया- "गुप्ता, ज़बान मेरे मुँह में भी है। बेहतर यही है उसे खुलने के लिए उकसाओं मत।"८० सुमेर के वाक्य में छिपे आक्रोश से दफ्तर के सभी ख़ामोश रह गये। और एक घटना से सुमेर की प्रतिक्रिया इस

प्रकार है- "डॉ. अबेंडकर की मूर्ति का बंबई में अपमान हुआ है, तुम लोग क्या कर रहे हो? दलितों पर पुलिस ने गोलियाँ बरसाई। लोग मारे गए, घायल हुए...कुछ न कुछ तो आप लोगों को भी करना चाहिए..."८१ वह दूसरों का भी अपमान कर बदला देने के लिए उकसाता है। आगे कहता है- "देख लेना यहाँ भी गोलियाँ चलेंगी एक दिन। तब तुम्हें पता चलेगा।"८२ उसकी नसे फूल गई थी। चेहरे पर आक्रोश उबलने लगा था।

## ४.९ स्त्री शोषण की समस्या :

दलित कहानियों में नारी शोषण और कुछ ऐसे कहानियाँ हैं, जिसमें नारी मन का अंर्तद्वंद्व चित्रित हुआ है। नारी के पास अधिकार नहीं केवल कर्तव्य है,जिन्हें पूरा करते-करते वह इतनी थक जाती है कि जीवन की आख़िरी घड़ी तक वह अपने विषय में कुछ सोच नहीं पाती है। उसके अतिंम समय में उसके पास एक टीस, वेदना और मौन चीत्कार के अलावा कुछ भी नहीं बचता है। इस प्रकार नारी विवशता के साथ उसका आक्रोश का चीत्कार भी कहीं मिलता है।

'दमदार' कहानी में एक पागल और प्रेमलता को कमज़ोर मानकर जग्गु पहलवान बहुत पीटता है। लेकिन वहाँ कोई इसके विरूद्ध आवाज़ नहीं उठाते हैं। प्रेमलता के माता-पिता की प्रतिक्रिया इस प्रकार हो गयी कि- "लड़की के माँ-बाप रिश्तेदारों के घर नहीं गये शादी-ब्याह, जन्मदिन जैसे सामाजिक समारोहों में नहीं गये। उन्हें इस बात की लज्जा लगती थी कि उनकी बेटी के कारण गाँव में उनकी इज्ज़त चली गई है। मगर वे जग्गु पहलवान को कुछ नहीं कह सके।"८३ 'मेरा समाज' कहानी में भी नारी शोषण का चित्रण देख सकते हैं। उस समाज में लड़कियों की अवस्था ऐसी है कि आर्थिक अभाव के कारण वे आगे नहीं पढ़ सकती है।

वर्षों से नारी शोषण को एक गंभीर समस्या के रूप में उठाया जा रहा है। लेकिन दलित स्त्रियों के साथ होनेवाले अत्याचार के प्रति समाज के उच्चवर्ग की कोई प्रतिक्रिया नहीं है। क्योंकि यह बलात्कार करनेवाला उच्चवर्ग का ही आदमी है। पुरूष द्वारा स्त्री के साथ बलात्कार अथवा यौन शोषण का इतिहास शायद उतना ही पुराना है जितना

मानव सृष्टि के विकास का इतिहास है। बलात्कार की अधिकांश घटनाएँ ग़रीब मज़दूर दलित आदिवासी स्त्रियों के साथ होती है, जिनमें न कोई चटक-मटक होती है, न बनावटी श्रृंगार। पर वही अत्याचार से ग्रस्त है। इसका कारण है कि सवर्ण समाज दलितों को अपना ग़ुलाम समझता है। अत: दलित आदिवासी स्त्रियों के साथ सहवास करना अपना अधिकार मानता रहा है। दलित स्त्रियों के साथ सवर्णों द्वारा बलात्कार का कारण यह भी है कि सवर्ण सामंत अपनी जातीय श्रेष्ठता और उच्चता के दंभ में चूर होते हैं और दलित स्त्रियों के साथ उनके बलात्कार का उद्देश्य केवल कामोत्तेजना की पूर्ति ही नहीं बल्कि किसी जाति के स्वाभिमान को तोड़ना भी है।

दलित सदैव अत्याचार का प्रतिकार करते आए हैं। दलित स्त्री के साथ हुए बलात्कार ने दलितों को आक्रोश से भर दिया है और वह उच्चवर्ग को कठोर से कठोर सज़ा दिलवाने के लिए कटिबद्ध होता है। शादी होने के बाद परिवार का ख़र्च उठाने के लिए उसको भी नौकरी करनी पड़ती है। कुछ लोग ऐसे भी हैं कि वे सुबह आठ बजे तक बिस्तर पर पड़े रहते हैं और नौकरी के लिए अपनी पत्नी और बच्चों को भेज देते हैं। इस प्रकार के नारी शोषण को लेकर लेखिका ऐसे बताती है- "बहू नौकरी भी करती थी, घर का पूरा काम खाना पकाना, खिलाना, माँजना, धोना सब करके अपने बाल-बच्चों को संभालने की ज़िम्मेदारी भी निभाती है। इतना सब करके भी अधिकांश बहूओं को रात दिन पति की मार, सास की गालियाँ और ननदों के ताने ही मिलते रहते थे।"८४

घर में झगड़ा होने पर घर का पुरूष अपना ग़ुस्सा अपनी पत्नी पर ही निकालता हैं। और बेचारी पत्नी हमेशा पीटती रहती है। इस प्रकार के नारी शोषण के साथ लड़कियों की अवस्था ऐसी होती है कि वह "रोते-रोते घर का पूरा काम करती, खाना बनाती, सबको खिलाती कभी थोड़ा स्वयं भी खा लेती नहीं तो भूखी ही रह जाती है। वह अपने अच्छे दिनों की प्रतीक्षा इस तरह करती थी कि एक दो साल में शायद उसकी स्थिति बदले या एक-दो बच्चे हो जाने पर उसे न्याय मिलेगा या बच्चे बड़े होने पर उसके दिन फिरेंगे या फिर बहूएँ आने के बाद स्थितियाँ बदल जाएगी- इसी प्रतीक्षा में उसका पूरा जीवन निकल जाता था।"८५

डॉ.सुरेश मुळे जी की कहानी कहाँ गया तुम्हारा स्वाभिमान' में भी आर्थिक समस्या

के कारण सुलोचना अपनी पति के शोषण, पति के घर की ग़रीबी से डरकर माँ के घर आ जाती है। दो साल होने के बाद अपने चंचल मन को रोक नहीं पाती। वह उसी गाँव के राजाराम के खेत में काम करने जाती है। राजाराम इसकी इच्छाओं को समझकर उसे अपने मोहजाल में फँसा लेता है और सुलोचना कभी उसके मोहजाल से बाहर नहीं आ पाती है। किसी बहाने सुलोचना घर से बाहर निकलती और राजाराम के साथ मिलती। राजाराम उसे फसल भरे खेत में ले जाकर मन चाहे उसके शरीर से खेलकर उसे पैसे देकर भेजता है। इस प्रकार इस कहानी में दलित स्त्री के शोषण का चित्रण है।

'ख़ानाबदोश' कहानी में नारी शोषण का चित्रण है। इसमें भट्ठे में काम करनेवाले स्त्रियों पर भट्ठे का मालिक मुखतार सिंह का बेटा सुबेसिंह दिन-दहाड़े कचहरी में बुलाकर वहाँ स्त्रियों के साथ अय्याशी करने का शौक़ रखता था।

एक दिन किसनी को आफ़िस बुलाकर उसे अपने जाल में फँसाकर उसके शरीर के साथ मनचाहा खेल खेलने लगता है। किसनी का पति महेश निराश भाव से हमेशा नशे में झोंपड़ी में पड़ा रहता था। किसनी को धीरे से वह शहर ले जाता है तथा वहाँ रूकने के लिए भी शुरू करता है । किसनी भी अपने पति को छोड़कर अय्याशी के नशे में सुबेसिंह की हो जाती है। एक दिन किसनी की तबीयत ठीक न होने पर सुबेसिंह वहीं काम करनेवाली मानो को आफ़िस बुला भेजता है। तो वह नहीं आती। उसके बदले में जसदेव ही आ जाता है। कारण वे सुबेसिंह के बारे में अच्छी तरह से जानते थे। वह जसदेव को ख़ूब पीटता है। इसी को बहाना करके मानोऔर सुखिया को सुबेसिंह बहुत तंग करता है। वह एक दिन पाथे कच्चे ईटों को बेदर्दी से रौंद डालता है।

यह अंत नहीं कहानी में नारी शोषण का भी चित्रण है। ठाकुर अपनी पत्नी रमा को हमेशा डाँटता रहता है। कभी-कभी ठाकुर उस पर हाथ भी उठाता है। रमा इन सब दु:खों को सहते हुए चुप रहती है। अपने पियक्कड़ और अय्याशी पति ठाकुर जब इसे एक बार धक्का देता है तब रमा कहती है- "सारा दिन नशा करते हो और काम के बहाने शहर जाकर दूसरी औरतों के साथ मुँह काला करते फिरते हो सारा गाँव जानता है तुम्हारी उजली चमड़ी में छुपे काले मन को।"८६ कभी रमा अपनी पति की कमज़ोरी को पकड़कर ये भी पति का विरोध करती है।

'अगूंरी' कहानी में नारी शोषण की समस्या को देख सकते हैं। अगूंरी एक ग़रीब

दलित स्त्री होने के साथ उसका सुंदर होना उसके लिए अभिशाप है। अगूंरी सुंदर दिखने के कारण युवक, गाँव के बड़े-बूढ़ों तक की नज़रे उससे हटती नहीं । उम्र में दुगने लोग उसे भाभी कह कर पुकारते और रंग बिरंगे व्यंग्य बाणों से उस पर प्रहार करते हैं। जब भी किसी कार्य के लिए घर से बाहर निकलती गाँव के मनचले उससे जान-बूझकर टकराते या अनजान होकर टकराने का अभिनय करते। यहाँ तक उसी गाँव के मुखिया चंद्रभान की नज़र इस पर रहती है। कामांध चंद्रभान की हर मुश्किलों का डटकर अकेली सामना करती है क्योंकी उसका मजबूर पति गोंदालाल निष्क्रिय होता है।

'यह अतं नहीं' कहानी में दलित युवती बिरमा पर, सवर्ण जाति का सचींदर बलात्कार की कोशिश करता है। इस पर बिरमा के भाई किसन में विद्रोही भावना जाग उठती है। वह कहता है- "बापू! बिरमा का दोष क्या है?...जो उसे सज़ा मिलेगी। नही बापू...सचींदर को ही सज़ा मिलेगी।"८७ वह उसको सज़ा दिलवाना चाहता है। अधिकांश घटनाओं की तो पुलिस थाने में रिपोर्ट भी दर्ज नहीं हो पाती। बिरमा के साथ भी वही हुआ। इस्पेंक्टर कटे स्वर में कहता है- "छेड़खानी हुई है...बलात्कार तो नहीं हुआ...तुम लोग बात का बतंगड़ बना रहे हो। गाँव में राजनीति फैलाकर शांति भंग करना चाहते हो। मैं अपने इलाक़े में गुंडागर्दी नहीं होने दूँगा...चलते बनो।"८८

'जंगल की रानी' कहानी में 'कमली' नामक आदिवासी स्त्री को उच्च अधिकारियों नें बलात्कार करके मार डाला था। इस बलात्कार के मामले की छानबीन 'नया सवेरा' के संपादक कर रहे थे? उन्होंने बलात्कारी डिप्टी साहब से प्रश्न किया- "डिप्टी साहब, केस बलात्कार का लगाता है। पुलिस मामले को रफ़ा-दफ़ा करना चाहती है। इसलिए आत्महत्या का केस बना रही है। उधर नागरिक कृति समीति ने आदोंलन खड़ा करने की बात की है। आपका वक्तव्य ज़रूरी है।"८९ नारी शोषण के प्रति आवाज़ उठाने के कारण सोमनाथ को भी उच्च अधिकारियों ने मरवा दिया। नारी के साथ बलात्कार ही नहीं होता उच्च अधिकारियों या सवर्णों द्वारा अपशब्दों से उसका मानसिक शोषण भी होता है। 'जंगल की रानी' में डिप्टी साहब सुमेर से कहता है- "मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूँ। लड़की ज़रूर बदचलन रही होगी। आप पुलिस स्टेशन जाइए। जो भी पूछना है वहीं जाकर पता कीजिए।"९०

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि दलित नारियों के साथ अमानवीय व्यवहार होता है। इसके बदले दलित युवक संगठित होते हैं। लेकिन सवर्ण अधिकारी उसे रोक देते हैं। ओमप्रकाशजी दलितों की सदियों से सहे जानेवाले स्त्री शोषण के विरूद्ध लड़ने का आह्वान करते हैं। दलित स्त्रियों का हमेशा अपमान होता है। वे कहते हैं- "फूल खिलेगा तो भौंरे मँडरायेंगे ही..."९१ इससे किसन और उसके मित्रों ने मिलकर उच्च वर्गों के विरूद्ध संघर्ष आरंभ किया। वे लोग अपने आक्रोश को संघटित कर सक्रिय रूप में प्रकट करते हैं।

## ४.१० आर्थिक विपन्नता का चित्रण :

समाज में सम्मान के साथ जीने में अर्थ का स्थान महत्वपूर्ण है। अधिकतर जो संघर्ष होते हैं इसके मूल में आर्थिक विपन्नता ही है। आर्थिक असमानता के कारण कोई अमीर तो कोई ग़रीब दिखाई देता है। किसी भी अर्थ व्यवस्था का परिदृश्य आर्थिक कारणों से ही संचालित होता है। अर्थ और अर्थ व्यवस्था द्वारा ही समाज के व्यवहार संबंध, रिश्ते आदि सभी कुछ निर्धारित होते हैं।

आर्थिक समस्या को केंद्र में लेकर आधुनिक युग के लेखकों ने अनेक रचनाएँ की हैं। आर्थिक समस्या के अतंर्गत उच्च, मध्य तथा निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति को लिया जाता है। उसके साथ ही बेकारी की समस्या, ग़रीबी, पारिवारिक अत्याचार आदि का भी भाव निहित रहता है। लेखिका सुशीला टाकभौरे जी के अधिकतर पात्र निम्नवर्ग के हैं। इसलिए उनकी रचनाओं में निम्नवर्ग की आर्थिक कठिनाईयाँ और उससे उत्पन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण हुआ है।

'नई राह की खोज' कहानी में रामचंद का बेटा लालचंद अग्रेंजी कॉनवेंट स्कूल में पढ़ता है। अग्रेंजी की कक्षा चौथी तक वह पास होता है। स्कूल के यूनिफार्म, टाई, जूता, मोज़ों की फ़िकर करने में ज़्यादा रूपयों की ज़रूरत है। कर्ज़ भी इस प्रकार बहुत बढ़ गया। "महँगी किताब कापियाँ स्कूल की फ़ीस, ट्यूशन की फ़ीस और साथ में बहुत से ख़र्च कभी क़र्ज़ लेकर कभी कोई गहना गिरवी रखकर लालचंद की चौथी क्लास पास करवायी गयी।"९२

'कच्ची दीवार' कहानी में निम्नवर्गीय परिवार की आर्थिक समस्या का सुंदर चित्रण है। पार्वती का परिवार निरंतर तीन साल का अकाल के भीषण प्रभाव से घर में खाने के लिए मुट्ठीभर अन्न भी नहीं है। घर में दो भाई और पाँच बहने हैं । कम उम्र में ही इनके पिता चल बसे हैं। सिर्फ़ पार्वती मज़दूरी करती है। अकाल के कारण कोई काम पर बुलाता नहीं । ऐसे में पार्वती की स्थिति ग़रीबी से चिंताजनक थी। इसलिए लकड़ी का बेलन और तगारी को बेचने के लिए रईस के पास जाकर कहती है- "पाटलिन यह बेलन और तगारी लीजिए और बदले में मेरे बच्चों को खाने के लिए थोड़ा सा धान्य दीजिए।"९३ मालकिन से भी मिन्नते करती है- "मालकिन तुम्हें पुण्य लगेगा मेरे बच्चे भूख से तड़प रहे हैं तुम्हारा पाँव पड़ती हूँ कुछ तो दे दो।"९४

'कहाँ गया तुम्हारा स्वाभिमान' कहानी में आर्थिक विपन्नता का चित्रण मिलता है। दलित समाज में अशिक्षा के कारण कोई अच्छा काम उन्हें नहीं मिलता तो वे मजबूरन गाँव में हर दिन खेतों में काम करने के लिए जाते हैं और वहाँ साहूकार लोग ग़रीबी का फ़ायदा उठाकर दलित महिलाओं पर बुरी नज़र डालते हैं और यहाँ तक की अपनी कामवासना तृप्ति के लिए दलित महिलाओं को पैसे की लालच दिखाकर उनके साथ खिलवाड़ करते हैं। इस कहानी में सुलोचना भी इसकी शिकार है। उसी गाँव के सवर्ण पैसे की लालच में रामराज के साथ अपने को रामराज को अर्पित करती है।

'जीवन एक चुनौती' इस कहानी में आर्थिक विपन्नता का चित्रण एक बालक की मानसिकता के साथ चित्रित है। 'सावन' एक दलित बालक है। सवर्णों के बालकों को परिक्षा में पास होने पर धी का दोसा दिलाएगें पुरस्कार में ये बात डोसा मामा से सुनकर 'सावन' परिश्रम से पढ़ाई करते हुए दोसा मामा से दोसा लेकर खाते है।

दयानंद बटोही द्वारा लिखित 'भूल' कहानी में बुद्धू एक चमार जाति का कृषक था। वह उसी गाँव के गोबर पंडित से उदार लिया था। पंडित के बुद्धू के सर पर सवार होने के कारण उसका पूरा क़र्ज़ का पैसा चुका दिया था। फिर भी पंडित बुद्धू के पीछे पड़ता है। बाक़ी क़र्ज़ वापस दे दो करके गरज कर बोलता है- "कुछ लिखा हुआ जो दलीले करता है बताओ रूपये देते हो या बैल ले जाऊँ।"९५ इसे सुनकर बुद्धू गिड़गिड़ाते हुए बोला- "अरे! बाबू हम ग़रीब पर दया करो...माथे के बाल पके आज तक कभी छल, कपट नहीं किया अब किस जनम के लिए झूठ बोलूँगा। अब भी तुम्हारे खेतों में काम करने को तैयार

हूँ...अब भी तुम्हारी शैब सुनने को तैयार हूँ।"९६

सुरेश मुळेजी की कहानी शादी की दावत कहानी आर्थिक समस्याओं से चित्रित है। ग़रीबी के कारण एक वक़्त को रोटी मिलना भी कठिन हो जाता है। यहाँ भीमराव एक अछूत ग़रीब परिवार का बालक है। वह अपने साथियों के साथ सवर्णों के शादी में जाता है । इस कहानी में वर्णित अछूतों का अन्न के लिए गिड़गिड़ाने का दृश्य सभी पाठकों का दिल पसीज देता है। भीमराव कहता है- "मालिक मुझे बहुत भूख लगी है खाने के लिए दीजिए। तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ। मुझे खाना दीजिए। देखो देखो मालिक तुम्हें पुण्य लगेगा तुम्हारे बाल बच्चे सुखी रहेंगे। मुझे मुट्ठी भर अन्न दे दो मालिक मेरे हाथ से अब भूख की पीड़ा सही नहीं जाती बहुत तकलीफ़ हो रही है माई बाप मुझे खाना दो। हूँ.हूँ..हूँ खाना दो मालिक।"९७

इस कहानी में पुलवा बड़ी आशा के साथ रेबत झा से विवाह करके आयी थी। वह सोचती है रेबत एम.ए पास है तो वह अच्छी ज़िंदगी दे सकता है। लेकिन रेबत की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण वह शहर आ जाता है। वहाँ कोई काम न मिलने के कारण मजबूरन रिक्शा चलाता है। तब वह पूरा दिन मेहनत करता है। फिर भी पेट भर खाने के लिए कमाने लायक भी नहीं कमाता था, इसके घर की स्थिति का परिचय पुलवा के शब्दों से पता चलता है- "जैसे कुछ नहीं, कुछ नहीं था कनस्तर आज ख़ाली हो गया दिन में तो। आस विश्वास देखकर क्या करती बगलवाले पासवान से उधार दो रूपिया माँग कर आधा किलो चावल ले आयी, एक पाव दाल फिर ई रोने लगा तो बिस्कुट एक आना का।"९८

'नयी राह की खोज' कहानी में रामचंद का बेटा लालचंद अग्रेंजी कॉनवेंट स्कूल में पढ़ता है। अग्रेंजी की चौथी कक्षा पास होता है। परंतु स्वार्थ बढ़ने के कारण महँगी किताब-कापियाँ स्कूल की फ़ीस, ट्यूशन की फ़ीस आदि का ख़र्च घरवाले उठा नहीं पाते हैं। कभी क़र्ज लेकर और कभी कोई गहना गिरवी रखकर लालचंद की पढ़ाई चलती है। परंतु आगे की पढ़ाई के लिए इतना ख़र्च उठाया नहीं जाता इस बात को लेकर घर में घंटों बहस होती है। माँ कहती- "और भी तो बच्चे हैं अपने, क्या उन्हें ज़हर दे दें। आगे की पढ़ाई कठिन है, हिंदी में ही पढ़ लेगा।" अत: लालचंद को कॉरपोरेशन की हिंदी प्राइमरी कक्षा

पाँचवी में भेजते हैं। लालू एक होशियार लड़का होकर भी आर्थिक विपन्नता के कारण आगे की पढ़ाई नहीं कर सकता है।

'मेरा समाज' कहानी में लेखिका ने बताया है कि दलित समाज के लोग सुबह आठ बजे तक बिस्तर में पड़े रहते हैं। और पत्नी या बच्चों को अपनी मज़दूरी के लिए भेज देते हैं। ये बच्चे सफ़ाई का काम भी करते हैं। घर का वातावरण किताब रूपियों का अभाव, व्यवस्था हीनता आदि इन बच्चों को मज़दूरी करने के लिए मजबूर करते हैं। घर की ज़रूरतों और ख़र्चों को देखकर उनकी पढ़ाई जल्दी ही बंद कर दी जाती है। और उन्हें परंपरागत काम पर लगया जाता है।

'मेरा समाज' कहानी में भी आर्थिक विपन्नता का चित्रण मिलता है। दलित समाज के लोग सुबह आठ बजे तक बिस्तर में पड़े रहते हैं। पत्नी या बच्चों को अपनी मजदूरी के लिए भेज देते हैं। घर का वातावरण, किताब कॉपियों का अभाव, शराबी पिता की शराब का ख़र्च आदि उन्हें आगे नहीं पढ़ने देते हैं। "घर की ज़रूरते और ख़र्च देखकर उनकी पढ़ाई जल्दी ही बंद कर दी जाती थी। आगे परंपरागत काम पर वह लगाया जाता है।"९९

'यह अतं नहीं' कहानी में अपनी बहन बिरमा का सवर्ण लड़के द्वारा अपमानित होने से किसन का ख़ून खौल उठा था। वह सचींदर को सज़ा दिलाना चाहता है। कहता है- "बापू! बिरमा का दोष क्या है?...जो उसे सज़ा मिलेगी। नहीं बापू...सचींदर को ही सज़ा मिलेगी।"१०० वह अपने शिक्षित सहपाठियों के साथ मिलकर कई योजनाएँ बनाता है। जैसे "बिरमा की ओर से पंचायत में शिकायत की जाती है"१०१ आदि।

शिक्षित होने के कारण आज दलित अपने भीतर उमड़ते रोष को संयत कर संघर्षरत हैं। अशिक्षित होने पर भी किसन और उसके मित्र मंडली की प्रेरणा से बिरमा में भी शक्ति आ गयी है। वह क्रोध में अपने बापू से कहती है- "वाह बापू, जो भाई अपनी बहन की आबरू की ख़ातिर लड़ रहा है तुम उसे पीट रहे हो।"१०२ बापू हमारे पास न ताक़त है, न रुतबा...लेकिन अपनी जान देकर आत्मसम्मान तो माँग ही सकते है"।१०३ उसमें स्वाभिमान की भावना जाग उठती है। पंचायत से न्याय न मिलने पर कहती है- "किसन भैया ठीक कहते थे, पंचायत में नियम न होता, जात-पाँत बिरादरी देखी जावे है।

गुंडागर्दी होती है पंचायत के नाम पे।"१०४

## दलित कहानियों में चित्रित नारी

भारतीय संस्कृति में नारी को श्रद्धा के समान माना जाता है। लेकिन आज वह श्रद्धा के स्थान पर भोग्य बन गयी है। नारी के आदर्शोन्मुख चरित्र जैसे आदर्श गृहिणी, आदर्श माता, आदर्श पत्नी आदि स्वरूप आज के साहित्य में मिल पाना मुश्किल है। समाज का उच्च वर्ग नारी को अपने भोग की वस्तु बनाये रखता है । सौंदर्य प्रतियोगिताएँ, फ़ैशन परदे ये सब आज के समाज में मामू ली बात बन गयी है। अमीर आज स्त्री को मन चाहे काम करने के लिए मजबूर करते हैं, हर समस्या को पार करके कोशिश करके कुछ तो हासिल करना चाहते है, मगर इस पुरुष प्रधान समाज ने उस स्त्री का अधिकार और साहस का मज़ाक उड़ाते हुए उसे चार दीवारों के अन्दर बंदी बनाके रखा हैं ।

### ४.१०.१ स्वाभिमानी स्त्री :

समाज में दलित महिलाओं का यौन शोषण तथा बलात्कार जैसे घटनाएँ आम बात हैं । ऐसी घटनाएँ होने पर स्त्री को ही दोष दिया जाता है । पुरुषों को निर्दोष माना लिया जाता है । ऐसी स्थिति में स्त्रियों को न्याय नहीं मिल पाता । सवर्ण पुरुष ने इन दलित महिलाओं पर अपना अधिकार चलाता रहता है । इस तरह वह शारीरिक और मानसिक रूप से स्वयं को बहुत ही कमजोर, अबला, निर्बल तथा असहाय मानने लगती है। लेकिन दलित स्त्री आज शिक्षा और आधुनिकता के कारण अपने स्वाभिमान को बरकरार रखने की कोशिश कर रही है । आज अनेक दलित साहित्यकारों ने अपनी कहानियों में स्वाभिमानी स्त्री को दर्शाना चाहते हैं ।

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'यह अतं नहीं' कहानी में मंगलू की बेटी बिरमा, तेजबान के खेत में काम करने जाती है। खेत से वापस लौटते समय तेजबान का लड़का सचींदर, बिरमा पर अत्याचार करने की कोशिश करता है। लेकिन होशियार बिरमा सचींदर को मारती है और सचींदर बेहोश होकर गिर जाता है। इस प्रकार इस कहानी में

कहानीकार ने बिरमा को एक होशियार नारी के रूप में चित्रित करके , उसके स्वाभिमान और साहस का परिचय दिया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी की लिखी कहानी 'हमारी सेल्मा' में सेल्मा को स्वाभिमानी स्त्री के रूप में चित्रित किया है। सेल्मा तनाव के कारण कुंठित होने के साथ अकेलेपन को महसूस करती है। वह बचपन से ही स्वाभिमानी और ज़िद्दी थी। शादी के बाद पति के साथ भी उसकी नहीं बनती है। परिवार से अलग मौन रहते, एकांत को ही अपनाती है। लेकिन जीवन की अतिंम अवस्था में वह स्वाभिमान, दृढ़ निश्चय और मानापमान की परिभाषा बदलकर वह सभी से मिलजुलकर रहते जीना शुरू करती है। सभी से ख़ुशी की बूँदे बटोरना चाहती है। वह कैंसर से पीड़ित हो जाती है तब स्वाभिमान छोड़ देती है। इस प्रकार सेल्मा को एक स्वाभिमानी स्त्री के रूप में चित्रित किया है।

ओमप्रकाशजी की 'अम्माँ' कहानी स्वाभिमानी स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। इस कहानी में 'अम्माँ' घरों में झाड़ू लगाकर अपने बच्चों को पढ़ा-लिखाकर बड़ा करती है। वे तीनों बड़े होकर काम करते हैं। सिर्फ़ मुकेश को छोड़कर। सबसे बड़ा बेटा शिवचरण नगरपालिका में ठेकेदारों का काम करते हुए वहाँ आनेवालों से रिश्वत लेता है। अम्माँ को यह पता चलते ही, वह उनके साथ रहना पसंद नहीं करती और उससे अलग होती है। मुकेश, स्कूल टीचर से अनैतिक संबंध रखता है। अम्माँ को जब इसका पता चलता है तो वह इसका विरोध करती है। ढ़लती उम्र में भी स्वाभिमान से जीना चाहती है। अतं में दोनों बच्चों को छोड़कर झाड़ू लेकर काम करने निकलती है।

## ४.१०.२ सुशिक्षित नारी :

शोषित, पीड़ित दलित महिलाओं में जागृति लाने के लिए उनमें शिक्षा के अधिकार का प्रचार-प्रसार होना आवश्यक है शिक्षा के माध्यम से वह अपने स्वतंत्रता के अधिकार और कानून के सुरक्षा कवच को समझ सकेगी,साथ ही अत्याचारियों का डटकर मुकाबला भी कर सकेगी । इस तरह शोषण से मुक्त हो सकेगी, नारी की परम्परागत दयनीय और शोचनीय दशा के लिए जिम्मेदार मनुवादी विचारधारा और पुरानी समाज व्यवस्था की

नकार कर, मानवीय मूल्यों पर आधारित परिवर्तनवादी विचारधारा और प्रगतिशील समाज व्यवस्था को मान्यता दे सकेगी । दयानंद बटोही द्वारा लिखित कहानी 'भूल' में गोबर की बेटी पारो शिक्षित युवती है। शिक्षित पारो बेकुसूर बुद्धू को न्यायालय में निरपराधी घोषित किया जाता है। पारो से पाठकों को यह संदेश मिलता है कि समाज में समानता, न्याय और छुआ-छूत जैसे कुरीतियों को दूर करने के लिए नारी को शिक्षित होना ज़रूरी है। पारो न्यायालय में बयान में कहती है- "सर् कानून के सामने हम सब मनुष्य हैं बराबर हैं। अन्याय के सामने भाई, बंधु, माता-पिता का मोह करना मानवता के साथ धोखा देना है, अन्याय के सामने इनका मोह करना सबसे बड़ा पाप है।"१०५

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी द्वारा लिखित 'अधंड' कहानी एक सुशिक्षित नारी के रूप में सविता अपना कर्तव्य निभाती है और अपने पति को सलाह देती है। सुक्कड़ निम्नजाति का है। वह पढ़-लिखकर जब आफ़िसर बनता है। जाति को छिपाकर रखता है और पंजाबी के रूप में रहने लगता है। लेकिन पत्नी सविता इसका समर्थन नहीं करती। उसे समझाती है कि जाति छिपाना ग़लत है।इस प्रकार सुशिक्षित नारी होने के कारण अपने पति को सही मार्गदर्शन करने के जरिए नेक इसांन बनाना चाहती है।

डॉ. कुसुम मेघवालजी की कहानी 'लौटती मुसकान' में दीपा एक सुशिक्षित नारी है। दीपा की शादी मणींद्र से हो जाती है। मणींद्र के पिता, दीपा के पिता से दहेज के रूप में पंद्रह हज़ार रूपये नक़द व मोटर साइकिल लेते है बारात के प्रबंध के लिए अपना मकान बेचने के साथ-साथ क़र्ज़ भी लेते हैं। इससे परेशान दीपा मणींद्र को समझाकर उनके पैसे लौटाती है। इस प्रकार इस कहानी में सुशिक्षित नारी दीपा मणींद्र और उनके पिता शिवदयाल का मन परिवर्तन करती है।

डॉ. कुसुम मेघवाल द्वारा लिखित 'जुड़ते दायित्व' कहानी में रजनी एक सुशिक्षित नारी है। वह अपने घर के पास की नाली साफ़ करनेवाली झमकू के बेटे राजु को पढ़ाना चाहती है। इसीलिए उसे समझाकर राजु को स्कूल में दाख़िला कराती है। वही राजु परिश्रम से पढ़-लिखकर सहायक कलेक्टर बनता है। इस प्रकार रजनी सुशिक्षित नारी होने के कारण अछूतों को समाज के मुख्यधारा में लाने का प्रयत्न करती है।

## ४.१०.३ शोषित नारी :

स्वतंत्रता के बाद हमारे देश में औद्योगिक, वैज्ञानिक, तंत्र शिक्षा, चिकित्सा, कृषि और भौतिक जीवन की सुख-सुविधाओं संबंधी क्षेत्र में आशा के अनुरूप प्रगति हुई है । लेकिन दलित समाज की महिलाओं की स्थिति और भी अधिक पिछड़ी है। आज भी किसी गावं या शहर में दलित स्त्री को निडरता और निस्संकोच भाव के साथ प्रताड़ित किया जाता है । कानून भी दलित महिला को न्याय नहीं दिला पाता है । परिणामस्वरूप अत्याचारी सरेआम समाज में घूमता हुए दलित स्त्री को पीड़ित करते हैं । दलित स्त्रियों को पीड़ा पहुँचाना, उन्हें मारना-पीटना, उनका यौन-शोषण करना, उनकी हत्या करना और उन्हें नंगा करके गावं में घुमाना, उनके साथ सामूहिक बलात्कार करना-ये सब अत्याचार आम बातें हो गई हैं । पुरुष के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर कठोर श्रम करने वाली दलित स्त्री अपने श्रम के मूल्य की मालिक भी स्वयं नहीं बन पाती है । उसकी कमाई पर उसका पति अपना पूरा अधिकार समझता है । वह लड़कर, मार-पीट करके, छीनकर, उससे उसके रुपए लेने का अपना अधिकार समझता है । दरिद्रता और अभाव का जीवन जीते हुए भी दलित स्त्री को अपने पुरुष का प्रभुत्व, सत्ता और शासन को सहन करना पड़ता है ।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी कृत 'जंगल की रानी' कहानी में कमली एक आदिवासी स्त्री होने के साथ सुंदर थी। ग्रामीण प्रदेश में आयोजित महिला प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन करने के लिए एस.पी, डी.सी और एम.एल.ए ये तीनों आये हुए रहते हैं। जब कमली इन लोगों के नज़र में आ जाती है, तो ये लोग कार्यक्रम समाप्ति के बाद उसे ज़बरदस्ती से उसपर अत्याचार करने की कोशिश करते हैं। लेकिन जब वह उनका विरोध करती है तो उसे मारकर रेल पटरी पर फेंककर इसे आत्महत्या का रूप दे दिया जाता है । इसमें एक आदिवासी महिला के शोषण का चित्रण मिलता है।

डॉ. कुसुम मेघवाल द्वारा लिखित 'अगांरा' कहानी में नारी शोषण का चित्रण है। इस कहानी में ठाकुर के बड़े बेटे सुमेरसिंह और उसका चाचा नाथूसिंह दोनों नाले के खेत की

मेड़ पर घास काटने आयी हुई जमना को पकड़कर दूर के एक काली कोठरी में ले जाकर बलात्कार करते हैं। डॉ. मेघवाल द्वारा लिखित 'मेरी सास ने कहा था' कहानी में अगूंरीबाई और ललित ये दोनों शोषित नारियाँ हैं। इनको अपने परिवार में शोषण का शिकार होना पड़ता है। श्यामलालजी जिस प्रकार अपनी पत्नी अगूंरीबाई को अमानुषीय रीति से हर दिन उसे किसी-न-किसी तरह शोषण करता था। ठीक उसी प्रकार श्यामलालजी का बेटा जयंत भी ललिता को मारने-पीटने, गालियाँ देने के साथ पशुत्व व्यवहार करता है।

बुद्ध शरण हंस द्वारा लिखित 'देव साक्षी है' कहानी में स्त्री शोषण का चित्रण है। चंद्रा और दयानाथ प्रेम विवाह करने मंदिर में आ जाते हैं। वहाँ के पुजारी शाम होने के कारण शादी सुबह करने के उद्देश्य से उनको ऐसे सांत्वना देकर मंदिर में ठहरते है । रात में दोनों को अलग-अलग कमरे में रहना अनिवार्य बताते हैं। जब चंद्रा रात में अकेली रहती है तो उस पर पुजारी बलात्कार करते हैं । चंद्रा को समझाता है कि- "तुम्हारा क्रुध्द होना स्वाभाविक है प्रिये! मगर आवेश में पति से कुछ कह मत देना, सो याद करलो, वरना बिगाड़ तुम्हारा ही होगा।"१०६इस प्रकार मासूम प्रेमियों के साथ वह विश्वासघात करते हैं । इस तरह नारी शोषण का चित्रण उभरकर आता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'जंगल की रानी' कहानी में आदिवासी युवती कमली देखने में सुंदर रहती है। आदिवासी गाँव में आयोजित ग्रामीण महिला प्रशिक्षण शिविर में भाग लेने के लिए ज़िला कलेक्टर, ज़िला पुलिस आयुक्त और एम.एल.ए साहब वहाँ आते हैं। कार्यक्रम पूरा होते ही कमली को जबर्दस्ती उठाकर ले जाते हैं। तीनों मिलकर कमली पर अत्याचार करने की कोशिश करते हैं । कमली इन तीनों से बचकर निकलने की कोशिश करती है। बीच में एस.पी का गला दबोचकर मारने की कोशिश करते समय एस.पी कमली को मार देता है। बाद में उसके शव को रेल की पटरी पर डालकर आत्महत्या का मामला बताने की कोशिश करते हैं।

इस प्रकार इस कहानी में पढ़े-लिखे समाज में उच्च पद पर बैठे लोगों का एक स्त्री को अमानवीय ढंग से मारने का चित्रण है।

'रिहाई' कहानी में लाला रामसुखलाल के गोदाम में काम करनेवाली महिला सुगुणी, लाला रामसुखलाल के शोषण से त्रस्त थी। एक बार उसके बीमार पति मिट्टन पर बोरा गिरने के कारण उसकी हालत गंभीर हो जाती है। इसे देखते हुए लाला डाँटकर गोदाम का ताला बंद करके चला जाता है। तब सुगुणी गोदाम के दरवाज़े पर आकर असहाय स्थिति में चिल्लाते-चिल्लाते मदद की याचना करते गिड़गिड़ाते मर जाती है। इस कहानी में एक ग़रीब असहाय स्त्री का चित्रण है।

सुशीला टाकभौरेजी की कहानी 'दमदार' में एक पागल औरत और प्रेमलता आदि को कमज़ोर मानकर जग्गु पहलवान बहुत पीटता है। लेकिन वहाँ कोई उसके विरुद्ध आवाज़ नहीं उठाता हैं। कंजर जाति की सुमन इनके शोषण का विरोध करना चाहती है। इसके लिए वह  जग्गु से प्यार करने का नाटक करती है। अतं में जग्गु पहलवान को बाज़ार के बीच में मारती है। इस कहानी में सुशीला टाकभौरेजी द्वारा चित्रित औरत में कितनी शक्ति है तथा औरत चाहे तो कुछ भी कर सकती है यह दिखाने का प्रयास किया है ।

सूरजपाल चौहान द्वारा लिखित 'अगूंरी' कहानी में प्रमुख स्त्री पात्र 'अगूंरी' का है। अगूंरी देखने में बहुत सुंदर एवं रूपवती थी। जिसके फलस्वरूप उसी गाँव के मुखिया चंद्रभान सहित गाँववालों के बुरी नज़रों का वह शिकार होती है। पति गोंदालाल से कहने पर भी कोई प्रयोजन नहीं होता है। गाँव के मुखिया चंद्रभान और काले पहलवान की शरारतें दिन ब दिन बढ़ती जा रही थी । पर अगूंरी ने उनकी बातों पर क़तई ध्यान नहीं दिया । मुखिया जब भी अगूंरी को एकांत में देखता तो उसके साथ छेड़-छाड़ करने से नहीं चूकता था। इससे अगूंरी को अपनी इज्ज़त बचाना बहुत मुश्किल हुआ था।

जब कामांध मुखिया चंद्रभान, काले पहलवान के साथ अगूंरी के घर जाने की योजना बनाते हैं। तथा अगूंरी के पति गोंदालाल को प्रमुख काग़ज़ों पर हस्ताक्षर कराने के बहाने तहसीलदार के पास भेजते हैं। तब दोनों ख़ुशी से वार्तालाप करते हैं कि- "काले आज आधी रात को हम दोनों सोती हुई अगूंरी को उसके घर में दबोचेंगे किसी को कानों-कान पता भी नहीं चलेगा।"१०७

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'ज़िनावर' कहानी में नारी शोषण का चित्रण है। इसमें चौधरी अपनी बहू किसनी को हवेली में रखकर तीन महीने तक संभोग करके

बाद में उसकी हत्या करके जोहड़ में फेंक देता है। आगे चलकर उसकी मामा की बेटी को पाँच हज़ार रूपये देकर ले जाकर अत्याचार करके अपने छोटे बेटे बिरजू के साथ उसकी शादी कराता है। शादी होने के बाद बहू पर अत्याचार करना चाहता है पर बहू उसका विरोध करती है। इस कारण से वह उसे हवेली से निकाल देता है। यहाँ स्त्री को अपनी हवस का शिकार बनाने का चित्रण प्राप्त होता है।

दयानंद बटोही द्वारा लिखित 'सुरंग' कहानी में नायिका बेरोज़गार पति की मानसिकता पर सोचती है। अखिल अपनी पत्नी को एक ग़ैर कचहरी में नौकरी करने के लिए भेजता है। उस कचहरी का सेक्रेटरी इन लोगों की कमज़ोरी का पता लगाकर अखिल की पत्नी को आफ़िस में अधिक काम कराने के साथ र.३०० वेतन के लिए हस्ताक्षर कराकर मात्र र. ६० वेतन देता है। वह इसके ख़िलाफ़ कुछ बोल भी नहीं सकती। इस तरह अखिल की पत्नी को शोषित किया जाता है। बुद्धशरण हंस द्वारा लिखित 'रे अधम मुझे मत बेच' कहानी में एक पंडित अपनी बेटी को पैसे की लालच में कैसे बेचता है इसका चित्रण है।

कहानी में पंडित बटोरन मिश्र पैसे की लालच में आकर मंदिर से भगवती मूर्ति को लेने आए हुए थामस को अपनी बेटी लक्ष्मी को भी अधिक पैसे लेकर उस की इज्ज़त को भी बेच देता है। थामस लक्ष्मी को पैसे गिनने के बहाने कमरे में ले जाता है और उसकी इज्ज़त लूटता है। इस तरह एक पिता कैसे अपनी ही बेटी का शोषण करते हैं इसका दर्दनाक चित्र कहानीकार ने उकेरा है ।

बुद्ध शरण हंस जी के 'देव दर्शन' कहानी में भी नारी को कैसे शोषित किया जाता है इसका चित्रण है। देव दर्शन करने के लिए आनेवाले भक्तों को देव दर्शन के नाम पर घर में स्त्रियों को रखकर कैसे धंधा चलाते हैं इसका पता राजगुरू की बातों से चलता है। वह कहता है- "आप मेरे घर चलो वहीं सब कुछ इतंजाम कर देंगे भक्त ही भगवान होता है। भक्त को ख़ुश करना भगवान को ख़ुश करने के बराबर होता है।"१०८ इस अध्याय में तमाम आधुनिक प्रगति के बाद भी बदस्तूर जारी दलित महिला शोषण को स्पष्ट करने के दृष्टि से लिखा गया है।

## सन्दर्भ सूची


१. डॉ. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , १६

२. डॉ. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , ५२.

३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - प्रमोशन , पृ सं , ४८.

४. ओमप्रकाश वाल्मीकि - कुडाघर , पृ सं , ५७.

५. ओमप्रकाश वाल्मीकि - कुडाघर , पृ सं , ५७.

६. ओमप्रकाश वाल्मीकि - कुडाघर , पृ सं , ५८.

७. ओमप्रकाश वाल्मीकि - शवयात्रा , पृ सं , ३९.

८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - शवयात्रा , पृ सं , ३९.

९. ओमप्रकाश वाल्मीकि - शवयात्रा , पृ सं , ४६

१०. ओमप्रकाश वाल्मीकि - प्रमोशन , पृ सं , ४६.

११. दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन , पृ सं , ६९.

१२. ओमप्रकाश वाल्मीकि - बैल और सलाम खाल , पृ सं , ३३.

१३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - ब्रम्हास्त्र , पृ सं , ८७.

१४. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं , पृ सं , २८.

१५. ओमप्रकाश वाल्मीकि - ब्रम्हास्त्र , पृ सं , ८६.

१६. ओमप्रकाश वाल्मीकि - मैं ब्राम्हण नहीं हूँ , पृ सं , ६६.

१७. ओमप्रकाश वाल्मीकि - रिहाई , पृ सं , ७९.

१८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - रिहाई , पृ सं , ८०.

१९. डॉ. सुशीला टाकभौरे - नई राह की खोज , पृ सं - ८२

२०. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , १०.

२१. ओमप्रकाश वाल्मीकि - बैल की खाल , पृ सं , ३६.

२२. ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये , पृ सं , १५.

२३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये , पृ सं , १५.

२४. सुशीला टाकभौरे - झरोखें , पृ सं , १७.

२५. सुशीला टाकभौरे - झरोखें , पृ सं , २६.

२६. सुशीला टाकभौरे - सिलिया , पृ सं , ६६.

२७. सुशीला टाकभौरे - संघर्ष , पृ सं , २३.

२८. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , २६.

२९. सूरजपाल चौहान - साजिश , पृ सं , ४३.

३०. ओमप्रकाश वाल्मीकि - खानाबदोश , पृ सं , १२८.

३१. बुद्धशरण हंस - भोज के कुत्ते , पृ सं , ८४.

३२. सूरजपाल चौहान - अगूंरी , पृ सं , ४६.

३३. डॉ. सुरेश मा. मुळे - दूसरी शादी , पृ सं , ४ , ५.

३४. डॉ. सुरेश मारूतिराव मुळे - शादी की दावत , पृ सं , ४.

३५. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ४६.

३६. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , २६.

३७. डॉ. सुरेश मारूतिराव मुळे - शादी की दावत , पृ सं , ४.

३८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये , पृ सं , १८.

३९. ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये , पृ सं , १८.

४०. ओमप्रकाश वाल्मीकि - प्रमोशन , पृ सं , ४८.

४१. डॉ. सुशीला टाकभौरे - व्रत और व्रती , पृ सं , ५३.

४२. डॉ. सुरेश मा.मुळे - दूसरी शादी , पृ सं , ५-६.

४३. सुशीला टाकभौरे - जन्मदिन , पृ सं , २८.

४४. सुशीला टाकभौरे- संघर्ष, पृ सं , १०.

४५. सुशीला टाकभौरे- संघर्ष , पृ सं , ४६.

४६. सुशीला टाकभौरे - कच्ची दीवार , पृ, सं , १.

४७. डॉ. सुरेश मा. मुळे- शादी की दावत , पृ सं , ३.

४८. डॉ. सुरेश मा. मुळे- शादी की दावत , पृ सं , ३.

४९. डॉ. ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम , पृ सं , १३.

५०. डॉ. ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम , पृ सं , १४-१५.

५१. ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम , पृ सं , ५३.

५२. ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम , पृ सं , ५३.

५३. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ६८.

५४. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , २५.

५५. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , २६.

५६. डॉ. सुरेश मुळे - मनपरिवर्तन , पृ सं _ ३

५७. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ५२.

५८. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ५३

५९. ओमप्रकाश वाल्मीकि - प्रमोशन , पृ सं , ५०

६०. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ५७.

६१. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ५७.

६२. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , ५२.

६३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम , पृ सं , २९.

६४. डॉ. सुशीला टाकभौरे - जन्मदिन , पृ सं , ३८.

६५. डॉ. सुशीला टाकभौरे - छौआ माँ , पृ सं , ७२.

६६. डॉ. सुशीला टाकभौरे - जन्मदिन , पृ सं , ३८.

६७. डॉ. सुशीला टाकभौरे - नयी राह की खोज , पृ सं , ८९.

६८. डॉ. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , १३.

६९. डॉ. सुरेश मा.मुळे - दूसरी शादी , पृ सं , ४.

७०. डॉ. सुरेश मा.मुळे - दूसरी शादी , पृ सं , ३.

७१. डॉ. सुरेश मा.मुळे - कहाँ गया तुम्हारा स्वाभिमान , पृ सं , ३.

७२. सुरेश मा.मुळे - कहाँ गया तुम्हारा स्वाभिमान , पृ सं , ३.

७३. डॉ. दयानंद बटोही - भूल , पृ सं , ४९.

७४. डॉ. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ४३.

७५. डॉ. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , १९ .

७६. डॉ. सूरजपाल चौहान-, हैरी कब आएगा , पृ सं , १९.

७७. ओमप्रकाश वाल्मीकि - मुंबई कांड , पृ सं , ३०.

७८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - मुंबई कांड , पृ सं , ३०.

७९. ओमप्रकाश वाल्मीकि - मुंबई कांड , पृ सं , ३२.

८०. डॉ. सुशीला टाकभौरे - दमदार , पृ सं , १३२.

८१. डॉ. सुशीला टाकभौरे - मेरा समाज , पृ सं , ३०.

८२. डॉ. सुशीला टाकभौरे - मेरा समाज , पृ सं , ३१.

८३. सूरजपाल चौहान - हैरी कब आएगा , पृ सं , ५९.

८४. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं , पृ सं , २४.

८५. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं , पृ सं , २४.

८६. ओमप्रकाश वाल्मीकि - जंगल की रानी , पृ सं , ९८.

८७. ओमप्रकाश वाल्मीकि - जंगल की रानी , पृ सं , २५.

८८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - जंगल की रानी , पृ सं , २५.

८९. डॉ. सुशीला टामभौरे - नयी राह की खोज , पृ सं , ७०.

९०. डॉ. सुरेश मुळे - कच्ची दीवार , पृ सं , २.

९१. डॉ. सुरेश मुळे - कच्ची दीवार , पृ सं , २.

९२. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , ४६.

९३. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , ४६.

९४. डॉ. सुरेश मुळे - शादी की दावत , पृ सं , ३.

९५. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं , २५.

९६. डॉ. सुशीला टाकभौरे - मेरा समाज , पृ सं , २९.

९७. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नही , पृ सं , २४.

९८. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नही , पृ सं , २६.

१००. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नही , पृ सं , २७.

१०१. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नही , पृ सं , २८.

१०२. ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नही , पृ सं , २८.

१०३ डॉ. दयानंद बटोही - सुरंग , पृ सं - ५२

१०४ बुद्ध शरण हंस - देवसाक्षि , पृ सं , ४४.

१०५ सूरजपाल चौहान - अगूंरी , पृ सं , ४५.

१०६ बुद्ध शरण हंस - तीन महाप्राणी , पृ सं , १२.

## पंचम अध्याय

# हिंदी दलित कहानियों की भाषा-शैली

प्रस्तावना :

५.१ सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग

५.२ मुहावरे और लोकोक्तियाँ

५.३ गालियों का प्रयोग

५.४ सादृश्य विधान

५.५ हिंदी दलित कहानियों की भाषा - शैली

## प्रस्तावना

भाषा द्वारा ही हम अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। साहित्यिक क्षेत्र में भी यही माध्यम है, जिससे साहित्यकार अपनी रचना को शब्दबद्ध करता है। साहित्यिक भाषा की अपनी छवि होती है। दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता की भाषा में कही गयी हैं। इनमें ज़्यादातर पात्र अशिक्षित मज़दूर और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है। दलितों की भाषा तो अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके साहित्य में यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। उसमें अधिक रूप से बोली के शब्दों का प्रयोग हुआ है। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ये कहानियाँ पिछड़े गाँव में रहनेवाली जनता की कहानियाँ हैं। दलित कहानियों के भाषा पक्ष पर विचार करने की सही दृष्टि यही हो सकती है। सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग इनमें प्रचुरता से किया गया है।

## ५.१ सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग :

हिंदी कथा भाषा में दलित कहानियों की भाषा का अलग स्थान निर्मित हो रहा है। यह भाव अलग व्यक्तित्व की पहचान कर रही है । पात्रों को स्वाभाविक भाषा प्रयोग के आधार पर कहानियाँ महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रही है। स्वाभाविक रूप से यहाँ तात्पर्य है, सामान्य भाषा का वह रूप जिसका प्रयोग सवर्ण और अवर्ण विविध सामाजिक परिस्थितियों में एक दूसरे से संभाषण में करते हैं। इस भाषा का केंद्र लालित्य न होकर दालित्य है। अर्थात् दलित पात्रों को संबोधित करते हुए सवर्ण व्यक्ति की भाषा से यह झलकता है कि वह अपने से हीन को संबोधित कर रहा है। दूसरी ओर जब दलित पात्र बोलता है तो वह अपनी हीनता ग्रंथि से इतना ग्रसित है कि उच्च वर्ग के पात्र के समक्ष वह या तो निरीहता या फिर रोष में बोलता है। अर्थ यह है कि दोनों ही स्थितियों में वक्ता-श्रोता संबंध भाषा चयन को सीधे प्रभावित करता है। दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों में दलित जीवन से जुड़ी इसी वास्तविक और आंचलिक भाषा का प्रयोग किया है-

१."बेट्टे, मुझे किताब क्या दिखाते है। मैं तो हरफ़ (अक्षर) भी ना पिछाणूँ। मेरे लिए तो काला अच्छर भैंसे बराबर है। फिर भी इतना तो ज़रूर जाणूँ कि पच्चीस चौका डेढ़ सौ होवे हैं।"

"किताब में साफ़-साफ़ लिखा है 'पच्चीस चौका सौ..' "तेरी किताब में ग़लत भी तो हो सके है ... तो क्या चौधरी झूठ बोलेंगे? तेरी किताब से कहीं ठाड्डे (बड़े) आदमी है चौधरी जी। उनके धोरे (पास) तो ये मोट्टी-मोट्टी किताबें हैं वह जो तोरा हेडमास्टर है वे भी पाँव छूते है चौधरी जी के। फेर भला वे ग़लत बतावेंगे मास्टर से कहणा सही-सही पढ़ाया करे.... ।"

२. "यो पैसे सहर में जाके दिखाणा । दो पैसे हो गए जेब में तो सारी दुनिया को सिर पे ठाये घुमो.....ये सहर नहीं गावं है ....यंहा चूहड़े-चमारों को मेरी दुकान में तो चाय ना मिलती.....कहीं और जाके पियो ।"

३.“हाँ साहब गाँव में सबसे पैले (पहले) मेरे पोते की बहू को ही नंगा किया गया। कुछ बहू बेटियों को हवेली में नंगा किया गया। दिन के उजाले में भी और रात के अँधेरे में भी। अब किस किस का नाम बताऊँ। सारे गाँव ने झेला है उसे। म्हारी बियरबानी मुँह से न कहें, पर मन जानता है उनका।”

४ “क्योरी, तुझे नहीं मालूम, अपना व कुएँ से पानी नहीं भर सकें हैं? क्यों चढ़ी तु व कुआँ पर, क्यों रस्सी-बालटी को हाथ लगाया?”

५. “डल्ला को एक रूपया काउने जेब में से निकाल लाओ या से उवा न घर में उद्द्म कारि रखौ है, तेरे ‘माँ’ पर बेमतलब शक करि रयौ है, वाने जब से घर में आयी है, घर की हालत सुधर गयी है, ये शल्ला पागल कहाँ समझता है ये सब बातें।”

६ “क्यों पीना पडते हो इस तरह खाने पर” “काका में सिर्फ़ पेट भरने के लिए नहीं खाता। मैं खा-खाकर इतना मोटा इतना ताक़तवर हो जाना चाहता हूँ कि मुझे जो लड़के रात-दिन चिढ़ाते रहते हैं-रंगाराम, गंगाराम मैं अकेले उन सबको सिखा सकूँ।”

७.”तो तुम्हारा भारत कितना बड़ा है । कुछ जानते हो ?...नहीं जानते ....? देखो सिंह ....मंदिर तो बाला जी का ही बनेगा....यदि नहीं बना तो मैं यहाँ भूख हड़ताल करूँगा....जरुरत पड़ी तो आत्मदाह भी करूँगा....मैं मरने से नहीं डरता....कहे देता हूँ....यह मेरा आखिरी फैसला है ।”

८. “आपका पोता है न दीप सिंह उसने पाँच-छः साल पहले मैट्रिक परीक्षा पास कर ली थी। अब मारा-मारा घूम रहा है।” वह थोड़ा रूककर बोला “दादी सौ बीघा ज़मीन थी मेरे बाप के नाम। हम पाँच भाईयों में बँट गई, बीस-बीस बीघा। ज़मींदारी नहीं रही जब दीप सिंह को कहीं चौकरी पर चिपकवा दो।”

९. “माई बाप इससे ज़रा भी झूठ नहीं है पिछले साल तो चद्दर बच भी गए थे। किंतु इस साल देर को देखो, आग देवता ने एक कील भी बाक़ी नहीं छोड़ी। घर का एक दाना भी

नहीं बचा।"

१०. "हुज़ूर, माई बाप, कृपा, हो तो हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं। "साहेब, अब इस बस्ती में नहीं रहा जाता। पानी लाने के लिए सबको दूर-दूर जाना पड़ा है। एक कुआँ सरकार ने बहुत पहले बनवाया था। कैसे तो अदंर से ईटें गहरा गयी कि धीरे-धीरे पूरा पानी कीचड़ हो गया। ई चापाकन भी टूट पडा है, कहीं कोई सूपवाई नहीं, सरकारी दफ्तर में देते-देते गोड़ टूट गए। आप तो दयावान है, कुछ पानी का इतंज़ाम हो जाता तो बस्ती के लोग असीस देते।"

११."चाची तुम्हारा हृदय तो गंगा मैया सा साफ़ है। लेकिन ससुरे ये जमाने का साफ़ नहीं है। ठेट काला ससुरा । रप्ति मा कोऊ आई गवा तो का कहि है वहि चौबे घर माँ हैं नहीं। इ नीच जाति ससुरा चरिया भीतर सोवत। बबुआ बीमार है ई कोऊ नाहिं सूचि है। बहि तो दूसरी बात ही सूचि है। वनि हमरे सूचि है। वनि हमरे संग तुमका भी समिलि है।"

१२."कहाँ मर गए थे भोसड़ी के....तड़के से ढूंढ़- ढूंढ़ के गोड्डे टूट गए हैं । और इब आ रहे हो महाराजा की तारियों....इस बैल को कौन उठावेगा....तिम्हारा बाप...."

१३. उपर्युक्त उद्धरणों को देखने से यह ज्ञात होता है कि- इन कहानियों के लेखक संवादों में मानक भाषा के स्थान पर बोलीगत प्रयोगों को प्रमुखता देते हैं। इससे संबंधित पात्र के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का चित्र पाठक के समक्ष सहज ही उभर जाता है। क्योंकि ये सारी चीज़ें किसी भी व्यक्ति के भाषा द्वारा ही पहचानी जाती है। इस बोलीगत प्रभाव की चर्चा इसी अध्याय मे की जाएगी। यहाँ इतना कह देना पर्याप्त है कि दलित कहानियों की भाषा तद्भवीकरण ये तेज़ीपन की ओर बढ़ती हुई भाषा है।

इससे हिंदी कहानी की भाषा को उच्चारित भाषा का एक नया मुहावरा मिला है। हिंदी कहानी में एक ओर तो नगरीय परिवेश की तत्समीकृत कथा-भाषा मिलती है। दूसरी ओर अचंल विशेष तक सीमित आचंलिक भाषा प्राप्त होती है। दलित भाषा इन दोनों से अलग है। उसमें जो साधारणता है उसका कारण ही यह है कि ये लेखक संस्कृत

प्रधान शैली से बचते ही है, गूढ आचंलिकता से भी बचते हैं।

## बोलीगत शब्दावली :

दलित कहानियों में समाज के असभ्य और अशिष्ट समझे जानेवाले वर्ग की पीडा और मनोभाव को व्यक्त किया गया है। इसीलिए इनकी भाषा में देशजता और बोलियों का प्रभाव सर्वथा उचित है। यहाँ इस तथ्य का उल्लेख किया जा सकता है कि भारत में संस्कृत नाटकों में स्त्री, ग्रामीण और अशिक्षित पात्रों के द्वारा संस्कृत के स्थान पर प्राकृत या अपभ्रंश में संवाद बोलने का विधान रहा है। दलित कहानियों के पात्र तो घोषित रूप में दलित है। इसीलिए उनकी भाषा में तद्भवता की प्रकृति का होना दलित तत्व के सर्वथा अनुरूप है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं- कबूतरी, बट्टे(बेटे) हरिया, दीपे (सूदीप), किसनी, रामाऔतार, ददुआ, बऊ, ससुरे बिरेमा, लहना गाँव, परेमा (प्रेम), रूपल्ली, किसना गिरधारी, कांशीराम, सिलिया (शैलजा), रामकली, नत्यू, कल्लन जाटक, श्यामा, रूपसिंह, भिखरिया (भिखारीलाल) श्योराज (सौराज), डालचंद, धरीक्षण सिंह, रामकिसुन, मुनुआ, शिवचरण, हरिचरण, हरखू, परबतिया, रामेसरिया (रामेश्वर), फुलव, थावर्य किशोरीलाल, मंगली, सुगिया लदूरिया, देवा, छीतर्या कासेल गाँव, मगली सुखदेव झोकटे, बबुआ, फिरतो, विलासी सिंह, सिपाईया, भरते, कमला, उतरो निर्मल लाल, जमना, गानसू आदि ।

## ५.२ मुहावरे और लोकोक्तियाँ :

साधारण भाषा की एक बड़ी विशेषता यह होती है कि उसमें लोक के भाषा व्यवहार में दैनिक वार्तालाप काम में आनेवाले मुहावरे और लोकोक्तियों का सहज प्रयोग मिलता है। आज जबकि इस बात पर प्राय: चिंता व्यक्त की जाती है कि नगरीय परिवेश के दबाव में भाषा में से मुहावरे और लोकोक्तियाँ जैसे तत्व ग़ायब होते जा रहे हैं। यह एक अत्यंत शुभ संकेत है कि दलित साहित्य में खड़ीबोली मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग सफलता के साथ किया जा रहा है। इसका कारण यह है कि दलित कहानीकार समाज के

जिस सबसे पिछड़े अर्थात् दलित वर्ग से आए हैं वहाँ से उन्हें लोक भाषा का ठेठ प्रयोग झूले पालने की भाषा के रूप में मिला है। विवेच्य कहानियों में उपलब्ध मुहावरे और लोकोक्तियों के उदाहरण इस स्थापना के प्रमाण के रूप में देखे जा सकते हैं-

## मुहावरे :

१. ख़ुशी पर धुंध फैलना (पच्चीस चौका डेढ़ सौ , पृ सं , २७)

२. आँखों के सामने अँधेरा छाना (अपना गाँव , पृ सं , ३४)

३. कलेजा मुँह को आना (अपना गाँव , पृ सं , ३४)

४. दिमाग़ ठिकाने आना (अपना गाँव , पृ सं , ३०)

५. मन भारी हो जाना (अपना गाँव , पृ सं , ५०)

६. आँखें फटी की फटी रह जाना (प्रतिशोध , पृ सं , १०७)

७. बलि का बकरा बनना (प्रतिशोध , पृ सं , १११)

८. चुप्पी साधना (सुमंगली , पृ सं , ११७)

९. ईटं का जवाब पत्थर से देना (सुमंगली , पृ सं , ११८)

१०. पहाड़ की ज़िंदगी गुज़ारना (सुमंगली , पृ सं , १२०)

११. वज्रपात होना (सुमंगली , पृ सं -१२०)

१२. डर से गठरी होना (फुलवा , पृ सं , ९६)

१३. फूलि न समाना (फुलवा , पृ सं , ९६)

१४. ख़ुशी के डैन फैलना (फुलवा , पृ सं , ९६)

१५. चाँच चुभलाना (फुलवा , पृ सं , ९८)

१६. चुल्लू भर पानी में डूब मरो (फुलवा , पृ सं , १०१)

१७. कोल्हू के बैल की तरह जुते रहना (आस्थियों के अक्षर , पृ सं , ७३)

१८. नथुने फूल जाना (लटकी हुई शर्त , पृ सं , ७८)

१९. डूबते को तिनके का सहारा (लटकी हुई शर्त , पृ सं , ८२)

२०. नज़रों में तैरना (सिलिया , पृ सं , ६४)

२१. सोते से जाग जाना (साज़िश पृ सं , ६९)

२२. गहरी नज़र से देखना (वैतरणी , पृ सं , ११४)

२३. कलेजे पर पत्थर रखना (भूख , पृ सं , १२२)

२४. भूख की आग में दफ़न होना ( भूख , पृ सं , १२३)

२५. मुँह काला करना (अगांरा , पृ सं , १४२)

२६. हिम्मत बँधना (अगांरा , पृ सं , १४३)

२७. मौत को गले लगाना (अगांरा , पृ सं , १४५)

२८. सीना ठोकना (अगांरा , पृ सं , १४५)

२९. दिल पसीजना (सुरंग , पृ सं , १५२)

३०. चिनगारी फैलना (सुरंग , पृ सं , १५३)

३१. ज़हर फैल जाना (सुरंग , पृ सं , १५४)

३२. पूँछ उठाकर देखना (दलित ब्राह्मण , पृ सं , १६१)

३३. बुद्धि का दिवाला होना (दलित ब्राह्मण , पृ सं , १६२)

३४. धरती को धकेलना (दलित ब्राह्मण , पृ सं , १६३)

## लोकोक्तियाँ :

१.पानी में रहकर मगरमच्छ से कब तक बैर (अपना गाँव , पृ सं , ३३)

२.नक़ली गूँगे हाथ में चाँदी का जूता लेकर चलते हैं (दलित ब्राह्मण , पृ सं , १६)

३.बूढ़े तोते रात की गैस्बत्ती की रोशनी में रामागाति तोतिया पढ़ते थे (जंगल में आग,पृ सं ,१२५)

४.रामेश्वर ने विवशता में डूबी साँस भरी, दूसरी जात की गाय, भैंस, बकरी जब बाभन के घर आ जाती है तो आभनी बन जाती है। रात निकाल रामेश्वर (फुलवा , पृ सं , १०५)

५.उसने सोचा कि जब लोहा गर्म है तो क्यों न हथौड़ा मारा जाए (साज़िश , पृ सं , ६७)

६.अरे परबातिया! कहीं राख में फूल खिलते हैं भला? (हरिजन , पृ सं , ८९)।

## ५.३ गालियों का प्रयोग :

भाषा स्वयं में सामाजिक यथार्थ है। इसीलिए साहित्यिक भाषा में समाज की वास्तविकताओं को प्रस्तुत करते समय उच्चरित भाषा मे प्राप्त गालियों का प्रयोग भी यथार्थ चित्रण के अगं के रूप में कहानियों में उपलब्ध होता है। एक ओर तो यह कहा जा

सकता है कि अशिक्षित होने के कारण दलितों की भाषा में गालियाँ स्वाभाविक हैं। परंतु तीसरी और महत्वपूर्ण बात इन कहानियों की भाषा के विवेचन से सामने आयी है कि दलितों का गालियाँ देना कम है, और गालियाँ खाना अधिक। वह उच्च वर्ण की दृष्टि में गाली खाने का ही पात्र है। इस संदर्भ में कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं।

## दलितों को दी गई गाली-

१)"अबे! चुहड़े के, आगे बोलता क्यों नहीं? (पच्चीस चौका डेढ़ सौ , पृ सं , २५)

२)"सालो डेढ़-चमारो! हमसे सीना जोरी हमें ही आँखे दिखाते हो" (अपना गाँव , पृ सं , ३०)

३)"स्साली पमारी ठाकुर से जबान लड़ाती है" (अपना गाँव , पृ सं , ३४)

४)भाभी! अगर उसने मुझे कुछ कह दिया तो फिर देख दराती से गन्ने सा कातकर रख दूँगी हरामख़ोर को। गाँववाले देखते रह जाएगें।" (अतिंम बयान , पृ सं , १३६)

५)तू चिंता मत कर जमना! धिक्कार है मुझे जो मैंने इनसे तुम्हारी हज्जत का बदला नहीं लिया। मैंने माँ को वचन दिया है। वह भी इसी मुसीबत की मारी है। मैं इन पापियों-चांडालों को बता दूँगा कि अछूत ग़रीब की भी इज़्जत होती है और वह भी इज़्जत से जीना जानता है। इज्ज़त केवल इनकी ही बपौती नहीं है।" (अगांरा , पृ सं , १४४)

६)वो घोंचू क्या कर रहा था, इसीलिए ग़ुस्सा आ रहा है मुझे। साले ने बिना फ़ाईल स्टडी किए हस्ताक्षर कैसे कर दिए? इनका वश चले तो बेच डाले केवल अपने स्वार्थ के लिए दलित ब्राह्मण -१६३

७)"एक चमरे की यह हिम्मत ठहर तुझे अभी बताता हूँ कि हमसे जवाब लड़ाने का अजांम क्या होता है।" (अगांरा , पृ सं , १४५)

८)क्यों बे साले चमरे! तेरी हिम्मत कैसे हुई यहाँ चाट लगाने की। हम लोग तो समझदार

हैं तो क्या जाएगें। (चतुर चमार की चाट , पृ सं -१३४)

९)"हूँ..हूँ.. मेरा बेटा। छिनाल पतुरिया। ऐसी बात मुँह से निकली मुझे बदनाम करती है। ख़बरदार जो दुनिया की गंदगी को मेरे मुँह पर फेंकने कि कोशिश की" (सुमंगली , पृ सं , ११९)

१०."कैसे चोंच चुभला रही फूलवा की बच्ची।" (फूलवा , पृ सं , ९८)

११)साले आए चुहड़े चमार पढ़ लिखकर व्यापार करने! बैंक उधार लेकर ट्रांसपोर्ट का धंधा करेंगे। व्यापारी बनेंगे। ट्रेंड चेंज करेंगे। (साज़िश , पृ सं -६७)

१२)दीवान जी लाना ज़रा मेरा डंडा। इन साले चमारों के होश ठिकाने लगाने होंगे। (अपना गाँव , पृ सं , ४४)

## दलितों द्वारा दी गई गाली :

१)"हरखू ज़रा जा के उस हरामज़ादे को उठा लावे तो भाई, पूरा गाँव तो उस पटू को जानता ही है, बाहर के इन बारातियों के सामने मेरी नाक कटा रहा है।" (लटकी हुई शर्त , पृ सं , ७९ ८०)

२)"ससुरी ने एक रूपया चराके अपनी आदत एक की है। अरे ससुरी हम सारे बड़े से बड़े तुरम खाँ की जेब में से निकाल लाए। तुने हमारी जेब में हाथ डालो मत उठाओ ढारी को।" (अस्थियों के अक्षर , पृ सं , ७५)

## ५.४ सादृश्य विधान :

दलित कहानियों में आमतौर पर सरल भाषा का प्रयोग किया गया है। इस भाषा का प्रयोग साधारण पाठक के लिए भी सहज संप्रेषणीय है। इन कहानियों के पात्र प्राय: प्राचीन परिवेश से संबंधित हैं। गाँव के पिछड़े और अनपढ़ दलित जन ही इनके पात्र हैं। इसीलिए ग्रामीण सुलभ भाषा के साथ-साथ लेखकों ने वातावरण भी गाँव का ही लिया है। भाषिक अभिव्यंजना को अधिक मार्मिक बनाने के लिए इनमें तुलना की सहायता से

यथार्थ को अधिक प्रभावशाली रूप में चित्रित किया गया है। उन्होंने ग्रामीण जीवन से ही उपमान चुने हैं। विवेच्य कहानियों से ऐसे कुछ अशं निम्नलिखित हैं-

१)'गिरगिट की तरह रंग बदलना कोई आप लोगों से सीखे।'१

इस कथन में उच्च वर्ण के विश्वासघाती स्वभाव की गिरगिट के रंग से तुलना की गई है जो पल पल बदलता है।

२) सबकी आँखों के सामने कबूतरी का शरीर बर्फ़ की तरह पिघलने लगा। "कपड़े पहनने के बाद भी उसे अपना शरीर नंगा ही महसूस हो रहा था।"

३) "हिरणी की तरह दौड़ने लगी थी।"२

यहाँ कहानीकार ने एक स्त्री के बेइज्ज़ती पर उसकी दशा का वर्णन किया है। शरीर का बर्फ़ की तरह पिघलना अस्मिता के नष्ट होने का द्योतक है तथा अपनी इज्ज़त बचाने के लिए वह 'हिरणी' की तरह दौड़ी- इसमें उसकी बेबसी का चित्र है। इससे ठाकुरों की क्रूरता का पाशविक दृश्य पाठक की आँखों के सामने उभरने लगता है।

४)"कंडक्टर का तोंदियन शरीर कपड़े फाड़कर बाहर आने को छटपटा रहा था। बनैले सूअर की तरह उसके चेहरे पर पान से रंगे दाँत, उसकी भव्यता में इज़ाफ़ा कर रहे थे। सुदीप को लगा जंगली सूअर बस की भी में घुस आया है।"३

यहाँ कहानीकार ने कंडक्टर के विकृत रूप का वर्णन किया है तथा जंगली सूअर से उसकी तुलना की हैं। कंडक्टर क्रुद्ध होकर एक ग्रामीण पर चिल्ला रहा था। इसे देख सुदीप को अपने बचपन के दिनों की याद आती है। यहाँ पुन: कहानीकार ने कंडक्टर की तुलना गाँव के बेरहम ठाकुरों से की है।

५)"मेरी माँ क़साई द्वारा काटी जा रही 'गाय' की तरह ज़ोर-ज़ोर से चीख़ रही थी।"

यहाँ अत्याचार सह रही स्त्री की तुलना क़साई द्वारा काटी जा रही गाय से की गयी है। यह सादृश्य विधान अत्यंत बेधक बन पड़ा है।

६)गंगाराम अपनी छत पर टहलता हुआ विगत इतिहास की तरह पूरे इलाक़े को देखता

जाता है। और सोचता जाता है।"४ यहाँ इलाक़े (मूर्त) की तुलना विगत 'इतिहास' (अमूर्त) से की गई है।

७)"अरे परबातिया। कहीं राख में फूल खिलते हैं भला। वह हरिजन कैसे पढ़ सकता है? हमारे वेदों में हरिजनों को वेद, पुराण सुनने की भी मनाही है पढ़ने की बात तो दूर रही....।"५

इसमें असंभवता की तुलना की है। राख में फूल का खिलना न के समान है। उसी तरह हरिजन का वेद पुराण सुनना सतही है तो फिर पढ़ने की बात कैसे करें। वक्ता ने 'हरिजन' और 'शिक्षा' की तुलना क्रमश: 'राख और फूल' से की है।

## हिंदी दलित कहानियों की भाषा-शैली

कहानी विधा की पहली शर्त रोचकता, पठनीयता तथा संप्रेषणीयता है। कहानी में मानवीय संभावना ही उसकी विश्वसनीयता का आधार होती है। जीवन में होने वाली घटनाओं में संयोग का भी स्थान होता है और आकस्मिकताएँ भी होती है। कहानी विभिन्न वर्गों तथा मानसिक ऊहापोहों की जटिलता का मानस स्वरूप होती अपने बृहत्तर विन्यास होती है। इसलिए भाव प्रसंग कथानक तथा चरित्र के अनुसार कहानी के प्रतीक और संकेत, बिम्ब तथा रूपक आदि जीवन की परिस्थिति, पात्रों की मनःस्थिति और कहानी की केन्द्रीय अनुभूति को व्यंजित करनेवाले होना चाहिए। इनके आभाव में वे अनावश्यक अलंकरण तथा कहानी पर बाहरी या ऊपरी बोझ की तरह हो जाते हैं।

दलित साहित्य का सौंदर्य वही निखरता है जहाँ साहित्यकार, धार्मिक रुढियों, सामाजिक अन्याय एवं विसंगतियों को प्रखर वाणी देता। उसका प्रस्तुतिकरण जिस सीमा तक सामाजिक एवं धार्मिक विद्रूपताओं के प्रति घृणा अथवा जुगुप्सा जागृत करने में सफल होता है। इसमें कलात्मकता का कोई आवरण ओढ़ा नहीं होता। छोटी-छोटी घटनाओं के लघुता के प्रति दृष्टिपात ज्वलंत सामाजिक समस्याओं वंचितों,

भूखों, बेघरों, फुटपाथ व झुग्गी झोपड़ियों में निवास करनेवालों, पेट की भूख में जलते श्रम से बोझिल दलितों, पुरुष के यातनाओं से कहराती नारियों, वर्ण व्यवस्था से उपजी अमानवीयताओं, शोषण के सभी रूपों, शोषकों के घुणित अमानवीय चरित्रों को उकेरना ही उसके साहित्य का उद्देश्य रहा है। साहित्य के माध्यम से वह समाज में हो रहे जाती भेद पर प्रकाश डालता है।

हिंदी दलित कहानियों में दलित समाज में हो रहे परिवर्तनों की आहट साफ सुनाई दे रही है, चाहे वह व्यक्ति के भीतर हो रहे हो या बाहर। दलित कहानी का प्रभाव उसके सच की बेखौफ़ अभिव्यक्ति में है। दलित साहित्य सामाजिक बदलाव का दस्तावेज है। दलित साहित्य सृजन में चेतना की अपरिहार्यता व उपयोगिता आवश्यक ही नहीं बल्कि अपरिहार्य  है। दलित साहित्य में दलितों की अस्मिता एवं अस्तित्व का संघर्ष शब्दों के माध्यम से आकार पाता है। दलित साहित्य परंपरागत कलात्मकता से इतर अनगढ़ व अटपटे शब्दों में सामाजिक अन्याय के किलाफ़ विद्रोह का साहित्य है। दलितों का साहित्य वही निखरता है, जहाँ सदियों का संताप जो दलितों ने सहे है वह यथार्थ अभिव्यक्ति पाता है। दलित साहित्य के सौंदर्य में काल्पनिक रोमांटिक, रंगीनियाँ नहीं अपितु घटनाओं का खुरदरापन अपने यथार्थ रूप में प्रस्फुटित होता है। यहाँ कोमल और मधुर शब्दों का प्रयोग न होकर सीधी सपाट प्रभावोत्कर्ष पूर्ण अभिव्यक्ति होती है। यहाँ जो कुछ सामने है पूर्ण रूप में नग्न और यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति पाता है।

दलित कहानिओं में नये अनुभव, अलग जनभाषा, विद्रोही विचार, आक्रमक स्वरूप की अभिव्यक्ति, विषमता का निषेध आदि को व्यक्त किया गया है। पवित्रता और अपवित्रता की भ्रामक कल्पनाओं को इस प्रकार कहानी में बुनकर प्रस्तुत किया है जो दिल को दहला देती है। अपने आपको श्रेष्ठ मानकर सवर्णों को दुयम स्थान देते है इसकी अभिव्यक्ति सम्पूर्ण कहानियों में किसी न किसी रूप में परिलक्षित होती है। दलितों की

गाथा किसी एक व्यक्ति की न होकर प्राय पूरे समाज की कथा बन जाती है, लेखक तो व्यक्ति को बस अपने सन्दर्भ, अपने अंदाज, अपनी शैली अपनी भाषा में पूरे समाज को पाठक वर्ग के सामने रूबरू खड़ा कर देता है, जिसमे पूरी व्यवस्था और उसका इतिहास भी झांकता है और आज के परिवेश में भविष्य की आकाक्षाएँ जन्म लेती है ।

जिस प्रकार समाज के कई पहलू है उसी प्रकार शोषण के अनंत रूप है तथा प्रत्येक लेखक का अभिव्यक्ति का माध्यम, लिखने का ढंग, अंदाज, शैली और भाषाएँ अलग-अलग होती है। समाज में व्याप्त रोजमर्रा के शब्द नया अर्थ ले चमक उठते हैं और तलवार की धारा की तरह तीक्ष्ण वार करने के लिए तैयार रहते हैं। दलित कहानीकारों ने अपनी कहानिओं में काल्पनिकता को न अपनाते हुए यथार्थ के धरातल पर अपनी रचना अंकित की है। इसमें ऐसे वाक्यों का प्रयोग किया है जिससे साफतौर पर यह ज्ञात हो जाता है कि दलित समाज खुले मन से प्यार करना, प्यार देना, आदर पाना और आदर देना चाहता है। दया नहीं करुणा भी नहीं वह अपने मनुष्यता और समानता के ओचित्य की स्वीकृति चाहता है।

कथा सम्राट प्रेमचंद जी ग़ैर दलित होकर भी 'ठाकुर का कुआँ' जैसी दलित चेतना से ओतप्रोत रचना को अपनी लेखनी के माध्यम से उकेरा है । दलित प्रभावी कहानीकार ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने बैल की खाल, सलाम इन कहानियों में किसी भी वाद विवाद से हटकर तथा किसी जाति धर्म के प्रति घृणान रखते हुए दलित जीवन की विद्रूपताओं का जितना प्रभावशाली चित्रण है वह अन्यत्र दुर्लभ है। उनका शिल्प किसी भी हिंदी कथाकार की तरह मजा हुआ एवं पूरी तरह परिष्कृत है। उनकी कहानियों में दलितों के साथ समाज में हो रहे अंतर्द्वन्द्वों के साथ उनके आतंरिक द्वंद्वों का भी बैखौफ चित्रण हुआ है।

बैल की खाल कहानी में वाल्मीकि जी ने यह चित्रित किया है कि किस प्रकार

काले और भूरे मारे जानवरों की खाल को उठाने का काम करते हैं। तथा सवर्णों की गालियाँ भी खाते हैं। अपनी कहानी के माध्यम से उन्होंने ख्यालों की धारा को प्रवाहमान किया है। जिसमें उन्होंने भूरे और काले को यह सोचने पर मजबूर किया है कि अगर वे पढ़े-लिखे होते तो उन्हें यह काम नहीं करना पड़ता। शिक्षा की महत्ता का सन्देश इस कहानी में प्रस्तुत है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' यह कहानी संवेदना भाषा तथा संकल्प स्तर पर बहुत ही सक्षम है। आक्रोश उगलती यह कहानी दलित चेतना को विकास में बहुत आगे ले जाती है, वाल्मीकि जी ने सवर्ण वर्ग के खोखलेपन, उनकी झूठी सोच को बड़ी कुशलता से अभिवक्तकिया है। यह कहानी बाबासाहेब अम्बेडकर के शिक्षा के मंत्र को उजागर करती है। शिक्षा के कारण ही पच्चीस चौके डेढ़ सौ को पच्चीस चौके सौ साबित किया। बूढ़े पिता का वह आक्रोश दलित पीढ़ी को विद्रोह के कगार पर खड़ा कर देता है जयप्रकाश कर्दम जी की नो बार कहानी उनके रचनात्मक विकास को दर्शाती है। उनकी रचनात्मक क्षमता का निरंतर विकास हो रहा है। निजी अनुभव किस प्रकार कलात्मकता के स्तर पर पहुँचते है और अनुभव अनुभूति में ढल किस प्रकार विश्वासनीय और वास्तविक धरातल पर प्रस्तुत होते है, यह इस कहानी में देखा जा सकता है। आधुनिक समाज में प्रगतिशील और लोकतांत्रिक मूल्यों का समर्थन करने वाले उस आधुनिक परिवार का केंद्र में रखकर कहानी का ताना-बाना बुना गया है जो जाति-पाति, संप्रदाय आदि में किसी भी बंधन को पिछड़ेपन का प्रतीक मानता है और ब्राह्मण होकर कायस्थ, अग्रवाल तथा खत्री में वैवाहिक संबंध जोड़ सकता है, पर चमार चूहड़े से नहीं। जबकि मैट्रिमोनियल में नो बार छपवाया था और शिक्षित नौकरीपेक्षा राजेश ने उसी आधार पर वैवाहिक संबंधों की बात चलायी थी। जब बात विवाह तक पहुँच गई तो अचानक जाति बीच में आगई। लड़की के बाप की दृष्टि में नो बार का अर्थ दूसरा ही है।

वह तर्क देता है वह सब तो ठीक है कि हम जाती पाँति को नहीं मानते और हमने मैट्रिमोनियल में नो बार छपवाया था, लेकिन फिर भी कुछ चीजें देखनी पड़ती हैं आख़िर 'नो बार' का मतलब यह तो नहीं किसी चमार, चूहड़ के साथ। जब ऊँची जातियों के लिए नो बार का मतलब कायस्थ, अग्रवाल तथा खत्री ही होता है कोई चमार, चूहड़े नहीं तो फिर प्रगतिशीलता का ढोंग क्योंकिया जाता है क्योंकि वे ब्राह्मणवादी संस्कारों के हैं। कहानीकार ने ऐसे ही आधुनिक विचारों वाले समाज के लोगों के वास्तविक चरित्र का पर्दाफाश किया है बिना लाग-लपेट और आदर्शवाद के। इसमें कहानीकार ने एक रहस्यात्मक दृष्टिकोण अपनाया है जहाँ कहानी के अंत में यह पता चलता है कि वह निम्न जाती का है। इस समाज में दिखावा और ढोंग करनेवाले लोगों का अंकन लेखक ने अत्यंत सजग रूप से अभिवक्त किया है।

मोहनदास नैमिशराय एक प्रतिबध्द दलित कथाकार हैं। उनकी कहानियों पर उनका पत्रकार व्यक्तित्व हावी रहता है और कही न कही यह कहानियाँ रपट बनने से नहीं बचपाती, लेकिन उनकी कहानियों में परिवतर्न की आहटे साफ़ सुनाई देती है और उनमे उपदेश भी निहित रहता है। शिल्प साधना के दौर से गुज़र कर शायद ही वे इससे मुक्ति पा जाएँ। मोहनदास जी ने 'महाशुद्र' कहानी में समाज के उस अंतर्विरोध की ओर पाठकों का ध्यान खीचा है जहाँ ब्राह्मण भी अपनी जाति भेदभाव को बड़ी शिद्दत से महसूस करता है। अनोखे शिल्प को अपनाते हुए उन्होंने आचार्य को वाही दुःख-दर्द सहते हुए अंकित किया है जो दलितों ने सदियों से भोगा है। इसमें कहानीकार की दूरदृष्टि झलकती है, पात्रों का चयन करते हुए उन्होंने दो विपरीत दलों को आमने-सामने रखा है। उन्होंने दलित और ब्राह्मण के संघर्ष को इस प्रकार अंकित किया है कि कहानी पढ़ते समय वह आँखों के सम्मुख अवतरित हो जाता है।

रीति इस कहानी में हमेशा एक स्त्री ही किस प्रकार शोषण का शिकार होती है वह चाहे दलित हो या सवर्ण इस पुरुष प्रधान समाज उसे स्वतंत्र रूप से जीने नहीं देता।

समाज के  खोखलेपन को उन्होंने मुख्य विषय के रूप में पिरोया है। एकता के महत्त्व का सन्देश देते  हुए सकरात्मक सोच अपनाने को पाठक वर्ग से निवेदन करते हैं । सलाम कहानी में कमल एक ब्राह्मण है अपने मित्र हरिश की शादी में आया था। चाय की दुकान पर रामपाल से उसकी बहस हो जाती है। परिस्थिति इतनी गंभीर हो जाती है कि रामपाल गाली गलोज का प्रयोग करता है। इन गालियों के माध्यम से चुहडो के प्रति उनकी निकृष्ट दृष्टि परिलक्षित होती है जिसे वाल्मीकि जी ने सजग रूप से चित्रित किया है। कहानीकार ने कुलीन भाषा का प्रयोग नहीं किया है दलित जीवन के खुरदरेपन को अभिव्यक्ति दी है। स्थिति को और भी आकर्षक, और अनिभुतियों से जुड़ाव के लिए वे गाली-गलोज का प्रयोग करने में संकोच नहीं करते । दलित साहित्य में शब्दों का लालित्य, प्रेम का अवसाद, कोरा रोमांस, आध्यात्मिकता के रासरंग, अलंकारो की दिमागी कसरत का  अभाव है। जिसमें सिर्फ़ यातना, त्रासदी से उपजे गरम सुलगते सवाल एवं सशक्त साहित्यिक हस्तक्षेप।

'यह अंत नहीं' कहानी में ओमप्रकाश जी ने पोलिस व्यवस्था और पंचायत किस प्रकार गाँव के लोगों का शोषण करती है। परिस्थितियों से मजबूर होकर वह जान देने की सोचती है पर अंत में ऐसा न कर वे अपने आत्मसम्मान के लिए लढाई लढ़ते हैं। इस कहानी में परिस्थितियाँ ही बिरमा को अन्याय के ख़िलाफ़ लढ़ने की ताक़त देते है। अपनी लेखनी के माध्यम से दलित नारियों में प्रतिशोध की भावना हार को जीत में बदलने का विश्वास पैदा करते है। यह कहानी दलितों में प्रतिशोध को नई दिशा देती है।

इन कहानियों के भाषिक सौंदर्य का पहलू यह है कि इनमें अप्रस्तुत विधान वास्तविकता का बोध लिए हुए हैं। इसी प्रकार विविध स्थितियों, पात्रों और मनोभावों के विवरणों में भी दलित वातावरण और दलित मानसिकता का प्रभावशाली अकंन हुआ है। इन लेखकों ने मिथकों की नई व्याख्या की है और सवर्ण जीवन शैली और मानसिकता पर व्यंग्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए उन्होंने गालियों के चयन में भी कोई संकोच नहीं किया है।

अतः कहा जा सकता है कि दलित कहानी की कथा भाषा पूर्णतः दलित सौंदर्यशास्त्र के अनुरुप है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र दलित कथा भाषा के इन विशेषताओं के आधार पर ही निर्मित किया जा सकता है जिसमें लालित्य के स्थान पर दलित की प्रमुखता है।

दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता की भाषा में कही गयी हैं। इनमें ज़्यादातर पात्र अशिक्षित मज़दूर और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है। दलितों की भाषा तो अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके साहित्य में यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। उसमें अधिक रूप से बोली के शब्दों का प्रयोग हुआ है। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ये कहानियाँ पिछड़े गाँव में रहनेवाली जनता की कहानियाँ हैं। दलित कहानियों के भाषा पक्ष पर विचार करने की सही दृष्टि यही हो सकती है। सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग इनमें प्रचुरता से किया गया है।

## सन्दर्भ सूची :


१. दयानंद बटोही - सुरंग , दलित कहानी संरचना - पृ सं - ७०.

२. मोहनदास नैमिशराय - अपना गाँव, दलित कहानी संचयन - पृ सं - २९

३. ओमप्रकाश वाल्मीकि - दलित कहानी संचयन - पृ सं - २२.

४. प्रह्लाद चंद्रदास - लटकी हुई शर्त - दलित कहानी संचयन - पृ सं - ८९.

५. प्रेमकपाडिया – हरिजन, दलित कहानी संचयन - पृ सं - ८९.

# उपसंहार

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती आ रही है। समाज में जब सामाजिक व्यवस्था अव्यवस्थित होना शरु होती है तब उसको व्यवस्थित बनाये रखना साहित्यकारों का मूल लक्ष्य होता है। साहित्यकारों का समाज के साथ सरोकार होने के कारण वह अपने साहित्य में सामाजिक कुरीतियों को याने सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी पहलुओं को कृतिबद्ध करना शुरू करता है।

दलित साहित्य लिखनेवालों में दो पक्ष हम देख सकते हैं, एक है दलित साहित्यकार और दूसरा ग़ैर दलित साहित्यकार। दलित साहित्यकार, ग़ैर दलित साहित्यकारों को दलित रचनाकार नहीं मान रहे हैं। इसका मूल कारण यह है कि दलित साहित्यकार का विचार है ग़ैर दलित साहित्यकार दलित लोगों के जीवन को दूर से महसूस करते हैं। लेकिन दलित साहित्यकार अपने में भोगे हुए निजी घटनाओं और अनुभवों को शब्द बद्ध करते हैं। इस प्रकार उनके लेखन में सच्चाई ज़्यादा होने के कारण ग़ैर दलित साहित्यकारों को कम मान्यता दे रहे हैं।

दूसरा, पक्ष देखे तो सवर्ण लोग दलित साहित्यकारों से लिखित साहित्य को न मानते हुए उस साहित्य को ग़लीज़ साहित्य कहकर श्रेष्ठ साहित्य के पक्ष से दूर रखने का ढोंग रचा रहे हैं। दुःख दर्द और उन पर हो रहे अत्याचार, शोषण, संघर्ष आदि के वास्तविक और निहित सत्य को उपेक्षित किया जा रहा है। दलित साहित्यकारों ने अपने जीवन काल में जो अनुभव प्राप्त किये हैं, उसी को साहित्य के विभिन्न प्रकारों में से अपने मनपसंद प्रकार को अपनाते हुए दलितों के विरुद्ध किये जा रहे अत्याचार, अन्याय समाज में प्रचलित तुच्छता की भावना, असमानता आदि अनेक विषयों पर साहित्य रचा जा रहा है।

प्रथम अध्याय- के अंतर्गत दलित शब्द की व्याख्या, दलित साहित्य की परिभाषाएँ, दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करते हुए दलित साहित्य के स्वरूप की चर्चा की गयी है।

'दलित' शब्द के अर्थ के संदर्भ में दो मत प्रचलित हैं। प्रथम अर्थ संकुचित है, दूसरा व्यापक अर्थ में प्रयुक्त है। संकुचित अर्थ धार्मिक ग्रंथ, सामाजिक व्यवस्था आदि से उत्पन्न है, जिसके अतंर्गत चतुर्थ वर्ण (शूद्र) में आनेवाली जातियों को आधार बताया जाता है। जबकि व्यापक अर्थ में ये उन सभी के लिए प्रयुक्त शब्द है, जिन्हें किसी न किसी प्रकार से दबाया गया हो, फिर चाहे ये किसी भी जाति, वर्ण या संप्रदाय से जुड़े हो।

दलित साहित्य का रुप बड़ा ही सुंदर और सजीव है इसके पीछे महान तपस्वी आधुनिक मनु डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर जी का हाथ है। दलित साहित्य तथा साहित्यकार सामाजिक शोषण पद्धति के विरुद्ध विद्रोह व्यक्त करता रहा। अस्पृश्यता, जातीयता, दैन्य जीवन में सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक, अन्याय का नाश करने वाला ही दलित साहित्य है। ऊँच-नीच, अन्ध-विश्वास, जातीयता आदि समस्याओं का घोर खंडन करके सुधार लाया गया है, वही दलित साहित्य है।

इस प्रकार 'दलित साहित्य' की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों द्वारा ही दी गयी हैं। लेकिन प्रचलित और मान्य परिभाषा जो मराठी दलित साहित्य में की जाती है, वह दलितों द्वारा, दलितों के संबंध में, दलितों के लिए लिखा गया ही दलित साहित्य है। इस साहित्य में रचनाकार वर्णवादी व्यवस्था में भोगे हुए सच के आधार पर यथार्थ की कलम से ज़िंदगी की कड़वाहट की इबारत सदियों से दबे आक्रोश के साथ उलीचता है।

दलित साहित्य क्षेत्र समय-समय पर अपनी दशा और दिशा में परिवर्तन, गति प्राप्त करते हुए एक नई आवाज़ के रुप में मुखरित हो रहा है जिसमें दलितों की पीड़ा, वेदना, आक्रोश और रुदन के यथार्थ को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है। साहित्य की हर विधा जैसे आत्मकथा के रुप को भी लिए दलित साहित्य की परंपरा विकसित हो रही है।

दलित साहित्य का स्वरुप अपने आपमें बड़ा ही सुंदर और आकर्षणीय बना है। इसके पीछे महान तपस्वी डॉ. बाबा साहब अबेंडकर का ही महत्वपूर्ण भूमिका रही है। दलित साहित्य में इन्ही विचारों के बारे में ज़िक्र है जो सामाजिक शोषण पद्धति के विरोध, विद्रोह व्यक्त करता है। अस्पृश्यता, दैनंदिन जीवन में सामाजिक विरोध आर्थिक, सांस्कृतिक अन्याय का नाश करनेवाला हथियार ही दलित साहित्य है।

दलित साहित्यकारों ने समय-समय पर समाज के उच्चवर्ग के लोगों ने निम्न वर्ग के ऊपर किये जानेवाले विभिन्न प्रकार के अन्यायों को कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा, कविताओं को माध्यम बनाकर सामाजिक बुराईयों का भेद खोला है। समाज में पीने का पानी और मंदिर प्रवेश को लेकर मानवीयता को नकारनेवाला हिन्दू धार्मिक परंपरा का विरोध तथा समानता का आविष्कार, नाटकों तथा अन्य साहित्यिक विधाओं के माध्यम से जनमानस में परिवर्तन लानेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है।

द्वितीय अध्याय – में समकालीनता का अर्थ एवं परिभाषा, समकालीन कहानी का क्षेत्र तथा समकालीन कहानी : युगीन सन्दर्भ को संक्षिप्त में परिचय देने की कोशिश की गयी है। काल के प्रवाह में अपने समय को पहचानना अपने समय के प्रति ईमानदार होना ही

'समकालीनता' की निशनी है। समकालीनता 'युग सन्दर्भों में प्रासंगिक तो होती ही है साथ ही आधुनिक जीवन मूल्यों से भी जुड़ती जाती हैं। समकालीन शब्द इस बात का सूचक है कि प्रस्तुत कला समसामयिक संदर्भों से जुड़ी हुई है, साथ ही यह युग, विशेष के संदर्भों के अनुसार बदली हुई चेतना या मानसिकता की भी द्योतक है। स्थायी जीवन मूल्यों की उपस्थिति के कारण यह कला काल की सीमाओं को भी छू जाती है। समकालीनता की इस परिभाषा के आधार पर समकालीन हिन्दी कहानी से हमारा तात्पर्य उस कहानी के क्रियाकलाप से है जिस में युगीन संदर्भों के अनुसार एक नयी कहानी का आविर्भाव भाव दिखाई देता है।

समकालीन कहानी जीवन की कौंध है, प्रतीति है एक विचार बोध है, परिवर्तित जीवन की साक्षी है, मानवीय सम्बन्धों में आये हुए बदलाव की सूचक है, पुरुष के मुक़ाबले में स्त्री जीवन की अस्मिता है वैसे भी समकालीन कहानी में प्रत्येक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना, हलचल और क्रिया कलाप का अवश्य भारी प्रभाव पड़ा है। कहानीकार जिस जीवन-परिवेश में रहता है, वह प्रत्येक दृष्टि से राजनीति से प्रभावित है। आधुनिक कहानी की मूलभूत विशेषता है यथार्थ के प्रति प्रतिश्रृति या प्रतिबद्धता।

समकालीन कहानी के विस्तृत परिप्रेक्ष में युगीन संदर्भ अपने विभिन्न कोणों, रुपों, तथा अभिप्रायों में झिलमिलाते हैं। मानवीय जीवन में व्याप्त विषमताओं और विसंगतियों के प्रति पीड़ा और आक्रोश का भाव परिलक्षित होता है। समाज में व्यक्ति जन्म लेता है और वह खान-पान तथा निवास करता है। इसी प्रकार साहित्यकार भी समाज का एक सचेतन प्राणी, समाज के अन्य व्यक्तियों के समान ही होता है। परिवेश और साहित्य रचना के संबंध सूत्रों में कई जोड़ और मोड़ आना स्वाभाविक रहता है।

संक्षेप में कह सकते है कि समकालीन कहानी एक किशोर भावुकता की नज़रों से स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का रंगारंग चल चित्र भी है तो, कहीं भय आतंक विवशता, बुभुक्षा में जीते हुए स्त्री सम्बंधों का वांछित फैण्टेसी लोक भी है। जिसे हम विविध रचनाकारों की कलम से मूर्तिमान होते हुए देख सकते हैं।

तृतीय अध्याय- में दलित प्रमुख कहानीकारों का जीवन परिचय,प्रमुख रचनाएँ,पुरस्कार तथा उनकी कहानियों का संक्षिप्त परिचय व्यक्त किया गया है। मैंने समकालीन हिंदी दलित कहानीकारों में से प्रमुख रूप से बुध्द्शरण हंस, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ.सुशीला टाकभौरे, तथा डॉ.जयप्रकाश कर्दम, इन रचनाकारों को चुन है। इन कथाकारों ने काफ़ी प्रभावी ढंग से दलित विचारधारा को केंद्र में रखते हुए साहित्य की रचना की हैं। इनके साहित्य में दलित अस्मिता की पहचान होती है। इन पाँचों कहानीकारों की कहानियों के संक्षिप्त परिचय के साथ इस अध्याय में व्यक्त किया गया है।

हिंदी दलित साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार के रूप में बुध्द्शरण हंस जी को माना जाता है। इनके तीन कहानी संग्रह हैं 'देव साक्षी है' ,'तीन महाप्राणी' और 'को रक्षित वेदत्र' है। इन कहानियों के माध्यम से दलित विचारों को बहुत मार्मिक रूप से व्यक्त करने में कहानीकार बुध्द्शरण हंस सफल रहे हैं। हिंदी दलित साहित्य के प्रमुख लेखक के रूप में मोहनदास नैमिशराय जी को माना जाता है। इन्होंने 'आवाज़े' नामक कहानी संग्रह में कुल ग्यारह कहानियों का संकलन किया है। इनके कहानियों में समाज के खोखलेपन को यथासंभव पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया गया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'सलाम' और 'घुसपैठिये' इन दो कहानी संग्रहों में कुल २६ कहानियों को संकलित किया गया है। तमाम कहानियों में दलित सन्दर्भों से जुड़े हुए पहलुओं को व्यक्त किया गया है। उन्होंने दलित आन्दोलन से जुड़ी महिला लेखिकाओं में डॉ.सुशीला टाकभौरे जी का नाम उल्लेखनीय है दलित साहित्य को नया रूप दिया तथा दलितों में संघर्ष की चेतना को जगाया। दलित साहित्य के आन्दोलन से सम्बंधित अनेक कहानियों की रचना इन्होंने की है। इनके तीन कहानी संग्रह हैं, 'टूटता वहम' 'अनुभूति के घेरे' और 'संघर्ष' ये तीनों संग्रहों के माध्यम से दलितों तथा स्त्रियों से

जुड़े हुए विचारों को उजागर करने की कोशिश की है। हिंदी साहित्य में विशेष रूप से दलित लेखन क्षेत्र में सशक्त लेखक है डॉ.जयप्रकाश कर्दम जी। उन्होंने 'तलाश' नामक एक कहानी संग्रह की रचना की है। इन्होंने इस कहानी संग्रह के माध्यम से दलित संघर्ष और अस्मिता को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

इस अध्याय के अंतर्गत प्रमुख हिंदी दलित कहानियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। और समकालीन प्रमुख हिंदी कहानीकारों की लगभग सत्तर से भी अधिक कहानियों पर विचार-विमर्श किया गया है।

चतुर्थ अध्याय- के अंतर्गत जातिभेद के प्रति विद्रोह की भावना, प्रमुख हिंदी दलित कहानियों में अभिव्यक्त जातिभेद की भावना, शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता, शिक्षा के क्षेत्र में शोषण, आत्मविश्वास की कमी, आक्रोश का चित्रण, धार्मिक आडम्बरों में विश्वास, छुआ-छूत की समस्या, नई पीढ़ी में उभरते विद्रोह का चित्रण, नारी शोषण की समस्या, आर्थिक विपन्नता का चित्रण, दलित कहानियों में चित्रित नारी, स्वाभिमानी स्त्री, सुशिक्षित नारी और शोषित नारी इन सारे मुद्दों पर चर्चा करने की कोशिश की गयी है।

वैदिककाल से लेकर आज तक जातिप्रथा की व्यवस्था चलते आ रही है। आज विभिन्न क्षेत्रों में याने साहित्यिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, वित्तीय आदि क्षेत्र में बदलाव प्रगति हो रही है। लेकिन जाति व्यवस्था के अतंर्गत उतनी मात्रा में बदलाव नहीं आया है। आदमी किसी जाति में ही जन्म लेता है, जीवनयापन करता है और जाति के साथ ही मरता है। लेकिन मरने के बाद भी उनकी जाति नहीं मरती। इस संदर्भ में, हिंदू समाज व्यवस्था में जाति ऐसी चीज़ है जो इन्सान के जन्म के साथ ही जुड़ जाती है और वह इन्सान के मरने के बाद भी नहीं जाती है। इस वक्तव्य से यह पता चलता है सूरज जब तक रहेगा तब तक यह जाति व्यवस्था स्थिर रहेगी।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लोगों को इस व्यवस्था के कारण से कष्ट उठाना पड़

रहा है। जातिभेद के कारण ही हिंदू, इस्लाम लोगों में झगड़ा चलता है। उसी प्रकार सवर्णों से दलित लोगों को तरस खानी पड़ती है। ख़ास कर हिंदी दलित साहित्य में इस प्रथा के कारण होनेवाले समस्याओं का चित्रण अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। आधुनिक संदर्भ में, आदमी शिक्षा के कारण हर एक समस्या के प्रति विद्रोह की भावना अपनाता है। उसी प्रकार जाति प्रथा के प्रति भी इनकी विद्रोह की भावना तेज़ पकड़ती है।

भारतीय संस्कृति में नारी को श्रद्धा के समान माना जाता है। लेकिन आज वह श्रद्धा के स्थान पर भोग्या बन गयी है। नारी के आदर्शोन्मुख चरित्र जैसे आदर्श गृहिणी, आदर्श माता, आदर्श पत्नी आदि स्वरूप आज के साहित्य में मिल पाना मुश्किल है। समाज का उच्च वर्ग नारी को अपने भोग की वस्तु बनाये रखता है । सौंदर्य प्रतियोगिताएँ, स्त्रियों का नंगानाच, फ़ैशन परदे ये सब आज के समाज में मामूली बात बन गयी है। अमीर, आज स्त्री को मन चाहा काम करने के लिए मजबूर करते हैं, हर समस्या को पार करके कोशिश करके कुछ तो हासिल करना चाहते है, मगर इस पुरुष प्रधान समाज ने उस स्त्री का अधिकार और साहस का मज़ाक उड़ाते हुए उसे चार दीवारों के अन्दर बंदी बनाके रखा हैं ।

समाज में दलित महिलाओं का यौन शोषण तथा बलात्कार जैसे घटनाएँ आम बात हैं । ऐसी घटनाएँ होने पर स्त्री को ही दोष दिया जाता है । पुरुषों को निर्दोष माना लिया जाता है । ऐसी स्थिति में स्त्रियों को न्याय नहीं मिल पाता । सवर्ण पुरुष ने इन दलित महिलाओं पर अपना अधिकार चलाता रहता है । इस तरह वह शारीरिक और मानसिक रूप से स्वयं को बहुत ही कमज़ोर, अबला, निर्बल तथा असहाय मानने लगती है । लेकिन दलित स्त्री आज शिक्षा और आधुनिकता के कारण अपने स्वाभिमान को बरकरार रखने की कोशिश कर रही है । आज अनेक दलित साहित्यकारों ने अपनी कहानियों में स्वाभिमानी स्त्री को दर्शाना चाहते हैं ।

पंचम अध्याय- में सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग, बोलीगत शब्दावली, मुहावरे और लोकोक्तियाँ, गालियों का प्रयोग, दलितों को दी गई गाली, दलितों द्वारा दी गई

गाली इन विषयों को प्रस्तुत करते हुए सादृश्य विधान की चर्चा की गयी है। इस प्रकार हिंदी दलित कहानियों की कथा भाषा की जो विशेषताएँ उपर्युक्त सोदाहरण विवेचन, विश्लेषण से उभरकर सामने आयी है। उनमें सबसे प्रमुख तो यह है दलित कहानिकारों ने दलित जीवन के विषय यथार्थ को मारक अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए साधारण बोलचाल की भाषा को अपनाया है। इसके लिए उन्होंने जहाँ एक ओर देशज और बोलीगत शब्दों का चयन किया है, वही लोक जीवन में बहुप्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों का सफल प्रयोग किया है। इन कहानियों के भाषिक सौंदर्य का पहलू यह है कि इनमें अप्रस्तुत विधान वास्तविकता का बोध लिए हुए हैं। इसी प्रकार विविध स्थितियों, पात्रों और मनोभावों के विवरणों में भी दलित वातावरण और दलित मानसिकता का प्रभावशाली अकंन हुआ है।

इन लेखकों ने मिथकों की नई व्याख्या की है और सवर्ण जीवन शैली और मानसिकता पर व्यंग्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए उन्होंने गालियों के चयन में भी कोई संकोच नहीं किया है। अतः कहा जा सकता है कि दलित कहानी की कथा भाषा पूर्णतः दलित सौंदर्यशास्त्र के अनुरुप है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र दलित कथा भाषा के इन विशेषताओं के आधार पर ही निर्मित किया जा सकता है जिसमें लालित्य के स्थान पर दलित की प्रमुखता है।

दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता की भाषा में कही गयी हैं। इनमें ज़्यादातर पात्र अशिक्षित मज़दूर और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है। दलितों की भाषा तो अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके साहित्य में यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। उसमें अधिक रूप से बोली के शब्दों का प्रयोग हुआ है। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ये कहानियाँ पिछड़े गाँव में रहनेवाली जनता की कहानियाँ हैं। दलित कहानियों के भाषा पक्ष पर विचार करने की सही दृष्टि यही हो सकती है। सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग इनमें प्रचुरता से किया गया है।

## निष्कर्षत:

मुझे यह लगता है कि भारतीय साहित्य में सामाजिक परिवर्तन न्याय,ममता,यथार्थ,लौकिक और वैज्ञानिक प्रतिमानों को आधार मानकर तथा मनुवादि विचारधारा के विरुद्ध आक्रोश, दलित व्यवस्था, भोगे हुए यथार्थ, सामंती आतंक और अत्याचार का विरोध करता हुआ दलित साहित्य महत्वपूर्ण है। साहित्य के विधाओं में दलित चेतना प्रवाहित हुई है। दलित कथाकार अपनी कहानियों के द्वारा दलित साहित्य को एक मज़बूत आधार देने की कोशिश करते हैं।

# आधार ग्रन्थ


| क्रं सं | पुस्तक का नाम | लेखक | प्रकाशक पता व प्रकाशन |
|---|---|---|---|
| १ | सलाम | ओमप्रकाश वाल्मीकि | राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड७/३१अंसारीरोड,दरियागंज नई- दिल्ली-२११००१ |
| २ | घुसपैठिये | ओमप्रकाश वाल्मीकि | राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड७/३१अंसारीरोड,दरियागंज नई दिल्ली-२११००१ |
| ३ | हमारा जवाब | मोहनदास नैमिशराय | श्री.नटराज प्रकाशन,ए-५०७/१२ साऊथ गावंडी एक्सटेशन-दिल्ली -११००५३ |
| ४ | आवाजें | मोहनदास नैमिशराय | समता प्रकाशन दिल्ली-१९९८ |
| ५ | तीन महाप्राणी | बुध्दशरण हंस | अंबेडकर मिशन प्रकाशन,पाटना ००२-१९९६ |
| ६ | संघर्ष | डॉ.सुशीला टाकभौरे | शरद प्रकाशन-नागपुर-२००६ |
| ७ | टूटता वहम | डॉ.सुशीला टाकभौरे | शरद प्रकाशन-नागपुर-१९९७ |
| ८ | अनुभूति के घेरे | डॉ.सुशीला टाकभौरे | शिल्पायन प्रकाशन-२०११ |
| ९ | तलाश | जयप्रकाश कर्दम | विक्रम प्रकाशन-११/५,कृष्णानगर दिल्ली-११००५१ -२००५ |

# सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## सन्दर्भ ग्रन्थ


| क्रं सं | पुस्तक का नाम | लेखक | प्रकाशक का पता व प्रकाशन |
|---|---|---|---|
| १ | भारतीय दलित साहित्य एक परिचय | डॉ.टी.वी.कट्टीमनी | वाल्मीकि पब्लिशर्स नई दिल्ली-२००२ |
| २ | भारतीय दलित साहित्य का विद्रोह स्वर | प्रो.विमल थोरात, सूरज बदत्या | रावत पब्लिशर्स, नई दिल्ली-२००८ |
| ३ | स्त्री मुक्ति का सपना | महादेवी वर्मा | वाणी प्रकाशन,२१ ए, दरियागंज,नई दिल्ली, २००४ |
| ४ | दलित हस्तक्षेप | रमणिका गुप्ता | शिल्पायन,लेन,नं.१,वैस्ट गोरखपार्क,दिल्ली-२००४ |
| ५ | दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र | डॉ.शरणकुमार लिंबाले | वाणी प्रकाशन,२१ए, दरियागंज,नई-दिल्ली-२००० |
| ६ | दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र | ओमप्रकाश वाल्मीकि | राधाकृष्ण प्रकाशन प्र.ली ७/३१,अंसारीमार्ग,दरियागंज,नई-दिल्ली-२००१,२००९ |
| ७ | दलित कहानी संचयन | रमणिका गुप्ता | साहित्य अकादेमी,प्रधान कार्यालय,रविन्द्र भवन,३५,फिरोजशाह मार्ग,नई-दिल्ली २००६ |
| ८ | दलित पत्रकारिता के सामाजिक | रूपचंद गोतम | श्री.नटराज प्रकाशन,ए ५०७/१२ साउथ गावंडी ए,दिल्ली-२००७ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | सारोकार | | |
| ९ | दलित समाज की लघु कथाएँ | | अरावली प्रकाशन जयपुर-२००८ |
| १० | भारतीय दलित साहित्य | प्रो.भीमसेन निर्मल डॉ.वी.कृष्ण | हिंदी प्रचार सभा,हैदराबाद-२००३ |
| ११ | हमारा जवाब | मोहनदास नैमिशराय | श्री.नटराज प्रकाशन,ए-५०७/१२ ,साऊथ गावंडी एक्सटेशन-दिल्ली -११००५३ |
| १२ | समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास | डॉ.अशोक भाटिया | भावना प्रकाशन दिल्ली-११००९१-२००३ |
| १३ | हिंदी दलित कथाकारों की पहली कहानी | सूरजपाल चौहान | अनुभव प्रकाशन –नई दिल्ली-२००४ |
| १४ | दलित चेतना की कहानियां बदलती परिभाषाएं | राकमणी शर्मा | वाणी प्रकाशन-नई दिल्ली-००२ -२००८ |
| १५ | भारतीय दलित साहित्य: परिप्रेक्ष | पुन्नीसिंह, कमला प्रसाद, राजेंद्र शर्मा | वाणी प्रकाशन-नई दिल्ली-००२ -२००३ |
| १६ | हिंदी और मराठी दलित साहित्य एक तुलनात्मक अध्ययन | डॉ.सुरेशमारुतिराव मुळे | नव भारती प्रकाशन-नई दिल्ली-२००७ |
| १७ | दलित साहित्य रचना और | डॉ.पुरषोत्तम सत्यप्रेमी | कामना प्रकाशन- नई दिल्ली-२००२ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | विचार | | |
| १८ | सम्पादित दलित साहित्य | जयप्रकाश कर्दम | |
| १९ | चिंतन की परंपरा और दलित साहित्य | डॉ.शौराज सिंह बेचैन, डॉ.देवेन्द्र चौबे | नवलेखन प्रकाशन,मेनरोड,हजारी बाग़,बिहार- २००१ |
| २० | हैरी कब आएगा | सूरजपाल चौहान | सम्यक प्रकाशन –नई दिल्ली-१९९९ |
| २१ | अंगारा | डॉ.कुसुम मेघवाल | मुलनिवास प्रकाशन-००४-२००६ |
| २२ | साहित्य और सामाजिक क्रांति | डॉ.दयानंद बटोही | विकल्प प्रकाशन-नई दिल्ली-१८-१९९९ |
| २३ | प्रतिशोध- दलित कहानी संचयन | पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी | |
| २४ | समकालीन कहानी की भूमिका | विश्वम्भरनाथ उपाध्याय | |
| २५ | समकालीन कहानी की पहचान | नरेन्द्र मोहन | |
| २६ | प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना | डॉ.बलवंत साधू जाधव | |
| २४ | हिंदी कहानी के सौ वर्ष | वेद प्रकाश अमिताभ | |
| २५ | दलित साहित्य की भूमिका | हरपाल सिंह ‘अरुष’ | जवाहर पुस्तकालय,मथुरा(उ.प्र)२८१००१-२००५ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| २६ | दलित शिखरों के साक्षात्कार | डॉ.यशवंत वीरोदय | आकाश पब्लिशर्स एंड डी-गाजियाबाद -२०१३ |
| २७ | भारतीय संस्कृति में वर्ण-व्यवस्था | डॉ.शांती स्वरूप गुप्ता | साहित्य सहकार दिल्ली-१००३२-२००० |
| २८ | दलित साहित्य के प्रतिमान | डॉ.एन सिंह | वाणी प्रकाशन-नई-दिल्ली-११००२-२०१२ |
| २९ | भारतीय दलित साहित्य | मनोज कुमार आर.पटेल | दर्पण प्रकाशन वल्लभ विद्यानगर(गुजरात)३८८१२०-२००८ |
| ३० | दलित आन्दोलन के विविध पक्ष | डॉ.शत्रुघ्न कुमार | आकाश पी एंड डी-गाजियाबाद-२०११०२-२००४ |
| ३१ | लोकसाहित्य के परिप्रेक्ष में महाराष्ट्र का दलित साहित्य | डॉ.शशिकांत सोनवने 'सावन' | अभय प्रकाशन,कानपुर -२०११ |
| ३२ | दलित साहित्य की वैचारिकी और डॉ.जयप्रकाश कर्दम | शीलबोध | अकादमिक प्रतिभा-दिल्ली-२००७ |
| ३३ | भारत में दलित आन्दोलन एक मूल्यान्कन भाग-१और २ | कन्हैया लाल चंचरीक | सृष्टि बुक डी-दरियागंज नई दिल्ली-११०००२-२००६ |
| ३४ | भारतीय दलित आन्दोलन का इतिहास भाग १ | मोहनदास नैमिशराय | राधाकृष्ण प्रकाशन प्र ली-अंसारी मार्ग,दरियागंज-नई दिल्ली-११०००२-२०१३ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | से ४ | | |
| ३५ | आधुनिक हिंदी कहानी में वर्णित सामाजिक यथार्थ | डॉ.ज्ञान चन्द्र शर्मा | राधा पब्लिकेशन्स न-दिल्ली-११०००२-१९९६ |
| ३६ | हिंदी कहानी का समकालीन परिदृश्य | डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ | जवाहर पुस्तकालय,सदर बाजार,मथुरा(उ.प्र)२८१००१-२००५ |
| ३७ | दलित साहित्य साहित्यिक और सांस्कृतिक निबंध | डॉ.रामप्रसाद मिश्र | आधुनिक प्रकाशन,४ –बी पुरी गली नं७ ,गुरुद्वार मौहल्ला,दिल्ली-११००५३-२००३ |
| ३८ | साहित्य का नया सौन्दर्यशास्त्र | सं० देवेन्द्र चौबे | किताबघर प्रकाशन न-दिल्ली-११०००२-२००६ |
| ३९ | दलित साहित्य के आधार तत्व | हरपाल सिंह ‘अरुष’ | भारतीय पुस्तक परिषद्,नई-दिल्ली-११००९१-२०११ |
| ४० | हिंदी साहित्य में दलित सरोकार | डॉ.धनंजय चौहान | माया प्रकाशन,६ए/५४० आवास विकास,कानपुर-२०८०२१-२०१३ |
| ४१ | दलित विमर्श और हम | डॉ.एम्.फिरोज खान,इकरार अहमद | साहित्य संस्थान,गाज़ियाबाद-२०११०२-२०१० |
| ४२ | दलित विमर्श साहित्य के आईने में | डॉ.जयप्रकाश कर्दम | साहित्य संस्थान,गाज़ियाबाद-२०११०२-२००९ |
| ४३ | दलित दखल | डॉ.श्यौराज सिंह ‘बेचैन’ डॉ.रजत | आकाश प एंड डी,लोनी,गाज़ियाबाद-२००७ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | | रानी 'मीनू' | |
| ४४ | अपने अपने पिंजरे | मोहनदास नैमिशराय | वाणी प्रकाशन,नई-दिल्ली-११०००२ |
| ४५ | दलित अल्पसंख्यक सशक्तिकरण | संपादक-संतोष भारतीय | राजकमल प्रकाशन,नई-दिल्ली-११०००२-२००८ |
| ४६ | नई सदी और दलित | डॉ.सुजाता वर्मा | विकास प्रकाशन,कानपुर-२०८०२७-२०१३ |
| ४७ | दलित सशक्तिकरण | डॉ.नीतू काजल | संजय प्रकाशन,नई-दिल्ली-११०००२-२०१३ |
| ४८ | भारतीय दलित साहित्य:परिप्रेक्ष | संपादक-पुन्नीसिंह, कमला प्रसाद,राजेंद्र शर्मा | वाणी प्रकाशन,नई-दिल्ली-११०००२-२०१२ |
| ४९ | दलित साहित्य में प्रमुख विधाएं | माता प्रसाद | आकाश प एंड डी,गाज़ियाबाद-२००९ |
| ५० | भारत में दलित संघर्ष एवं सामाजिक न्याय | एन.के.सिंह | प्रिज्म बुक्स(इण्डिया) दुकान नं.१२०,घाटगेट रोड,जयपुर-३०२००३-२०१२ |
| ५१ | दलितों के रूपांतरण की प्रक्रिया | नरेंद्र सिंह | राधाकृष्ण प्रकाशन प ली ,२/३८,अंसारी रोड,दरियागंज,नई दिल्ली-११०००२-१९९३ |
| ५२ | समकालीन हिंदी कहानी स्त्री-पुरुष संबंध | सुनत कौर | अभिव्यंजना प्रकाशन दिल्ली-१९९१ |
| ५३ | स्त्रीत्ववादी विमर्श समाज और साहित्य | क्षमा शर्मा | राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-२००२ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| ५४ | समकालीनता और शाश्वतता | रोहिताश्व | विद्या प्रकाशन कानपूर-२००६ |
| ५५ | स्त्री परंपरा और आधुनिकता | राजकिशोर | वाणी प्रकाशन नई-दिल्ली-१९९९ |
| ५६ | कहानी की समाजशास्त्री समीक्षा | रमेश उपाद्याय | नमन प्रकाशन नई-दिल्ली-१९९९ |
| ५७ | नारीवादी विमर्श | राकेश कुमार | आधार प्रकाशन हरियाण-२००१ |
| ५८ | हिंदी कहानी और स्त्री विमर्श | उषा झा | साक्षी प्रकाशन जयपुर |
| ५९ | हिंदी कहानी की विकास प्रक्रिया | आनंद प्रकाश | लोकभारती प्रकाशन इलहाबाद -१९८४ |
| ६० | समकालीन हिंदी कहानियों में नारी के विविध रूप | घनश्यामदास भूतड़ा | अतुल प्रकाशन कानपूर-१९९३ |
| ६१ | आधुनिकता के संदर्भ में हिंदी कहानी | नरेंद्र मोहन | जयश्री प्रकाशन,दिल्ली-१९८२ |

# प्रमुख पत्र-पत्रिकाएँ

| | |
|---|---|
| अब | सासाराम |
| अनभै | मुम्बई |
| अदारा | भोपाल |
| आलोचना | दिल्ली |
| धर्मयुग | मुम्बई |
| भया | दिल्ली |
| वर्तमान साहित्य | अलीगड़ |
| सारिका | दिल्ली |
| हंस | दिल्ली |
| नव-निकष | कानपुर |